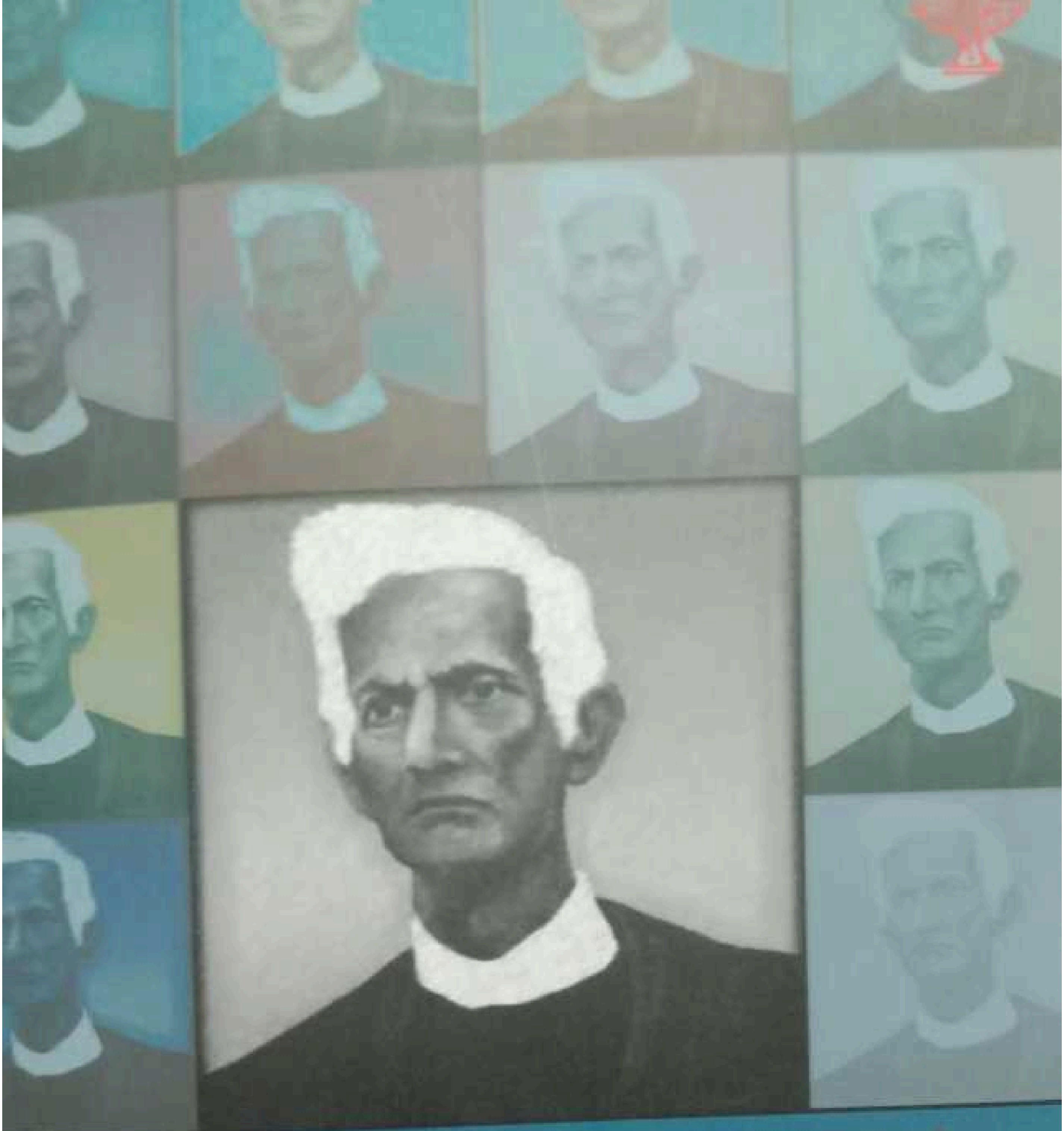

फकीरमोहन सेनापति की कहानियाँ

ओड़िया से हिंदी अनुवाद : अरुण होता

फकीरमोहन सेनापति की कहानियाँ

Fakir Mohan Senapati ki Kahaniyan : Hindi translation of Fakir Mohan Senapati's selected short stories by Arun Hota. Sahitya Akademi, New Delhi (2020), ₹ 215.

Copyright © Sahitya Akademi
Fakir Mohan Senapati (1843-1918) : Author
Arun Hota (1965) : Translator

Genre : Story
Published by Sahitya Akademi

First Edition : 2020
Price : Rs. 215/-

ISBN 978-93-89778-25-0

कॉपीराइट © साहित्य अकादेमी
फकीरमोहन सेनापति (1843-1918) : लेखक
अरुण होता (1965) : अनुवादक

विधा : कहानी
साहित्य अकादेमी द्वारा प्रकाशित

प्रथम संस्करण : 2020
मूल्य : दो सौ पंद्रह रुपये

सर्वाधिकार सुरक्षित। साहित्य अकादेमी की अनुमति के बिना फ़ोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग या किसी अन्य सूचना-भंडारण एवं पुनर्प्राप्ति प्रणाली सहित किसी भी इलेक्ट्रॉनिक या मैकेनिकल माध्यम से इस पुस्तक के किसी भी अंश का पुनरुत्पादन अथवा उपयोग नहीं किया जा सकता।

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय : रवींद्र भवन, 35, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली-110 001
secretary@sahitya-akademi.gov.in | 011-23386626/27/28
विक्रय अनुभाग : 'स्वाति', मंदिर मार्ग, नई दिल्ली-110 001
sales@sahitya-akademi.gov.in | 011-23745297, 23364204
कोलकाता : 4, देवेंद्रलाल खान रोड, कोलकाता-700 025
rs.rok@sahitya-akademi.gov.in | 033-24191683/24191706
चेन्नई : मेन बिल्डिंग, गुना बिल्डिंग्स (द्वितीय तल), 443 (304), अन्नासालइ, तेनामपेट, चेन्नई-600 018
chennaioffice@sahitya-akademi.gov.in | 044-24311741
मुंबई : 172, मुंबई मराठी ग्रंथ संग्रहालय मार्ग, दादर, मुंबई-400 014
rs.rom@sahitya-akademi.gov.in | 022-24135744/24131948
बेंगलूरु : सेंट्रल कॉलेज परिसर, डॉ. बी. आर. आंबेडकर वीथी, बेंगलूरु-560 001
rs.rob@sahitya-akademi.gov.in | 080-22245152/22130870

शब्द संयोजक : हर्ष कंप्यूटर्स, अग्र नगर, प्रेम नगर-3, किराड़ी, दिल्ली-110 086

मुद्रक : स्वास्तिक ऑफ़सेट, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

वेबसाइट : www.sahitya-akademi.gov.in

कथाकार फकीरमोहन सेनापति

फकीरमोहन सेनापति (1843-1918) ओड़िया कथा साहित्य के जनक हैं। उन्होंने कविता, आत्मकथा, कहानी, उपन्यास, अनुवाद आदि विधाओं में लेखन कार्य किया है और इस क्षेत्र में उन्होंने अपूर्व सफलता हासिल की है। लेकिन कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में उन्होंने युग प्रवर्तन किया है। इस अर्थ में फकीरमोहन युगपुरुष हैं। अपनी असाधारण कथा-प्रतिभा के चलते फकीरमोहन कालजयी कथाकार के रूप में ख्यात हैं।

कहा जाता है कि *बोधदायिनी* पत्रिका में फकीरमोहन की 'लछमनिया' शीर्षक कहानी सन् 1868 में प्रकाशित हुई थी। यह कहानी अप्राप्य है। लेकिन इसका विकसित रूप 'छह बीघा ज़मीन' (छ' माण आठ गुंठ) है। यह उपन्यास 1897 में प्रकाशित हुआ यदि 'लछमनिया' को फकीरमोहन की पहली कहानी मानी जाए तो यह न केवल ओड़िया की बल्कि संपूर्ण भारतीय कहानी जगत् की प्रथम कहानी होने का गौरव प्राप्त कर सकती थी।

ध्यान दिया जाना चाहिए कि बाल्यावस्था में घोर उपेक्षा, अभाव तथा कष्ट सहन करने के पश्चात् वे एक मज़दूर, शिक्षक, प्रशासक आदि के रूप में दीर्घ जीवनानुभव हासिल करते हैं। परिपक्व आयु में उनका कथा-संसार निर्मित होता है। फलस्वरूप आमजन तथा जनजीवन के यथार्थ को उकेरने में उन्हें अभूतपूर्व सफलता मिली है। भाषा एवं जाति के कारीगर के रूप में फकीरमोहन अद्वितीय हैं। भाषा आंदोलन के चिरस्मरणीय व्यक्तित्व भी हैं। राधानाथ, गंगाधर मेहेर, मधुसूदन आदि के साथ भाषा एवं जाति की अस्मिता को बचाए रखने का अनथक प्रयास फकीरमोहन ने भी किया है। आम आदमी की जुबाँ में आम आदमी तक पहुँचने का सार्थक प्रयत्न फकीरमोहन के रचना-संसार में स्पष्टतया परिलक्षित होता है।

फकीरमोहन के कथा-साहित्य का रचना-समय 1897 से 1916 तक है। अपने कथा-लेखन से उन्होंने ओड़िया तथा भारतीय कथा-साहित्य को अत्यंत समृद्ध किया है। वे ओड़िया के 'कथा-सम्राट' के रूप में जाने जाते हैं। कथा

की दुनिया में प्रवेश करने के पहले वे ओड़िशा के विभिन्न इलाकों में प्रशासक के रूप में काम कर रहे थे। विभिन्न गढ़जात इलाकों में दायित्व निर्वहन करते समय विभिन्न संप्रदायों और वर्गों के लोगों से उनका प्रत्यक्ष संबंध रहा। मानव-जीवन के तमाम पहलुओं से परिचित होने का अवसर मिला। चूँकि वे ओड़िशा के इतिहास से भलीभाँति परिचित थे, इसलिए विदेशियों तथा विदेश के व्यापारियों के साथ ओड़िया जनजीवन के संपर्क और प्रभाव को अत्यंत गहराई से समझते थे। ओड़िशा के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक जीवन-यथार्थ को प्रस्तुत करने में फकीरमोहन की कोई तुलना नहीं है।

1835 ई. में लॉर्ड मैकाले की नई शिक्षा नीति के चलते अंग्रेज़ी शिक्षा को अधिक महत्त्व मिला। सरकारी नौकरी में अंग्रेज़ी की अनिवार्यता रही। फलस्वरूप ओड़िशा में भी पाश्चात्य शिक्षा के प्रति आग्रह दिखाई पड़ा। देश की प्राचीन परंपरा और कुसंस्कारों के विरोध में नया शिक्षित युवा वर्ग अपनी आवाज़ उठाता है। देश की 'अच्छाई' को भी 'बुराई' के रूप में देखने का नया चलन शुरू हो गया था। झूठी शान-शौकत, दिखावा और मिथ्याडंबर को 'प्रमोट' करने में भी यह वर्ग पीछे नहीं रहा। पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण को जीवन का लक्ष्य माना जाने लगा। बुजुर्गों और गुरुजनों का असम्मान, वेश्या-गमन और मदिरा-सेवन कर अपने को शिक्षित तथा आधुनिक, कहलाने वाली नई पीढ़ी के जीवन-चित्रों को फकीरमोहन ने 'डाकमुंशी', 'पेटेंट मेडिसिन', 'सभ्य ज़मींदार' आदि कहानियों में अंकित किया है।

प्राचीन परंपरा के आदर्शों को तिरोहित करना फकीरमोहन को कदापि स्वीकार न था। लेकिन वे अतीतजीवी भी न थे। नवीनता से उनका कोई विरोध भी न था। जो कुछ भी समाज, जाति एवं देश के हित में था, उन्होंने बिना झिझक के अपनाने का आग्रह किया था। समस्याओं की जड़ तक पहुँचकर, विसंगतियों को उघाड़कर, समस्या के समाधान के लिए प्रयत्नशील फकीरमोहन ने अपनी दूरदर्शिता का सुंदर परिचय दिया है। 'गारुड़ी मंत्र', 'पढ़ी-लिखी बहू', 'प्यारी बहू' आदि कहानियों में कहानीकार की नारी दृष्टि ही नहीं, जीवन-दृष्टि भी परिलक्षित होती है।

फकीरमोहन समन्वयवादी थे। प्राच्य एवं पाश्चात्य परंपराओं की सड़ी-गली मान्यताओं पर व्यंग्य करने के साथ-साथ उनके दुष्परिणामों को उद्घाटित करने में उनकी कोई तुलना नहीं है। समाज में प्रचलित कुप्रथाओं की समाप्ति उनके कथा-जगत का मुख्य उद्देश्य 'माधो महांति का कन्यासोना', 'विरेई विशाल', 'अधर्म वित्त' जैसी कहानियों के माध्यम से कथाकार ने स्वस्थ समाज-निर्माण

के स्वप्न को रूपायित करने का प्रयास किया है।

अनपढ़ व्यक्ति भी समाज का आदर्श बन सकता है। समूह या समाज के हित-साधन हेतु अपने प्राण-उत्सर्ग कर सकता है। ऐसे व्यक्ति की समाज-निर्माण में जो भूमिका होती है वह किसी पढ़े-लिखे व्यक्ति के अवदान से किसी भी अर्थ में कमतर नहीं है। ऐसा व्यक्ति, व्यक्ति मात्र नहीं रह जाता, संस्था के रूप में जाना जाता है। इस दृष्टि से 'विधवा का बेटा अनंता' शीर्षक कहानी का पाठ किया जा सकता है।

स्वस्थ समाज निर्माण में नारी की भूमिका को रेखांकित करने में फकीरमोहन की कथा-दृष्टि का विशेष महत्त्व है। नारी शिक्षित न हुई तो मिथ्या भ्रांति का शिकार बन सकती है। इससे परिवार तथा राष्ट्र का अमंगल होता है, इसलिए सबसे पहले नारी को शिक्षित होना ज़रूरी है। नारी शिक्षा की प्रयोजनीयता पर बल देते हुए फकीरमोहन ने नारी शिक्षा के बारे में फैलाई गई भ्रांतियों पर कुठाराघात किया है, 'रेवती' तथा अन्य कहानियों में कथाकार की यह चिंता साकार हुई है।

उन्नीसवीं शताब्दी में ओड़िशा के नमक उद्योग का ख़ास महत्त्व है। अंग्रेज़ों के षड्यंत्र तथा उनका नमक उद्योग पर एकाधिकार ने ओड़िशा के अर्थशास्त्र को बुरी तरह प्रभावित किया था। सीधे-सादे जनसामान्य की दुर्दशा के चित्रण में कथाकार को अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई है। 'बालासोर का देसी नमक', पुनर्मूषको भव' आदि कहानियों में तत्कालीन जन-जीवन जीवंत हो उठा है। कथाकार की अंतर्दृष्टि में ओड़िशा का सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य कथासूत्र में गुँथा हुआ है। 'कमला प्रसाद खोराप', 'कालिका प्रसाद गोराप' जैसी कहानियों से उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है। नौ-व्यापार तथा उससे संबंधित समस्याएँ अत्यंत प्रामाणिकता के साथ व्यंजित हुई हैं।

धर्म के नाम पर पाखंड फैलाने वाले धर्म के रक्षकों के असली रूप को विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत किया गया है। धर्म के ध्वजाधारी आमजन पर शोषण तथा अत्याचार का तांडव मचाए रखते हैं। भोग-विलास में डूबे हुए कुछ साधु, समाज में तमाम अपकर्मों में डूबे रहते हैं। कथाकार ने तथाकथित धर्म के ठेकेदारों की अच्छी ख़बर ली है। 'मौनी बाबा, मौनी माता', 'धूलिया बाबा' आदि कहानियों से गुज़रने के बाद निस्संदेह कहा जा सकता है कि फकीरमोहन अपने समय और समाज के अंतः तथा बाह्य को भलीभाँति समझते थे। इसलिए कथाकार कुछ हद तक आमजन का प्रवक्ता तो था ही सामंतवादी ताक़तों पर कठोर वज्रपात करने में कोई कोताही नहीं बरतता था।

ओड़िशा के बीसवीं शताब्दी के पहले दो दशकों का मनोज्ञ तथा प्रामाणिक चित्र इन कहानियों में साकार हो उठा है। पाठकों को विस्मित करने वाली इन कहानियों में काल, कला और संवेदना का जो असाधारण समन्वय मिलता है, वह तत्कालीन भारतीय साहित्य में दुर्लभ है। साहित्य अकादेमी की ओर से फकीरमोहन सेनापति की कहानियों के अनुवाद के प्रकाशन से भारतीय साहित्य की संकल्पना को अधिक बल मिलेगा। एतदर्थ साहित्य अकादेमी को ढेर सारी बधाइयाँ।

–अरुण होता

अनुक्रम

कथाकार फकीरमोहन सेनापति 5

रेवती 11
कुल कुंतला 21
मौना-मौनी 23
बालेश्वरी राहजनी (सत्य घटना) 29
बालेश्वर का देसी नमक (सत्य घटना) 38
पुनर्मूषकोभव 45
डाक-मुंशी 62
धूलिया बाबा 67
कमला प्रसाद खोराप 74
प्यारी बहू 82
विधवा का बेटा अनंता 92
कालिका प्रसाद गोराप 101
पेटेंट मेडिसिन 109
वीरेई विशाल 118
सभ्य ज़मींदार 131
बगुला बगुली 143
नाना और नाती की कथा (सत्य घटना पर आधारित) 154
पढ़ी-लिखी बहू 158
अधर्म वित्त 171
माधो महांति का कन्यासोना 189
गारुड़ी मंत्र 210

परिशिष्ट : कहानियों का पत्रिकाओं में प्रकाशन 219

1.
रेवती

'अरी रेवती अरी रेवी अरी मुँहझौंसी, अरी करमजली'

कटक ज़िले के हरिहरपुर परगना में एक देहाती गाँव, नाम है पाटपुर। गाँव के नुक्कड़ पर एक घर है। सामने और पिछवाड़े चार कमरे, आँगन की दीवार पर बनी छपरी में ढेंकी। बीच आँगन में कुआँ। सामने की ओर बाहर का दरवाज़ा, पीछे पिछवाड़े के लिए दरवाज़ा। बाहर के ओसारे में और बैठकख़ाने में बाहर के लोगों का उठना-बैठना होता है। प्रजाजन, लगान देने के लिए यहीं आकर बैठते हैं। श्यामबंधु महांति ज़मींदार की ओर से गाँव के पटवारी हैं। महीने का वेतन दो रुपये, वेतन के सिवाय वसूली ठीक-ठाक हो गई तो इधर-उधर से भी दो पैसे हाथ लग जाते हैं। कुल मिलाकर हर महीने चार रुपये से कुछ कम नहीं। किसी तरह गृहस्थी चल जाती है। किसी तरह क्यों? भलीभाँति ही कहना चाहिए। यह नहीं हुआ, घर में अमुक चीज़ नहीं है, ऐसी शिकायतें घर में किसी के मुँह से सुनाई नहीं पड़तीं। घर के पिछवाड़े साग-सब्जियों के अलावा सहिजन के दो पेड़ हैं। हर दूसरे साल ब्याने वाली दो गाय बँधी होती हैं। तनिक दूध, थोड़ा-सा छाछ हमेशा मटकी में बचा रहता है। बूढ़ी माँ गोबर में धान की भूसी मिलाकर उपले थाप देती है। लकड़ी कम ख़रीदना पड़ता है, अखरता नहीं। ज़मींदार ने साढ़े तीन एकड़ ज़मीन खेती के लिए दी है। धन न बचता है न कम पड़ता है। श्यामबंधु बहुत ही सीधा-सादा आदमी हैं। प्रजा उसकी ख़ूब ख़ातिर करती और पसंद करती है। दो मीठे बोल के साथ द्वार-द्वार घूमकर लगान वसूल करते हैं। किसी पर ज़ोर-जुल्म करके एक पैसा भी नहीं लेते। प्रजाजन लगान देकर पावती नहीं माँगते हैं। लेकिन, वे चार अंगुल वाले ताड़ के पत्ते में पावती लिखकर खुद ही उनके छप्पर में ठूँस आते। ज़मींदार का प्यादा आता भी तो उसे गाँव में जाने न देते। श्यामबंधु के घर में खाने

वाले चार लोगों का कुटुंब है। पति-पत्नी, बूढ़ी माँ और दस साल की बिटिया। रेवती है नाम उसका। शाम को श्यामबंधु बरामदे में बैठकर 'कृपासिंधु बदन' गाते। अन्य भजन भी गाते हैं। कभी-कभार लकड़ी की दीवट पर दीया रखकर भागवत की कथा बाँचते, रेवती पास बैठकर सुनती। अब तमाम भजन उसे मुँहज़बानी याद हैं। उसके भोले चेहरे पर भजन ख़ूब फबते हैं। शाम को पिता के पास बैठकर भजन गाती है तो गाँव का कोई-न-कोई आकर सुनता है। रेवती ने अपने पिता से एक भजन सीखा था, जब भी उसे गाती श्यामबंधु ख़ुश हो जाते। रोज़ बेटी को गाने के लिए कहते, रेवती गाया करती–

किससे करूँ गुहार?
तुम न निहारो नाथ तो यह ग़रीब निराधार।
करो या न करो त्राण, चरणों में निछावर प्राण
हृदय में नाम है तुम्हारा
तुम बिना हे हरि सूना है त्रिपुर
शीतल करो जीवन, प्रेमामृत दान कर।

दो साल पहले स्कूल के डिप्टी इंस्पेक्टर अपनी देहात की गश्त के दौरान एक रात पाटपुर में ठहर गए थे। गाँव के चार-पाँच प्रमुख व्यक्तियों के अनुरोध पर उन्होंने ओड़िशा विभाग के इंस्पेक्टर के पास रिपोर्ट भेजकर एक अपर प्राइमरी स्कूल खुलवा दिया। शिक्षक का वेतन महीने में चार रुपये। ये चार रुपये सरकार देती है। इसके अलावा सभी बच्चे माहवार एक-एक आना देते हैं। शिक्षक है कटक नॉर्मल स्कूल के शिक्षक-विभाग से उत्तीर्ण। नाम है वासुदेव। नाम जैसा वासुदेव, वह है भी वैसा। लड़के का भीतर-बाहर सब सुंदर। सिर उठाकर किसी को देखता तक नहीं। उम्र बीस की, अंदाज़न। बेदाग़ चेहरा। बचपन में मिरगी की बीमारी हुई थी। उसकी माँ ने बोतल का मुँह तपाकर उसके माथे पर दाग़ दिया था। वह निशान आज भी है। बल्कि वह निशान उसकी शोभा बढ़ा रहा है। वासुदेव जाति से कायस्थ है, श्यामबंधु भी कायस्थ। वासुदेव बाल्यावस्था से ही मातृहरा है। ननिहाल में पला-बढ़ा है। कभी तीज-त्योहारों में घर में मीठे-पकवान बनते तो श्यामबंधु पाठशाला में जाकर बोल आते, "वासू बेटे, शाम को ज़रा हमारे घर आना, तुम्हारी मौसी ने बुलाया है।" इस तरह आने-जाने से दोनों में लगाव हो गया है। रेवती की माँ वासू को देख कहती, "अहा मातृहरा बच्चा, क्या खाता-पीता है, भला कौन उसकी देख-रेख करता है?" वासू रोज़ शाम को श्यामबंधु के पास घंटा भर बैठा करता। दूर से वासू को आते हुए देख रेवती चिल्लाते हुए बापू से कहती, "वासू भैया आ

गए, वासू भैया आ गए।" रेवती रोज़ शाम को वासू के पास बैठकर पुराने भजन सुनाती। वासू को वे गीत कुछ नए-नए लगते। एक दिन इधर-उधर की बातचीत में श्यामबंधु ने सुना कि कटक में लड़कियों का एक स्कूल है। उसमें केवल लड़कियाँ पढ़ती हैं। सिलाई-कढ़ाई भी सीखती हैं। श्यामबंधु की भी इच्छा हुई कि रेवती को पढ़ाएँ। उन्होंने अपने मन की बात वासुदेव से कही। वासू श्यामबंधु को पितृवत् मानता था। उसने कहा, "जी मैं भी यह बात कहना चाह रहा था।" दोनों की सलाह से रेवती को पढ़ाने की बात तय हुई। रेवती पास बैठकर सुन रही थी, दो ही कुलाँचों में घर के अंदर पहुँचकर उसने माँ और दादी से कहा, "मैं पढ़ूँगी, मैं पढ़ूँगी।" माँ ने कहा, "ठीक है, ठीक है, पढ़ेगी।" दादी ने कहा, "पढ़ाई क्या है री, औरत की जात और पढ़ाई? चौका-बरतन सीख, पीठा-पकवान बनाना सीख, चौका पूरना सीख, दही-मिठाई बनाना सीख, पढ़ाई क्या होती है?"

रात को श्यामबंधु बरामदे में आम की लकड़ी के पीढ़े पर बैठकर खाना खा रहे हैं। रेवती भी साथ बैठ खाना खा रही है। सामने बूढ़ी बैठकर आदेश फरमा रही है—थोड़ा-सा भात ले आओ, ज़रा-सी दाल दे जाओ, थोड़ा-सा नमक तो दे। बात ही बात में बूढ़ी ने पूछा, "क्यों रे श्याम, रेवी पढ़ेगी? पढ़ाई क्या है रे, तिरिया जात की बेटी के लिए पढ़ाई कैसी?" श्यामबंधु ने कहा, "ठीक है, कहती है तो पढ़ ले। झंकड़ पटनायक के परिवार की लड़कियाँ तो भागवत बाँच लेती हैं, 'वैदेहीश विलास' के छंद सुना लेती हैं।" रेवती ने काफ़ी नाराज़गी से दादी को गाली बकते हुए कहा, "चल हट, मरियल बुढ़िया!" फिर वह ज़िद करते हुए बापू से बोली, "ना बापू, बापू, मैं पढ़ूँगी।" "हाँ, हाँ, तू पढ़ेगी।" उस दिन बात इतनी-सी हुई।

अगले दिन शाम को वासुदेव ने सीतानाथ बाबू की 'पहला पाठ' किताब लाकर रेवती को दी। वह काफ़ी खुश होकर बापू के पास बैठ किताब के पहले पन्ने से लेकर आख़िरी पन्ने तक पलट कर देखती रही। उसमें हाथी, घोड़ा, गाय आदि पशुओं के चित्र देखकर बड़ी खुश हो गई। राजा-महाराज हाथी-घोड़े से खुश होते हैं, कुछ लोग हाथी-घोड़े पर सवार होकर खुश होते हैं, अपनी रेवती तस्वीर देखकर प्रसन्न है। रेवी ने भागते हुए जाकर माँ को किताब की तस्वीरें दिखाईं, फिर दादी को। दादी ने थोड़ा झुँझलाते हुए कहा, "हाँ, ठीक है, चल हट!" रेवी ने भी उसे 'चल हट' सुना दी और वह लौट आई।

आज शुभ दिन है। श्री पंचमी। रेवती सुबह-सुबह नहा-धोकर, नया कपड़ा पहनकर घर के अंदर-बाहर हो रही है। वासू भैया आएँगे तो किताब पढ़ा देंगे।

बूढ़ी के डर से विद्यारंभ का कोई आयोजन नहीं हुआ है। पहली पहर के बाद वासू ने आकर पढ़ाया, "स्वर-अ, स्वर-आ, ह्रस्व-इ, दीर्घ-ई, ह्रस्व-उ, दीर्घ-ऊ आदि। रोज़ पढ़ाई जारी रही। रोज़ शाम को वासू आता और पढ़ा देता। दो ही साल में रेवती बहुत कुछ पढ़ गई। अब मधु राव की 'छंदमाला' को वह फर्राटे से पढ़ लेती है।

एक दिन रात को श्यामबंधु खाना खा रहे थे तो माँ-बेटे की बातचीत हुई। शायद, इसके पहले कोई बात छिड़ी थी। आज उस बात का उपसंहार है।

श्याम बंधु–"क्यों माँ, ठीक रहेगा कि नहीं?"

बूढ़ी–"हाँ, ठीक तो होगा, जाति-पाँति के बारे में पता लगाया है न?"

श्यामबंधु–"और आज तक मैं कर क्या रहा था? अच्छा कायस्थ है, ग़रीब ख़ानदान में जन्मा तो क्या, जाति अच्छी है।"

बूढ़ी–"धन-दौलत की बात न सोचो जाति की बात पहले पूछो। घर में रहेगा न?"

श्यामबंधु–"घर में न रहकर जाएगा कहाँ? कुछ भी हो, मामा-मामी तो माँ-बाप नहीं हो सकते।"

पास ही रेवती बैठकर खाना खा रही थी। इस बातचीत का मतलब उसने क्या सोचा सो वही जाने, लेकिन तब से उसके हाव-भाव कुछ अलग क़िस्म के हो गए। उसे बापू के सामने वासू भाई पढ़ाएँ तो शर्म-सी आती है। वजह-बेवजह हमेशा हँसी आती है। सिर झुकाए दोनों होंठ दबाए, मुस्कान छिपाए रखती है। आजकल वासू पढ़ा देता है तो कभी चुपचाप पढ़ लेती है, कभी सिर्फ़ हाँ-हूँ करती है। पढ़ाई पूरी हो जाए तो होंठ दबाकर मुस्कुराती हुई दूसरे कमरे में घुस जाती है। हर रोज़ शाम को द्वार के पास किवाड़ के सहारे खड़ी किसी का इंतज़ार करती है। वासू के आते ही घर में घुस जाती है। पाँच बार बुलाए जाने पर भी नहीं निकलती। आजकल रेवती घर के बाहर निकलती है तो बूढ़ी ख़फ़ा हो जाती है।

देखते ही देखते पंचमी से पंचमी तक दो साल बीत चुके हैं। विधाता का विधान, सब दिन जाय न एक समान। फागुन का दिन, कहीं कुछ न था, अचानक कहीं से हैजा आ धमका। सुबह गाँव में सुना गया कि पटवारी श्यामबंधु महांति को हैजा-बुढ़िया ने अपने क़ब्ज़े में ले लिया है। देहात में हैजा फैलने से टाट-किवाड़ बंद हो जाते हैं। हैजा-बुढ़िया मानो बग़ल में एक टोकरी दबाए सड़क से आदमी बीन रही हो। लोगों का ऐसा विश्वास है। कोई दरवाज़े तक भी नहीं आता। घर में बस दो औरतें भला क्या कर सकती थीं? बच्ची

रेवती हाँक लगाती घर के अंदर-बाहर आ-जा रही है। वासुदेव ने सुना तो तत्काल दौड़ लगाई। न कोई डर, न भय और न ही अपने शरीर की परवाह है उसे। वह श्यामबंधु के पैताने बैठकर उसके पैरों पर हाथ फेर रहा है। उसके मुँह में थोड़ा-थोड़ा पानी डाल रहा है। दिन के तीसरे पहर में श्यामबंधु ने वासू के चेहरे की ओर देखकर हकलाते हुए कहा, "वासूँ-एँ-वँ आँ-रहा।" वासू दहाड़ मारते हुए रो पड़ा। घर में कोहराम मच गया। रेवती ज़मीन पर लोटने लगी। गाँव के लोगों ने सुनकर कहा–लगता है गुज़र गया। देखो-देखो–देख लो। शाम तक सब तमाम हो गया। क्या करें वासुदेव कल का बच्चा है और दो औरतें। गाँव का धोबी बन्ना सेठी जानकार आदमी है। उसने अपने हाथों पचास-साठ को पार लगाया है। जाना तो है ही चाहे आज हो या कल। एकाध कपड़े मिलने की भी उम्मीद है। कमर पर एक अंगोछा कस कर, कंधे पर कुल्हाड़ी लादे वह हाज़िर हो गया। गाँव भर में एक ही घर था कायस्थों का। सास, बहू और वासुदेव तीनों ने मिलकर क्रिया-कर्म सँभाल लिया। उस समय की बातें लिखने में हम निहायत असमर्थ हैं। श्मशान से लौटते समय पौ फटने वाली थी। घर में घुसते ही रेवती की माँ के पेट में मरोड़ हुई। दिशा-फरागत के लिए निकली। देखते-देखते दोपहर तक गाँव में हल्ला मच गया कि रेवती की माँ नहीं रही।

वक़्त गुज़रता है, किसी का इंतज़ार नहीं करता। किसी की पालकी पर रेशम की छतरी तो किसी की बेड़ी पर कोड़े। फिर भी वक़्त गुज़र जाता है सबका, गुज़र जाएँगे सबके। देखते-देखते तीन महीने बीत गए। श्यामबंधु की दोनों गायों को ख़ज़ाने में पैसा जमा न करने के चलते ज़मींदार के कारिंदे ने बाँध लिया। हमें पता है कि ज़मींदार के रुपयों को श्यामबंधु सदा शिवजी का प्रसाद जैसा मानता था। एक पैसा वसूल होता तो उसे जब तक ज़मींदार के खज़ाने में ज़मा न करता तब तक वह सो नहीं पाता था। पता नहीं उसके पास रुपये थे या नहीं, लेकिन दोनों गायें बहुत दुधारू थीं, इसकी जानकारी ज़मींदार को थी। इसके अलावा खेती के लिए ज़मींदार ने जो तीन एकड़ ज़मीन दी थी, वह भी छीन ली। हलवाहा अब रहेगा भी क्यों? फागुन की पूर्णिमा के दिन वह भी चला गया। दोनों बैल साढ़े सत्रह रुपये में बेच दिए गए। पति-पत्नी के क्रिया-कर्म के बाद जो कुछ बचा था, उससे खींच-तान कर एक महीना कटा। आज लोटा तो कल बरतन बेचकर या रेहन रखकर एक और महीना गुज़रा। वासू दोनों जून घर आता। रात के पहले पहर तक रुकता। दादी और पोती सोने जातीं, तब वह अपने डेरे में लौटता। वासू कुछ रुपये-पैसे

देता तो भी तो दादी या पोती नहीं लेतीं। ज़बरदस्ती कुछ छोड़ जाता तो वह आले में पड़ा रहता। यह जानकर वासू फिर कुछ नहीं देता। बूढ़ी से एक-दो पैसे लेकर रसद ला देता है। दो पैसे की रसद से आठ-दस दिन निकल जाते। घर का छप्पर उड़ चुका है, छाजन ज़रूरी है, वासू ने दो रुपये का पुआल ख़रीद कर पिछवाड़े रख दिया है। पंचक होने के कारण छप्पर का काम नहीं हो पा रहा है।

आजकल बूढ़ी रात-दिन नहीं रोती। सिर्फ़ शाम को रोती है। रेवती सिसकती हुई ज़मीन पर गिर जाती है। वहीं रात गुज़ार देती। बूढ़ी को अब ठीक तरह से दिखाई नहीं देता। बावली-सी हो गई है। इधर उसने रोना कम करके गाली देना शुरू कर दिया है। उसने मन-ही-मन तय कर लिया है कि इस तमाम दुख और बुरी हालत की असली गुनाहगार रेवती है। रेवती ने पढ़ाई शुरू की, इसलिए बेटा गुज़र गया, बहू भगवान को प्यारी हो गई, हलवाहा छोड़ चला, बैल बिक गए, ज़मींदार के कारिंदे गायें बाँधकर ले गए। रेवती कुलच्छनी है, बेढंगी और अभागिन है। बूढ़ी के सही ढंग से देख न पाने की वजह भी रेवती की पढ़ाई है। बूढ़ी गाली बकती है तो रेवती की आँखों से दो धाराएँ बह निकलतीं। वह डर के मारे बूढ़ी के सामने खड़ी नहीं हो पाती। पिछवाड़े ड्योढ़ी के पास या घर के किसी कोने में मुँह ढाँपकर काठ की भाँति पड़ी रहती। वासू भी गुनहगार है क्योंकि रेवती कहाँ पढ़ती थी, उसी ने आकर तो पढ़ाया। पर बूढ़ी वासू से कुछ बोल नहीं पाती। वासू न हो तो पल भर के लिए चलना मुश्किल। फिर, ज़मींदार वाला झमेला अभी ख़त्म नहीं हुआ। ज़मींदार के भेजे हुए लोग आकर आज इसका तो कल उसका हिसाब माँगने लगते हैं। वासू न हुआ तो ताड़ पत्तों की गड्डी से हिसाब कौन बताएगा? फिर भी, वासू जब न होता तब बातचीत के सिलसिले में कभी-कभी वह अपनी बात कह देती। रेवती अब नादान न रही। उसकी आवाज़ अब सुनाई नहीं पड़ती। माँ-बापू के गुज़रने के बाद उसे किसी ने ड्योढ़ी के बाहर नहीं देखा। कुछ दिनों तक वह दहाड़ मारते हुए रोती रही। अब ऊँची आवाज़ में नहीं रोती। लेकिन दिन-रात आँखों से आँसू झरते रहते हैं। उसकी नन्ही-सी जान, उससे भी छोटा उसका मन बिलकुल टूट गया है। अब उसके लिए दिन-रात एक समान है। सूरज में उजाला नहीं, रात में अँधेरा नहीं, सारा संसार सूना है। बस, माँ और बापू की मूरतें हृदय में समाई रहती हैं। उसकी आँखों में बस दो नज़ारे दिखाई पड़ते

है–माँ यहाँ बैठी हुई है, बापू जा रहे हैं। बापू और माँ गुज़र चुके हैं, अब न लौटेंगे। यह यकीन न हो रहा है उसे। पेट में भूख नहीं, आँखों में नींद नहीं। दिन-रात माँ-बापू की यादों में डूबी रहती है। दादी के डर से खाने बैठती है। अक्सर ज़मीन पर पड़ी रहती है। शरीर में हड्डियों का ढाँचा भर रह गया है। वासुदेव घर आता है तो वह खड़ी हो जाती है। बड़ी-बड़ी आँखों से उसे टुकुर-टुकुर ताकती है। वासू उसे देख ले तो हल्की-सी साँस के साथ सिर झुका लेती है। वासू जब तक पास होता है उसे निहारती रहती है। तब उसे कुछ और नहीं सूझता। आँखों में वासुदेव, ख़यालों में वासुदेव, पूरा हृदय वासुदेवमय। श्यामबंधु के गुज़रे अब उँगलियों की गिनती में पाँच महीने पूरे हो गए। जेठ का दिन था। ठीक दोपहर को वासू ने दरवाज़े पर आवाज़ लगाई। वह कभी इस वक़्त नहीं आता, बूढ़ी ने छोटी-सी कराह भरते हुए चलकर दरवाज़ा खोला। वासू बोला, "दादी माँ, (वासू हमेशा बूढ़ी को 'दादी माँ' कहकर बुलाता है) डिप्टी इंस्पेक्टर हरिहरपुर थाने में पाठशाला के बच्चों से सवाल पूछेंगे। सभी स्कूलों के बच्चों को वहाँ पहुँचना है। मेरे पास भी चिट्ठी आई है। मैं बच्चों को साथ लेकर कल सुबह जा रहा हूँ। पाँच दिन लगेंगे।" रेवती दरवाज़े की ओट में खड़ी थी। धपाक के साथ नीचे बैठ गई। ग़नीमत है कि वह दरवाज़ा पकड़े हुए थे अन्यथा गिर जाती। वासू पाँच दिनों के लिए चावल, नून-तेल, साग-सब्ज़ी ख़रीदकर लेता आया। आँगन में रख, बूढ़ी को प्रणाम करके शनिवार की शाम ढलते निकल पड़ा। बूढ़ी ने कहा, "बेटा, धूप से बचना, सेहत का ख़्याल रखना। वक़्त पर दो कौर खा लेना।" इतना कहकर उसने एक लंबी साँस ली। रेवती अपलक वासू को निहार रही है। आज उसकी निगाह कुछ ख़ास है। पहले वासू देख लेता तो वह सिर झुका लेती थी, आज वैसा कुछ न था। वह एकटक वासू को निहार रही है। आज वासू की निगाह भी कुछ और थी। इसके पहले वासू की बड़ी इच्छा होती थी कि वह जी भरकर देख ले, पर देख न पाता था। आज आँखें चार हुई हैं। निगाह हटाने की सुध ही नहीं है किसी को। वासू जा चुका है। दिन ढल चुका था। घर के अंदर और बाहर अँधेरा छा गया था। रेवती पूर्ववत् निहारे जा रही थी। बूढ़ी की हाँक से उसे होश आया। घर के अंदर और बाहर बस अँधेरा ही अँधेरा छा गया था।

रेवती बैठे-बैठे दिन गिन रही है। आज छठा दिन है। माँ-बापू के गुज़रने के बाद दरवाज़ा भी न लाँघी थी। आज सुबह से दरवाज़े के बाहर दो बार झाँक आई है। दिन के पहले पहर के बाद हरिहरपुर से स्कूल के बच्चे लौटते ही गाँववालों में चर्चा ज़ोरों पर थी कि पंडित जी लौट रहे थे और गोपालपुर के

बरगद तले उन्हें हैजा ने दबोच लिया। चार बार दिशा फरागत और आधी रात के बाद चल बसे। गाँववालों में हाय-हाय मची। लड़के-लड़कियाँ, माताएँ-बहनें सब चीख़-चीख़कर रोने लगे। किसी ने कहा, "कैसा रूप था", तो किसी ने कहा, "कितना शांत था।" कोई बोला, "रास्ते में चलते हुए मक्खी को भी मारने की बात कभी नहीं सोचता था।"

सुना रेवती ने और सुना बूढ़ी ने भी। रो-रोकर बूढ़ी का गला बैठ गया। आगे रो न सकी। अंत मे बोली, "आह बेटा, परदेश में आकर अपनी बुद्धि से जान गँवा बैठा।" यानी, यही तुम्हारी मूर्खता थी जो तुमने रेवती को पाठ पढ़ाया। इसलिए मौत आई। वरना कभी न मरता। जब से रेवती ने सुना तब से घर में शांत पड़ी है। कोई शोर-शराबा नहीं। पहला दिन बीता। अगले दिन सुबह रेवती को अपने पास न पाकर बूढ़ी चिल्लाती है, "अरी रेवती, अरी रेवी, अरी कलमुँही, अरी कुलच्छनी!" बूढ़ी बावली-सी हो चुकी है। रोती-कलपती नहीं, लेकिन केवल गुस्से में भरकर दिन-रात रेवती को कोसती रहती है। पास-पड़ोस तथा राह चलते लोग अक्सर सुनते हैं 'अरी रेवती, अरी रेवी, अरी मुँहझौंसी, अरी करमजली'। बूढ़ी को दिखाई नहीं देता। टटोलते-टोहते रेवती के पास पहुँची। हाँक लगाई। जवाब न मिला तो उसके बदन पर हाथ फेरने लगी। देखा कि तेज़ बुख़ार है। बदन आग की तरह तप रहा है। होश नहीं है। देर तक बैठे-बैठे बूढ़ी कुछ सोचती रही। क्या करे, किसे बुलाए; उसने मन-ही-मन सारा संसार खोज लिया, कोई न मिला साथ देने वाला। कुछ समझ न पाई तो ख़फ़ा होकर बोली, "जैसी करनी, वैसी भरनी।" यानी "तूने पढ़ाई की, इसलिए बुख़ार हुआ। मैं क्या करूँ!"

पहला दिन बीता, दूसरा दिन गुज़रा, तीसरा दिन गया, चौथा दिन, पाँचवाँ दिन भी गुज़र गया। रेवती ज़मीन से चिपक कर पड़ी हुई है। आँखें मुँदी हुई हैं। बुलाने से कोई जवाब नहीं, चूँ-चपड़ तक नहीं। आज छठा दिन है। सुबह दो-चार बार रेवती की आवाज़ सुनाई पड़ी थी। उसकी आवाज़ सुन बूढ़ी उसके पास पहुँची भी। बदन पर हाथ फेरकर देखा कि हाथ-पाँव ठंडे हैं। बुलाने पर हूँ-हाँ का जवाब। गुस्से में भरकर ताक रही है। बिना कुछ पूछे काफ़ी बातें कर रही है। कोई वैद्य देखता तो 'तृष्णा दाहः प्रलापश्च' जैसे श्लोक पाठ कर कहता 'सन्निपातस्य लक्षणं'। बूढ़ी को थोड़ा चैन मिला कि बदन अब तप न रहा था। उसकी बोलती जो बंद हो गई थी, अब ज़ुबान खुल रही है। आँखें मुँदी हुई थीं, अब खुली हुई हैं। पीने के लिए पानी माँग रही है। पिछले छह दिनों से मुँह में कुछ न गया है, थोड़ा कुछ खा लेगी तो चंगी हो जाएगी। तू

लेटी रह, मैं थोड़ा-सा कुछ पकाकर लाती हूँ, बूढ़ी ऐसा कहकर निकल आई। पथ्य में क्या पकाए? घर में टोकरी, खँचिया, हाँडी, मटका सब छान मारती है, मुट्ठी भर चावल न मिला। एक उसाँस भरकर पल भर के लिए बैठ गई। वासू ने पाँच दिनों के लिए दाल-चावल ख़रीद कर रख दिया था। उतने में दस दिन कैसे निकल गए, बूढ़ी की दृष्टि शक्ति होती तो समझ गई होती। बैठकर विचारने से उपाय सूझता है। घर में बरतन भी न बचा। एक फूटा लोटा हाथ लगा। उसे उठाकर हरि साहू की दुकान की तरफ़ चल पड़ी। हरि साहू का घर गाँव के बीचो-बीच है। उसकी नियमित दुकान न थी। वह चावल, दाल, नमक, तेल रखा करता है। किसी दिन कोई परदेशी आ पहुँचा तो ख़रीद लेता है। कभी गाँववालों को कुछ चाहिए होता तो ख़रीद लेते। बूढ़ी लोटा लिये हरि साहू की दुकान पहुँचती है। बूढ़ी के हाथ में लोटा देखकर हरि साहू को मतलब समझ में आ गया। बूढ़ी ने अपना अभिप्राय बताया तो साहू ने हाथ में लोटा लेकर उसे ध्यानपूर्वक देखा। फिर बोला, "मेरे पास चावल नहीं है और इस फूटे लोटे के बदले चावल कौन देगा?" यह बात नहीं है कि हरि के घर में चावल न था। देना भी चाहता था। लेकिन, सस्ते में सौदा पटाना था। चावल न होने की बात सुनकर बूढ़ी के सिर पर गाज गिरी, क्या करे, बच्ची बुख़ार से उठी है। उसके मुँह में क्या देगी? घड़ी भर बैठी रही। शाम ढलने को है। चलूँ, बच्ची क्या कर रही है, देखूँ। लोटा लेकर उठने लगी तो हरि बोला, "लाओ, लोटा दो, देखूँ घर में क्या है?" हरि ने लोटा के बदले चार सेर चावल, आधा सेर दाल और थोड़ा-सा नमक दिया। बूढ़ी चार-छह जगहों पर बैठते हुए घर आ पहुँची। अब तक बूढ़ी ने कुल्ला तक न किया था। तन और मन की पीड़ा की क्या कहें? घर पहुँचते ही रेवती को पुकारती है। उसका विश्वास था कि रेवती स्वस्थ हो गई होगी। पानी भर कर ला देगी। वह भात पकाएगी। रेवती ने कोई जवाब न दिया तो बहुत ख़फ़ा होकर हाँक लगाई, "अरी रेवती, अरी रेवी, अरी मुँहझौंसी, अरी करमजली"! जवाब नहीं मिला।

इधर रेवती का सन्निपात रोग धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है। भयानक पीड़ा, बदन जल रहा है, जीभ सूख चली है। भयंकर प्यास, मानो जीभ अंदर खिंचती चली जा रही है। ठंडी जगह की ओर मन खिंचा जा रहा है। पूरे घर में रेंगते-लुढ़कते बाहर पहुँची। फिर भी अच्छा न लगा। पिछवाड़े के दरवाज़े के पास जाकर बरामदे में बैठी। दिन ढलने को है। हवा ख़ूब चल रही है। दीवार से टेक लगाकर बैठ गई। पिछवाड़े के चारों ओर नज़र दौड़ाई। बापू ने यहीं पिछले साल केले का गाछ लगाया था। फूलों का गुच्छा निकल आया है। दो

साल पहले माँ ने अमरूद का पेड़ लगाया था। रेवती ने भागते हुए कुएँ से एक लोटा पानी भरकर डाला था। वह पेड़ अब कितना बड़ा हो चुका है। फूल लगे हैं। उस पेड़ को देखकर माँ की याद आ गई। बुद्धि स्थिर नहीं, मन चंचल है। कोई बात तरतीब से याद नहीं आ रही। लेकिन माँ की आनंदमयी मूर्ति मन में समाई हुई है। शाम ढल चुकी है। पेड़ के नीचे और डालियों की ओट से अँधेरा निकलकर पूरे पिछवाड़े में फैल चुका है। अब कुछ नज़र नहीं आता। आसमान की ओर ताकने लगी। प्रथम पहर का तारा चमचमाती रोशनी फैला रहा है। रेवती उसे अपलक निहारती है। आँखों की पलकें झपकती नहीं। तारे का आकार धीरे-धीरे बढ़ता गया। एक चक्र की भाँति उसका आकार बन चुका है। और बढ़ने लगा, क्रमशः बढ़ता गया, क्रमशः उज्ज्वल होता गया। अहा, यह किसकी मूर्ति है तारे के अंदर? शांतिप्रदायिनी, प्रेममयी, आनंदमयी माँ की अभय मूर्ति प्रेमपूर्वक गोद में लेने के लिए बुला रही है। माँ ने दोनों हाथ किरणों में बढ़ा दिए। दोनों किरणें आँखों से होते हुए हृदय में प्रवेश कर गई। उस अँधेरे में कोई दूसरी आवाज़ नहीं, साँसों की धड़कनें सुनाई पड़ रही थीं। वे धड़कनें क्रमशः तेज़ होती गईं। ख़ूब लंबी-लंबी साँसें। अंत में बस दो बार माँ-माँ की हल्की-सी आवाज़ सुनाई पड़ी। पूरा पिछवाड़ा नीरव, निस्तब्ध था।

इधर बूढ़ी रेंगते-सरकते रेवती के सोने की जगह टटोलती है। कुछ न मिला उसे। पूरे घर में, बाहर आँगन में, ढेंकुली के नीचे, उसके पीछे, कहीं न मिली रेवती। उसने फिर सोचा बुख़ार छूट गया है, पिछवाड़े टहल रही होगी। वहीं आकर पुकारती है, "अरी रेवती, अरी रेवी! अरी मुँहझौंसी, अरी करमजली।"

पीछेवाले दरवाज़े के पास गई। टटोलते हुए बरामदे में भी पहुँची। बरामदा ज़मीन से दो हाथ ऊँचाई पर बना था। हाथ भर चौड़ा था।

आह, तू यहाँ बैठी हुई है। बदन पर हाथ रखते ही बूढ़ी चौंक उठी। फिर एक बार भलीभाँति सिर से पैर तक हाथ फेरती है। उसकी नाक से सामने हाथ रखते ही ख़ूब ज़ोर से चीख़ उठी। नीचे लुढ़ककर गिरने की आवाज़ आई।

इसके बाद श्यामबंधु महांति के परिवार के किसी प्राणी को संसार में कोई और देख न सका। पड़ोसियों ने रात के प्रथम प्रहर में आख़िरी आवाज़ सुनी थी।

'अरी रेवती, अरी रेवी, अरी मुँहझौंसी, अरी करमजली'!

2.

कुल कुंतला

दिनभर सूर्यदेव के दर्शन न मिले। पिछली रात के अंतिम प्रहर से लगातार बारिश हो रही है। कभी झरझराती तो कभी झनझनाती, कभी सुराही से पानी उड़ेलने की तरह तो कभी टिपटिपाती बारिश जारी है। इसके साथ-साथ पिछले चार दिनों–सावन की शुरुआत से पवन बहता आ रहा है। यौवन में उन्मत्त, किनारों को डुबोकर महानदी ने भयानक रूप धारण कर लिया है। नाचती-कूदती आगे बढ़ती जा रही है। अनगिनत पेड़ों, पौधों, तिनकों, लकड़ियों आदि को बहाते हुए लिये जा रही है। बीच-बीच में डाल-पत्तों को थामे साँप, सियार तिरते नज़र आते हैं। मवेशी नदी की मँझधार में बहते हुए निहायत कमज़ोर हो चुके हैं। बस उनकी थोबड़ी और सींग दिखाई पड़ रहे हैं। ऐसी हालत में भी वे सिर घुमाकर इधर-उधर ताक रहे हैं कि कहीं कोई सहारा दे दे। धन्य हो महानदी, जीवों का विनाश करने वाली! कुछ मृत जानवर बहते जा रहे हैं। उनका पेट ढोल जैसा बन चुका है। फेनिल तरंग-मालाएँ जीवित मनुष्य की तरह गिरते-पड़ते अनथक दौड़ती चली जा रही हैं।

अभी भी सूर्यदेव अस्तगामी नहीं हुए हैं। कम-से-कम पहर बाकी है। लेकिन लग रहा है कि शाम का वक्त है। इसी समय बिड़ानासी गढ़ तलगढ़ गाठ के सीधे, महानदी के बीच पठार के आस-पास अँधेरे में से उम्मीद की एक झलक दिखाई पड़ी। दो नाविक पतवार थामे हुए हैं। कमर कसकर, सिर पर ताड़ पत्तों की टोपी पहने हुए हैं। एक और नाविक कसकर नाव का अगला हिस्सा पकड़े है। वह एकटक गढ़घाट की ओर देखे जा रहा है। तीन नाविकों के अलावा पाँच मल्हार भी हैं। ये पाँचों, दोनों घुटनो में सिर दबाए नौका में बैठे हुए हैं। मंगराज ने पुकारा, "अरे बासुआ पतवार थामो, पतवार!" दोनों नाविकों ने हड़बड़ाकर एक-एक-लंबा बाँस पकड़ लिया। नाव कुछ नीचे तैरने लगी थी। धीरे-धीरे ऊपर उठी। घाट पर बासुआ नाव से कूदा और

तपाक से रस्सी खींचने लगा तो अन्य दोनों नाविकों ने उतर कर बरगद की जड़ में नाव को बाँध दिया। दो मल्हार उतर कर पत्थर पर चढ़ गए। शेष तीन मल्हार किनारे पर खड़े रहे। सभी के हाथों में एक-एक लंबा चिमटा, सिर से पीठ तक लंबी जटा, गर्दन में रुद्राक्ष की माला, बाएँ हाथ में कमंडल, बाएँ हाथ के बीचों-बीच पोटली और एक-एक मृगछाला लटक रहा है। बासुआ उनके सामने हाथ फैलाकर बोला, "दो बाबा, क्या देना चाहते हो, दो।" बाबा लोग ख़ामोश। बासुआ से रहा न गया। बहुत गुस्सा हो गया। बेचारे का भी क्या दोष? इस मुसीबत में भी सारा दिन नाव खेता रहा। इधर पेट में भूख की आग जल रही है। ऐसे में वह धीरज कैसे रखे? बासुआ ने कहा, "दो जी, जो देना है जल्दी दो। कई नागाओं को देखा है मैंने। न कोई तीज न त्योहार, क़तार बाँध कर दौड़े चले आ रहे हैं। महीना भी नहीं बीता पचास-साठ नागाओं को पार किया है।" बासुआ गाली बके जा रहा है लेकिन लगता है नागा साधु प्रसन्न हो रहे हैं। उनके चेहरे से खुशी साफ़ झलक रही है। किसी विषय के बारे में जानना उनकी इच्छा थी और उनकी इच्छा पूरी हो रही थी।

एक नागा ने कमंडल से कौरवकालीन मुहर निकाल कर कहा, "ले बच्चा, ले।" बासुआ ने हाथ फैलाकर ले लिया। तीन-चार बार उलट-पुलटकर देखा। अन्य दोनों नाविक दौड़े चले आए। उन्होंने भी मुहर तीन-चार बार देखी। बासुआ बोला, 'समझे मेरे बाप, ये सिद्ध पुरुष हैं। जो कहेंगे वही होगा। देखा होगा, इनके पास कुछ नहीं था। थोड़ी-सी धूल उठाकर फूँक क्या मार दी तो मुहर बन गई। डेमेई बेहेरा ने कहा, "मैंने खुद देखा कि बाबा ने चुटकी भर धूल उठाई थी। लेकिन, दिनभर बारिश होती रही तो हम लोग धूल न देख सके। तीनों नाविक नागा साधुओं के पाँव पर गिरे। पदरज यानी पाँव का कीचड़ माथे पर लगाई। इसके बाद बासुआ और साधुओं के बीच देर तक बातचीत होती रही। बासुआ की बातों का सारांश यह कि इसी महीने में डेढ़ सौ-दो सौ नागा आ पहुँचे हैं। काठजोड़ी के किनारे, बिड़ानासी के तट, जोब्रा मैदान के पेड़ों के नीचे छाता गाड़कर धूनी रमाए हुए हैं। सभी सिद्ध पुरुष हैं। किसी से कुछ माँगते नहीं। महिमा से सब कुछ मिल जाता है उन्हें। फ़रमान जारी हो चुका है कि साधु विराजते ही हम उन्हें नदी पार करा देंगे। ज़िलों तथा देहाती इलाक़ों से जो भी सामान आएगा फ़ौरन पार कराएँगे। कोई देर न होने पावे। चाहे रात हो या दिन। आज अलीगढ़ से सामान सहित दो प्यादे आ पहुँचे हैं।

नागा साधु सारी बातें मन से सुनते रहे। नाविकों का कल्याण कर चले गए।

3.
मौना-मौनी

लगभग पचास साल पहले खंडगिरि और उसके चारों ओर की उपत्यका विविध जाति के पेड़ और लताओं के जाल से घिरी रहती थी। केवल गुफा और उसके सामनेवाला इलाका पेड़-पौधों से खाली और साफ-सुथरा था। वहाँ अनेक साधु-संन्यासी आश्रम बनाकर रहा करते थे। भभूत लगाने वाले साधु कौपीनधारी धूनी रमाए बैठे रहते। कपड़ेवाले साधु बिना धूनी के। साधुओं के कई प्रकार थे संन्यासी, नागा, रामावत और कुछ बिना उपाधिवाले। लगभग रोज़ साधुओं का आना-जाना लगा रहता कुछ चले जाते तो उनकी जगह भरने कुछ नए आ जाते। कुछ साधु आँखें मूँदकर ध्यान मग्न रहते। तुलसी या रुद्राक्ष की माला फेरते हुए कुछ साधु भजन में जुटे रहते हैं। कुछ पोथी बाँचने में लगे रहते तो कुछ पोथी की विद्या सुनने में। कोई गाँजा मल रहा होता तो कोई गाँजा सेवन कर रहा होता। कोई साधु खटोली में फूलों से सजे प्रभु को स्थापित कर धन जुटाने में व्यस्त रहता। दरअसल, यह एक अजूबा दृश्य था। इस पवित्र स्थान के दर्शन से बिलकुल पाषाण हृदयवाला भी भक्ति रस में डूब जाता।

कभी-कभी यहाँ जमाउत की टोलियों का भी शुभागमन होता है। लेकिन ये लोग गुफा के पास नहीं जाते। खंडगिरि की तलहटी में दो-चार धूनी जमाकर कहीं और चले जाते हैं। जमाउत टोली के संन्यासियों की संख्या चालीस-पचास से लेकर हज़ार-बारह सौ तक होती है। संन्यासियों का सामान ढोने के लिए ऊँट और घोड़े होते। कदाचित हाथियों का भी अभाव नहीं होता है। कुछ टोलियों में गाय और साँड भी नज़र आते। महंत बाबा जमाउत के अधिकारी कहलाते हैं। इसी महंत बाबा के आदेशानुसार जमाउत की टोलियाँ परिचालित होती हैं। एक कोठारी होता है तो दूसरा भंडारी। कोठारी रुपये-पैसे के ज़िम्मे और भंडारी खाने-पीने की वस्तुओं के। टोली के संन्यासी यायावर हुआ करते हैं। भारत में सर्वत्र घूमते-फिरते राजा, ज़मींदार और धनवानों से धन जुटाने

हेतु लगे रहते। संचित धन को चार-छह महीने में एक बार संन्यासियों में बाँट देते। हालाँकि, महंत बाबा के हिस्से में कुछ अधिक ही जाता। संन्यासियों को एकता के सूत्र में बाँधे रखने का यह एक तरीक़ा था। कई जमात-संन्यासियों के जगह-जगह मठ और बड़ी मात्रा में भू-संपत्ति मौजूद है। कुछ महाजनी भी करते हैं। देहात में इनका भयानक जुल्म जारी है। जमात का शुभ आगमन होता तो गाँववाले परेशान हो जाते। चंदा इकट्ठा किया जाता और साधुओं का सेवा-सत्कार होता। जमात के साधुओं के पधारते ही राजा-महाराज की तरह उनकी सेवा करनी होती। धूनी के लिए सही लक्कड़ का इंतज़ाम न हुआ तो ग़रीब प्रजा के घर से खंभे और शहतीर लूट लिए जाते। गाँव में जमात के साधु विराजते ही सबसे पहले बालभोग, साधुओं के लिए गाँजे का ख़र्च और देवदर्शन की भेंट करने का विधान बना हुआ। कोई बड़ा आदमी या राजा सबसे पहले आकर ससम्मान भेंट नहीं चढ़ाता तो साधु लोग दो-तीन दिनों तक भूखे पड़े रहते। यह तो नहीं पता कि सचमुच वे उपवास करते थे या नहीं। उनके पास रखा गया मैदा रात को धूनी में पड़कर रोट में बदल जाता। गाँव के धर्मनिष्ठ लोग, मासूम हिंदू प्रजा चुपचाप, सब कुछ सहन कर लेते। जमात में असली साधुओं की कमी न थी लेकिन बहुतेरे व्यापारी थे। बंगाल में डकैतों, पूर्वी समुद्र से दिल्ली की दीवार तक संपूर्ण आर्यावर्त में लूटने वालों और पूरे भारत में नागा जमात की टोलियों के उपद्रव से प्रजा काफ़ी उत्तेजित हो उठती थी। धन्य है अंग्रेज सरकार! उनके जुल्म से बचा लिया।

खंडगिरि में निवास करने वाले साधु सुबह नहाने वाले थे। प्रातःकाल देवताओं के समक्ष लगने वाले बालभोग सेवन करते और भजन-कीर्तन में जुट जाते। दोपहर को सिर्फ़ एक बार पंगत होती। शाम को आरती के घंटे, नगाड़े और तुरही की ध्वनि से खंडगिरि का पूरा इलाक़ा गूँज उठता। आरती के बाद रात के पहले पहर तक भजन चलता। कहीं खँजड़ी बजती कहीं गाँजे का सेवन। इसके बाद गिरि में निस्तब्धता छा जाती।

वर्णित काल में खंडगिरि में जो साधु-संन्यासी निवास करते थे उनमें से एक टोली का मामला उल्लेखनीय है। हाथी गुफा के सामने उस टोली के महंत महाराज धूनी रमाए बैठे हैं। धूनी की विपरीत दिशा में थोड़ी ही दूरी पर एक छोटे सिंहासन पर महंत के सामने प्रभु महावीर जी देवता विराजमान हैं। महावीर जी गहने और कपड़े-लत्तों से सज-धजकर ख़ूब चमचमा रहे हैं। रोज़ सुबह प्रभु के लिए मोहन भोग, बालभोग और शाम को पक्का माल यानी पूड़ी, कचौड़ी, खीर, पुलाव का भोग लगता। देवता की सेवा में काफ़ी ख़र्च होता लेकिन

किसी से कुछ माँगा नहीं जाता। महाप्रभु महावीर की महामहिमा से सब कुछ बन जाता है। महंत महाराज बिलकुल निर्मोही हैं। कोई भक्त प्रभु के लिए कुछ भेंट चढ़ाता तो रुपये पैसे वहीं पड़े रहते। एक बार भी महंत महाराज उधर ताकते तक नहीं। आम लोगों का कहना है कि प्रभु की सेवा में रोज़ जितना ख़र्च होता है, उतना सोना या चाँदी उन्हें धूनी से प्राप्त हो जाता है। बाहर के विश्वस्त कुछ भक्तों ने इसे अपनी आँखों से देखा है। भुवनेश्वर आदि स्थान के व्यापारी ख़रीद लेते हैं। ख़रीद-फ़रोख़्त के वक़्त कोई मोल-भाव नहीं होता। साधु सज्जन भला क्या मोल-तोल करते? महंत बाबा बस यही कहकर चुप हो जाते, "प्रभु का माल, प्रभु ने दिया। प्रभु की सेवा, तुम्हारा धर्म है। बनिया अपनी मर्ज़ी के अनुसार रुपये देकर सोना, चाँदी ले जाता। यह भी सुनाई पड़ता है कि रोज़ धूनी से जो हासिल होता है उसे ख़र्चना होता है। महावीर का ऐसा हुक़्म है। ख़र्च कम न हो केवल रोज़ गाँजा आधा सेर, फिर उसमें काफ़ी तंबाकू चाहिए। प्रसाद सेवन के लिए बड़ी संख्या में देहाती लोग जुटने लगते। महंत बाबा के आसन के पास रात को अक्सर बोतलें नज़र आतीं। उनमें गंगाजल लाया जाता। शाम को आरती के बाद महंत बाबा और उनके चेले गंगा जल पान करते। एक बड़ी गुफा में साधुओं का सामान भरा हुआ रहता। स्वयं महंत तथा उनके दो वफ़ादार चेलों के सिवा उस गुफा में किसी और को जाने का अधिकार नहीं।

महंत बाबा का नाम है महावीर दास। लंबा क़द, कसरत के चलते मांसपेशियाँ सुदृढ़, कसी हुई। साँड़ की तरह बलशाली हैं। मस्तक पर शिशु अहिराज की कुंडली के समान लंबी जटाओं का भार। जटा की वेणी से उसे कसकर बाँधा गया है। उस अनुपात में दाढ़ी और मूँछ उतनी लंबी न थी। शरीर के रंग के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता क्योंकि वह भभूत से रँगा रहता है। गाँजे के नशे के चलते आँखें जवाकुसुम के समान लाल और चंचल लगती हैं। दृष्टि नितांत तीव्र और भयप्रद। कोई नवागत मुसाफ़िर या भक्त आता तो उसे तीव्र दृष्टि से सिर से लेकर पाँव तक निहार लेते। साँप की नक़्क़ाशी से लिपटी बित्ते भर लंबी गाँजे की चिलम हमेशा उसके हाथ में शोभा पाती। महंत बाबा की उम्र लगभग पचास के आसपास होगी। लेकिन तपस्या में सिद्धि प्राप्त करने वाले साधुओं की उम्र का अंदाज़ा नहीं लगाया जा सकता। चेलों का कहना है कि बाबा ढाई सौ साल के हैं। महंत बाबा भी भक्तों के सामने उसी ढंग से बातचीत करते हैं। अगर किसी के मन में साध है कि एक हज़ार साल के उम्रवाले साधु के दर्शन करें तो बालासोर शहर के दूध पीने वाले बाबाजी को देख आए। वे बाबाजी अक्सर लोगों को बताते हैं कि पुरी

के जगन्नाथ मंदिर की स्थापना के वक़्त उन्हें दावत में बुलाया गया था। मुग़ल शासन के दौरान वे सहस्र सिर वाले रावण की राजधानी विलंका नगरी में मौजूद थे। लेकिन देखने से वे साठ से अधिक के नहीं लगते। इनकी महिमा अपरंपार थी। दिनभर गाँजा और दूध के सिवा कुछ नहीं लेते थे। शहर में विश्वस्त भक्तों की कमी नहीं है। क्लर्क, मुख़्तार, महाजन, ज़मींदार की टोलियाँ बाबाजी की चरण वंदना करतीं। मठ में राजसी ठाट-बाट थी। लेकिन, पिछले कुछ वर्षों से शक्ति के प्रभाव से बाबाजी ने बालगोपाल के साथ गार्हस्थ धर्म अपना लिया है। भक्तजन ग़ायब हो गए। कहा गया है कि संन्यासी और मुग़लों की उम्र का पता लगाना निहायत मुश्किल है। ये लोग अपनी उम्र घटा-बढ़ाकर बताते हैं। किसी साधु की उम्र पचास है तो वह सौ जोड़कर एक सौ पचास बताएगा। मुग़लों की उम्र घटती है। किसी की उम्र पचास है तो पूछने पर वह पच्चीस घटाकर सिर्फ़ पच्चीस बताएगा। एक पुरानी बात याद आ गई। पाठको, नाराज़ न हों। बात बताए बिना रहा न जाता। ''किसी जगह दो बूढ़े और एक बीस साल का युवा मुग़ल बैठे हुए थे। बातचीत के दौरान एक-दूसरे से उम्र के बारे में पूछा। जो सत्तर साल का था, उसने कहा कि वह तीस का है। दूसरे की उम्र साठ से कम न थी। उसने कहा कि ''साहब, मुझे उम्र का पता नहीं लेकिन मेरे बड़े भाई की उमर बीस की नजीक।'' युवा मुग़ल से उम्र के बारे में पूछा गया तो वह बोला, ''हुज़ूर, लोग उमर का जो हिसाब लगाए हैं, मैं तो पैदा भी हुआ नहीं।'' यानी उसकी उमर से बीस हटा देने के बाद कुछ बचता नहीं। ख़ैर, छोड़िए उन हल्की बातों को। अब असली बात पर आते हैं।

महंत बाबा की टोली में लगभग पच्चीस साधु हैं। उनमें से बीच-बीच में आठ-दस साधुओं की अदला-बदली होती है। यानी कुछ साधु निकल आते हैं तो तुरंत कुछ नए साधु उनकी जगह भर लेते हैं। आश्चर्य की बात है कि लगभग सभी साधु हम-उम्र हैं। समान आकार-प्रकार वाले। वेशभूषा भी एक जैसी। सभी जंगली सूअर की भाँति ताक़तवर और फ़ुर्तीले। सिर पर जटा नहीं छोटे-छोटे या घुँघराले केश हैं। मूँछे भी छोटी-छोटी। सबके शरीर पर गले से पैरों तक गेरुये रंग का अँगरखा। स्वभाव और वार्तालाप में काफ़ी तीखापन है। नज़र तेज़ तथा भय और विभ्रम उत्पन्न करने वाली। साधुओं की बोलचाल की भाषा हिंदी है। यूरोप में फ़ारसी आम भाषा है। इसी तरह भारत में हिंदी सर्वत्र बोली जाती है। साधु-संत भारत में सर्वत्र भ्रमण करते हैं, इसलिए मजबूरन हिंदी बोलते हैं। जिसकी मातृभाषा हिंदी है, उसे कोई तक़लीफ़ नहीं होती।

हमारे साधुओं की इस टोली की भाषा निम्नवर्ग की बोलचाल बाङ्ला या

बांग्ला और हिंदी की खिचड़ी से बनी एक अजीब भाषा है। इन साधुओं को भजन या पूजा-पाठ करते बहुत कम देखा जाता है, गाँजा मलने, गाँजा पीने और पंगत के सामान जुटाने में लगे रहते हैं। सभी साधु, महंत बाबा के वफ़ादार सेवक हैं।

हाथी गुफा के नज़दीक एक और छोटी-सी गुफा में एक साधु दंपती ने आश्रम स्थापित किया है। बाबाजी की उम्र अंदाज़न तीस या बत्तीस होगी। स्वस्थ और ठोस शरीर। जिस बनावट के आधार पर लोग सुंदर कहलाते हैं, इनकी बनावट भी ठीक वैसी ही थी। शिकारी से डरे हुए हिरन की भाँति डरी सहमी नज़र वाले। हमेशा लोगों की नज़र से दूर गुफा में बैठे रहते। सावधानी से माताजी का शरीर वस्त्रों से ढँका रहता था। इसलिए, उनकी उम्र या रूप-कांति का आकलन करना आसान न था। लेकिन उनकी पीठ से होते हुए नितंब तक फैली केश-राशि, संकरा कटि-देश और चरण युगल के वर्ण और गति के ढंग से पता चलता है कि माताजी परम सुंदरी हैं और पूर्ण यौवन को प्राप्त हैं। यह साधु दंपती गुफा के बाहर नहीं निकलते। हमेशा गुहावास करते हैं। किसी से कोई बातचीत नहीं। इसलिए इन्हें लोग मौना बाबा और मौनी माताजी कहते हैं। एक साधु दूसरे साधु का मददगार होता है। हमारे वर्णित महंत बाबा, मौनी बाबा और मौनी माता के लिए ज़रूरत सामग्री का इंतज़ाम करते नज़र आते हैं।

साधुओं के दर्शन हेतु आने वाले यात्री खंडगिरि में रात को ठहरते न थे। उसी दिन लौट जाते थे। लेकिन, महीने भर से दो बंगदेशीय साधु-सेवा में डूबकर यहीं रुके हुए हैं। यहाँ के साधु केवल धूनी की विभूति देकर लोगों की उत्कट पीड़ा दूर कर देते हैं। हमारे महंत बाबा भी आँखें मूँदकर अनेक लोगों को विभूति वितरित करते देखे जाते हैं। हमारे भक्तद्वय अनिश्चित उत्कट पीड़ा से पीड़ित हैं। आरोग्य की कामना के साथ महंत बाबा और दूसरे साधुओं की सेवा में सुबह से लेकर रात के पहले पहर तक जुटे रहते हैं। अपने पैसों से भुवनेश्वर के बाज़ार से अच्छी क़िस्म का गोल-गोल बटादार गाँजा ख़रीदकर लाते हैं। साधुओं को पिलाते हैं। अच्छा गाँजा लाने की चाहत से कभी-कभी पुरी भी चले जाते हैं। मौनी साधु दंपती के प्रति भी इनकी अडिग भक्ति है। उनके मौनव्रत के बावजूद गुफा के द्वार के पास बैठ उन्हें निहारते रहते हैं। कभी-कभी बालभोग के लिए मिठाई या फल-मूल ख़रीदकर ले आते हैं। मौनी दंपती को अर्पित कर प्रणाम करके लौट आते हैं।

आज प्रातःकाल से खंडगिरि में काफ़ी हलचल मची हुई है। पुरी ज़िला के

मजिस्ट्रेट साहब स्वयं मौजूद हैं। पौ फटने के पहले खंडगिरि के सामने चार-पाँच डेरे लगाए गए। एक बड़े खेमे में कुर्सी मेज डलवाकर साहब ने कचहरी लगाई है। साथ हैं चार पुलिस दरोगा, आठ मुंशी, अनेक अच्छे जमादार, सौ के लगभग बरकंदाज, लंबी-लंबी लाठियों के साथ दो या तीन सौ चौकीदार तैनात हैं। पुलिस कर्मचारियों ने जंगल में हाथी पकड़ने के ढंग से खंडगिरि को घेर रखा है। निकलने का किसी को अधिकार नहीं है। सभी साधु-संन्यासी पकड़े गए और मजिस्ट्रेट साहब के समक्ष घेरा डाल कर रखे गए। दिनभर जाँच-पड़ताल चलती रही। दोपहर को हमारे दोनों तथाकथित भक्तों की शिनाख़्त के मुताबिक महंत बाबा महावीर दास और उनके साथ रहने वाले पच्चीस संन्यासी और दस साधुओं के हाथों में हथकड़ियाँ पहना कर हवालात में भरे गए। अपने मौनी बाबा की भी वही दशा हुई। मौनी माता पुलिस की हिरासत में रहीं। मौनी बाबा की गुफा और हाथी गुफा से बड़ी मात्रा में गहने और जवाहरात, क़ीमती कपड़े, शॉल आदि बरामद हुए। मजिस्ट्रेट साहब के हुक्म के अनुसार अन्य साधु-संन्यासी भी उसमें शामिल कर लिऐ गए। उत्कल का नैमिषारण्य खंडगिरि उस दिन से साधु-रहित हो गया है।

अगले दिन सुबह मजिस्ट्रेट साहब कैदियों को पुलिस की निगरानी में कलकत्ता चालान करके पुरी रवाना हो गए।

बाद में पता चला कि उल्लिखित महावीर दास महंत बंग प्रदेश का मशहूर डाकू सरदार जगा ग्वाला था। अन्य साधु उसके साथी डाकू थे। दस साधु दूसरे ज़िलों के भागे हुए मुलज़िम थे। मौनी बाबा कलकत्ता के एक बड़े मशहूर व्यक्ति का गुमाश्ता था। मौनी माता उनके परिवार की विधवा वधू थी। उस बड़े आदमी के घर से ढेर सारे गहने मिले। बंग प्रदेश में डाले गए डाके का ढेर सारा सामान बरामद हुआ। वर्णित दोनों भक्त पुलिस कमिश्नर के डिटेक्टिव पुलिस अफ़सर थे।

4.
बालेश्वरी राहज़नी
(सत्य घटना)

रेल तो कल की बात है। कलकत्ता से पुरी तक आज जो इतनी अच्छी सपाट सड़क व्यवस्था है, पहले ज़माने में उसका नामोनिशान तक न था। तब बंगाल या उत्तर पश्चिमांचल के जगन्नाथ दर्शनार्थी मुसाफ़िर जंगली जानवरों से भरे जंगल से होते हुए साँप की चाल के समान टेढ़े-मेढ़े, ऊबड़-खाबड़ और सँकरे रास्ते से होते हुए आते-जाते थे। बरसात के दिनों में अनगिनत नदी-नाले पानी से भरे रहते थे तो रास्ते निर्जन हो जाया करते थे। चैतन्य देव के समय नवद्वीप के यात्रियों को पुरी में उपस्थित होने के लिए तीन महीने लग जाते थे। अब आठ पहर से ज़्यादा नहीं लगते।

ईस्ट इंडिया कंपनी ने कलकत्तावासी राजा सुखमय से कई लाख रुपयों का कर्ज़ लिया था। कंपनी ने कर्ज़ चुकाना चाहा तो राजा ने उसे स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कलकत्ता से श्रीक्षेत्रधाम तक एक अच्छी सड़क बनाने का अनुरोध किया। उसी रुपये से सड़क निर्माण करने की शुरुआत हुई थी। सड़क पर अनेक पत्थर निर्मित सेतु बनाए गए। बाद के दिनों में सरकार बहादुर ने उन तमाम पुलों को तुड़वा कर ईंटों के बड़े-बड़े पुल बनाए। अब भी कई जगहों पर पुराने छोटे-छोटे सेतु मौजूद हैं। 'सोर' के पास एक छोटी-सी नदी कांशबांश पर बने विशाल पुल के पत्थर के हिस्से को 'सुखमयी' कहते हैं। कलकत्ता से पुरी तक नए सिरे से बनी सड़क के किनारे हर दस कोस के फ़ासले पर लगभग चार सौ लोगों के रहने लायक़ ईंटों की धर्मशालाएँ दो क़तारों में बनी थीं। उन धर्मशालाओं के पास दो-दो गहरे कुएँ भी खोदे गए थे। वक़्त के साथ वे धर्मशालाएँ जीर्ण और अनुपयोगी हो जाने के कारण सरकार बहादुर ने उन सबको तुड़वाकर उसकी ईंटें सड़क पर डलवा दीं। भद्रक, बस्ता, ब्राह्मणीकुल और कटक में ऐसी धर्मशालाएँ आज भी मौजूद हैं।

रास्ता बन गया। कुछ हद तक धर्मशाला का अभाव भी पूरा हुआ। लेकिन यात्रियों को भोजन आदि मिलने का इंतज़ाम नहीं हो सका। जॉन बिचर नामवाले साहब ने सरकार बहादुर से बिना चुंगीवाली कुछ ज़मीन लेकर बालासोर के बिचरगंज, बस्ता के मुलिदा, बोलगाँ, मार्कणा, टाँगी, कटक आदि स्थानों पर सराय बनवाई और दुकानें खुलवाईं। सुखमयी धर्मशाला में सभी जाति के लोग ठहरते थे। इसलिए हिंदू तीर्थयात्री वहाँ रसोई बनाने के लिए राज़ी नहीं हुए और बिचर साहब द्वारा बनवाई गई सरायों में ठहरने लगे। स्थानीय लोगों ने भी समुचित जगहों पर चट्टियाँ बनवाकर तथा दुकानें खुलवाकर तमाम अभावों को पूरा किया। रेलगाड़ियाँ चलने के बाद सारी चट्टियाँ बंद हो गईं। जॉन बिचर साहब ने सरकार बहादुर से जो ज़मीन विना चुंगी पर ली थी उसे विलायतवाले उनके उत्तराधिकारियों से मालिकाना ख़रीद कर भद्रक निवासी बाबू ब्रजगुप्त ने अपने भोग के अधिकार को बनाए रखा।

यात्रियों के सभी अभाव दूर हो गए। जंगली जानवरों से उन्हें काफ़ी हद तक निजात मिली। लेकिन, नर-राक्षस-डकैतों का अत्याचार उन्हें लंबे अर्से तक भुगतना पड़ा। मेदिनीपुर से भद्रक तक का रास्ता डकैतों का लीला-क्षेत्र था। सड़क की पश्चिम दिशा में घना जंगल था। इसलिए वे लोगों की नज़र से दूर जंगल में अड्डा बनाए क्रूर, नारकीय व्यापार चलाने में क़ामयाब थे। सरकार बहादुर की लंबे समय तक कोशिश के बावजूद वे अपना धंधा चलाते रहे। डकैतों का मुख्य अड्डा था नारायणगढ़। उस गढ़ के बाँस वन में सैकड़ों बेकसूर नर मुंड लुढ़कते रहते थे। ऐसी बातें हमने हज़ारों बार सुनी हैं। चालीस साल पहले लेखक को बैलगाड़ी से कलकत्ता आते-जाते गाड़ीवान तथा अन्य राहगीर उँगली से इशारा करके उन भयंकर स्थानों को दिखाया करते थे। ओडिशा में एक कहावत काफ़ी लंबे समय तक प्रचलित थी–

"हल्दी का लेपन
पार किया नारायणगढ़ तो कुटुंब मिलन।"

पहले यात्री कम-से-कम नारायणगढ़ की सीमा के आसपास सूर्यास्त के बाद (दिन में भी) बिना टोली के आते-जाते न थे। अनजान यात्रियों की सुरक्षा न थी। पहले धनवान यात्री बैलगाड़ियों से आते-जाते थे। भाग्यवान यात्रियों के लिए डाक-पालकी का इंतज़ाम हुआ करता था। कटक, पद्मपुर इलाके में हज़ारों बैलगाड़ियाँ यात्री व माल-असबाब ढोने के लिए लगी रहती थीं। रेल और स्टीमर के प्रभाव के कारण उन अभावों का दाना-पानी मारा गया।

ईश्वर के पावन राज्य में पापियों की टोली का पतन अनिवार्य है। डकैत

बड़ी होशियारी से अपना धंधा चलाते थे। फिर भी काफ़ी दिनों बाद उनके विनाश का कारण आ पहुँचा।

बालेश्वर ज़िले के असिस्टेंट मजिस्ट्रेट (बाद में हाइकोर्ट के जज) मिस्टर रैंफिनी साहब डाक-पालकी में सवार होकर बालेश्वर से कलकत्ता रवाना हो रहे थे। बस्ता और हल्दीपदा के बीचो-बीच डकैतों ने उनकी पालकी लूट ली। जहाँ तक हो सके डकैत अंग्रेजों को नहीं लूटते थे। उन्हें पता था कि देशी राजा-महाराजाओं की हत्या भी कर दी जाए तो छुटकारा मिल सकता है, लेकिन पवित्र सफ़ेद चर्म छू भर लेने से कोई छुटकारा नहीं। डकैतों ने ग़लतफ़हमी में पड़कर रैंफिनी साहब की पालकी को लूटा था। उन दिनों बालासोर में एक तैलंग महाजन हुआ करते थे। नाम था नारिकेलि मेली योगैया। ये साधारण आदमी थे। पहले नमक की ठेकेदारी करके उन्होंने ख़ूब धन कमाया। डाक-पालकी से योगैया बाबू के जाने का सुराग़ डकैतों को मिल चुका था। इत्तफ़ाक़ से उनका जाना टल गया और उसी पालकी पर बैठे रैंफिनी साहब कलकत्ता रवाना हो रहे थे। साहब पर डाका डालना मामूली बात न थी। हाकिम-समाज में हलचल मच गई। वहाँ पहुँच कर पुलिस के दस्ते ने बस्ता थाने इलाक़े को तहस-नहस कर डाला। जंगल का चप्पा-चप्पा तलाशा। सरकारी ख़र्चे से कई तालाबों का पानी सुखाया गया। कितने ही बेक़सूरों को खींचा-घसीटा गया। लेकिन इससे कुछ बना नहीं। मानो डकैत आसमान से टपके थे और सारा माल कहीं हवा में बिला गया। इस डकैती की तहक़ीक़ात थमते ही पहले की तरह तीन-चार डकैतियाँ हो गईं। बालेश्वर निवासी ज़मींदार बाबू मदनमोहन दास जी का बस्ता थाने के इलाक़े में एक तअल्लुक़ा था। किश्तों में लगान वसूल होकर कचहरी वाली कोठरी में बारह सौ रुपये जमा थे। डकैतों ने लूट लिया। उस दौरान हुई डकैतियों में से एक का उल्लेख ज़रूरी है। बस्ता थाने से क़रीब चार कोस दूर चारिगाँव गाँव में एक मशहूर आदमी रहा करता था। उसका नाम बामन भूयाँ था। डाकुओं की टोली ने उनके यहाँ बड़ा ज़ुल्म किया। उनकी दो पत्नियों में से एक गर्भवती थी। निर्दयी डाकुओं के कठोर प्रहार से उसका गर्भ गिर गया। इसके चार दिन बाद वह भगवान को प्यारी हो गई। दूसरी पत्नी ने भागकर अपनी जान बचाई। वामन भूयाँ को डाकुओं ने बुरी तरह मारा-पीटा और उसकी गर्दन मरोड़ दी। उसका मुँह पीठ की ओर मुड़ गया। बावन भूँया ने भी आसानी से डाकुओं को न छोड़ा। दो-तीन डाकुओं को हथियार से घायल किया और एक डाकू को मार गिराया। अन्य डकैत मरे हुए डाकू की लाश उठाकर भाग गए।

चंद दिन पहले पुरानी पुलिस को हटाकर नई बंगाल पुलिस लाई गई। बालासोर ज़िले के प्रथम पुलिस डिस्ट्रिक्ट सुपरिंटेंडेंट मिस्टर सटल ओयार्थ साहब ने जी-जान से कोशिश की, लेकिन बस्ता इलाके से ख़ाली हाथ लौटना पड़ा उन्हें। डाकुओं की टोली को ढूँढ़ निकालने के लिए सब-इंस्पेक्टर बाबू राजकिशोर चौधरी को नियुक्त किया। चौधरी महोदय पुलिस विभाग में योग्य कर्मचारी के रूप में सुपरिचित थे। राजघाट थाने के मुंशी बाबा दिगंबर दास, जलेश्वर थाने के मुंशी बाबू किणाराम प्रधान उनकी सहायता करने पहुँच गए।

आला हाकिमों के आदेशानुसार बाबू राजकिशोर चौधरी पुलिस दस्ते के साथ डकैती स्थल चारिगाँव में डेरा डाल कर रहने लगे। बहुत दिनों तक बेकार की मेहनत के बाद असफल होने की रिपोर्ट दर्ज़ की तो सुपरिंटेंडेंट साहब ने उन्हें उत्साहित करते हुए लिखा था, ''तुम्हारी तहक़ीक़ात का तरीक़ा संतोषजनक है। जब तक डकैतों का जत्था पकड़ा नहीं जाता है, तब तक तुम्हें चारिगाँव नहीं छोड़ना है।'' यह है अंग्रेजों की ख़ूबी। इसलिए हम विजित हैं और वे विजेता। किसी मामले में असफल हो गए तो हम हतोत्साहित और निराश हो जाते हैं। लेकिन, अंग्रेज़ जाति का काम करने का तरीक़ा कुछ ख़ास होता है। कहावत है, ''मेहनती माँगकर नहीं खाता।'' प्रस्तुत घटना इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। राजकिशोर बाबू की तहक़ीक़ात करने का ढंग ऐसा था कि शाम के बाद दो-तीन पुलिसकर्मियों को साथ लिए चारिगाँव के चारों ओर तीन-चार कोस की दूरी के गाँवों में गुप्त रूप से घूमते रहते। रात को गाँववालों की बातचीत सुनना और उनके काम, क्रिया-कलापों पर नज़र रखना मुख्य उद्देश्य था। देहात के पासी अक्सर चोरी में जुटे रहते हैं। इसलिए पासियों के गाँवों में ज़्यादा वक़्त गुज़ारते, अधिकांश रातें बिताते। अक्सर पासियों के मुहल्ले में ओरी के पास बैठकर घर के अंदर चलती बातचीत सुनते। शरीफ़ लोगों के लिए यह काम कितना कठिन है, पाठक उसे आसानी से समझते होंगे। पासियों की मड़ैया के पीछे की तरफ़ ओरी इतनी नीची होती है कि कोई बैठे तो भी छप्पर सिर से टकराएगा। ओरी के नीचे बड़ी गंदगी, भद्दापन और दुर्गंध। हज़ारों मच्छर घेरकर भिनभिनाते हुए काट रहे होंगे, भगाने का चारा नहीं। साँप और भालू का भय न था, ऐसा कहा नहीं जा सकता। फिर गाँव के पासियों को पता चल जाए तो भयंकर आफ़त की संभावना है। क्या करें, नौकरी बचानी है।

एक दिन, आधी रात को किसी पासी की ओरी के पास बैठे हुए थे। घर के अंदर से आवाज़ आई। एक युवती रोते हुए अपनी माँ को उलाहना दे रही थी, ''वे जाने को तैयार न थे। बापू ही ज़बरदस्ती ले गया। बेवजह जान चली गई। अब मैं क्या करूँ?''

अगले दिन सुबह पुलिस फ़ौज के साथ सब इंस्पेक्टर राजकिशोर बाबू गाँव में आ धमके। तहक़ीक़ात से पता चला कि रोने वाली औरत के पति और पिता डकैत हैं। उसका पति डाका डालने के दौरान ही मारा गया और पिता आहत हुए। अन्य दो डकैत भी घायल हुए हैं और पकड़े गए हैं। डकैती का माल भी बरामद किया गया है। सेसन कोर्ट के फ़ैसले में पंद्रह डकैतों को सज़ा मिली। शायद वे फिर अपने घर लौट न सकें।

डकैतों के इस गिरोह को सज़ा मिलने के बाद भी हाकिम निश्चिंत न हो सके। उन्हें जानकारी मिल चुकी थी कि रैंफिनी पर हमला करने वाला गिरोह दूसरा था। वही गिरोह सबसे ख़तरनाक भी था। मयूरभंज के घने जंगल में उसका अड्डा है। उस मुख्य गिरोह के डकैतों की तादाद लगभग पचास है। कभी एक साथ और कभी अलग-अलग गिरोहों में बँटकर डकैती करते रहते हैं।

अपर कर्मचारियों को यह विश्वास था कि बालासोर के सदर थाने के इंस्पेक्टर बाबू शारदा प्रसाद घोष पुलिस विभाग के दक्ष कर्मचारी हैं। डकैतों के गिरोह को ढूँढ़ निकालने और गिरफ़्तार करने के लिए उन्हें नियुक्त किया गया है। लंबी मेहनत के बाद शारदा बाबू को डकैतों के अड्डे का सुराग़ भर मिल पाया।

मयूरभंज के बारिपदा से जलेश्वर तक के घने जंगल के बीच एक सँकरीला जंगली रास्ता है। एक दिन सुबह तीन भिक्षुक आधा कोस फ़ासले पर आगे-पीछे होकर बारिपदा से जलेश्वर की ओर जा रहे थे। सबके पीछे एक ज्योतिषी। चेहरे से आभिजात्य फूट रहा था। लेकिन वेशभूषा से ग़रीबी साफ़ झलक रही थी। पहनावे में घुटने तक एक कपड़ा, खादी की मोटी और मैली धोती। सिर पर मैले गमछे की पगड़ी। एक ओर अँगोछे में दो सेर के लगभग चावल और कुछ पैसे बँधे हुए थे। दूसरी ओर काँख में लेखनी के साथ ताड़ पत्तों का पंचांग। हाथ में बाँस की एक लाठी। कंधे पर ताड़ पत्तों की बनी छतरी (तब कपड़े के छाता का इस्तेमाल बहुत कम होता था) लिए बढ़ते जा रहे थे। सौभाग्य कहें या दुर्भाग्य ज्योतिषी को दो डाकुओं ने पकड़ लिया। ज्योतिषी ने काफ़ी चिरौरी की, अपनी दीन दशा और अपनी विद्वता के बारे में उन्हें बताया। ज्योतिषी के वक्तव्य का सारांश है–"वह एक नामी ज्योतिषी है। उनकी गणना सही रहती है। मयूरभंज के महाराज उसका बड़ा सम्मान करते हैं, इत्यादि।"

दोनों डाकू एक दूसरे से सलाह करने के बाद बोले, "तू हमारे सरदार के

पास चल। अगर सही ढंग से समझा देगा तो तेरा चावल व कपड़ा कुछ न लेंगे। न चाहते हुए भी ज्योतिषी राज़ी हो गया। दोनों डाकू उसकी आँखों पर पट्टी बाँधकर, हाथ पकड़े घने जंगल में टेढ़े-मेढ़े व ऊबड़-खाबड़ रास्ते से होते हुए उसे ले गए। जाते वक़्त ज्योतिषी बड़ी सावधानी से रास्ते के बग़ल के छोटे-छोटे पेड़-पौधों की टहनियाँ तोड़ता चल रहा था। लगभग दो-तीन कोस चलने के बाद डकैतों का अड्डा आ गया। आँखों की पट्टी खोली गई। अड्डे की हालत देखकर ज्योतिषी की अंतरात्मा कराह उठी। एकदम हिम्मतवाला न होता तो उस जगह धीरज के साथ रुकना नितांत कठिन था।

घने जंगल में ज़मीन का थोड़ा-सा हिस्सा साफ़-सुथरा था। दो-तीन अलाव जल रहे थे। चावल पकाने की चार-छह हंडियाँ एक ओर पड़ी हुई थीं। बासी मांस और सूखे मांस की तेज़ बद्‌बू आ रही थी। फर्सा, बरछा, तलवार, तीर, धनुष आदि धारदार अस्त्र-शस्त्र पेड़ की डालियों से लटक रहे थे। मदोन्मत्त भयंकर मनुष्यनुमा कुछ राक्षसी स्वभाव के प्राणी ज़मीन पर लेटे हुए थे। सबने लंगोट पहन रखी है। वे भैंसों की तरह ताक़तवर थे। कोई बिना किसी वजह के ही कठोर बचनों से दूसरे को गाली सुना रहा था। कोई दूसरा भोंडे स्वर में गाना गा रहा था। ज्योतिषी को सबने कुपित दृष्टि से निहारा। ख़ास तौर पर सरदार ने काफ़ी देर तक उसे आपादमस्तक देख लेने के बाद दोनों डाकुओं से तल्ख़ आवाज़ में पूछा, "यह कौन है? क्यों ले आए इसे?" दोनों ने ज्योतिषी का परिचय करवाया। अब इस सरदार का परिचय कराना ज़रूरी है। उस समय डकैतों के गिरोह में दो सरदार थे। पहले का नाम नालू मिर्धा, दूसरे का नाम पैढ़ी सेठी। नालू मिर्धा काफ़ी लंबा और ख़ूब ताक़तवर था। दोनों आँखें कौवे के अंडे की तरह ख़ूब बड़ी-बड़ी और लाल-लाल थीं। राक्षस के समान चेहरा भयंकर था। यहाँ नालू मिर्धा भी उपस्थित था। नालू और ज्योतिषी के बीच इस तरह की बातचीत हुई–

नालू–"तू ज्योतिषी है?"

ज्योतिषी–"जी हाँ।"

नालू–"बोल, मेरे मन में कौन-सी बात है?"

ज्योतिषी ने ज़मीन पर आड़ी-तिरछी रेखाएँ खींचकर ढेर सारे श्लोक पढ़े। उसमें केवल ग्रह-नक्षत्रों के नाम के अलावा और कुछ न था। फिर कहा, "शास्त्र बता रहा है कि शनि ग्रह। इस ग्रह में धन-दौलत आदि के लाभ की बात है।"

नालू–"बोल, वे द्रव्य किस दिशा में हैं?"

एक बार फिर श्लोक पढ़कर ज्योतिषी ने कहा, "पूर्व दिशा में।"

(ज्योतिषी के साथ लेखक की एक दिन इस तरह की बातचीत हुई थी। मैंने पूछा, "हिम्मत के साथ कैसे पूर्व दिशा कह दिया?" ज्योतिषी अर्थात् शारदा बाबू ने कहा, "चोर-डकैतों को धन की चिंता के अलावा और क्या हो सकता है?" फिर तीन दिशाओं में जंगल। पूर्व दिशा में केवल गाँव है, उस दिशा में ही डाका डाला जाएगा।")

सभी डाकू एक साथ चीख़ उठे, "शाबाश, शाबाश। ऐसे ही मयूरभंज के राजदरबार में तो नहीं जाता।"

नालू–"बोल, किस दिन और किस समय जाने से वे सारे सामान मिलेंगे?"

ज्योतिषी–"अगले कृष्ण पक्ष की द्वादशी, शनिवार की शाम को यात्रा करने से काम फ़तह, धन मिलेगा।"

सभी डकैतों ने एक साथ चीख़ते हुए कहा, "अच्छा, बहुत अच्छा। शाम को यहाँ से रवाना हो जाने से आधी रात तक वहाँ पहुँच जाएँगे।" ज्योतिषी बिदा हुए। फिर से आँखें बाँध दी गईं। पहले के दोनों डाकू उसे रास्ते में लाकर छोड़ देते हैं।

निश्चित दिन आ पहुँचा। पुलिस की फ़ौज पूरी तरह से तैयार होकर डकैतों को पकड़ने के लिए एक गाँव में जाकर डट गई। ज्योतिषी की भविष्यवाणी सही निकली, लेकिन दूसरे गाँव में। जिस गाँव में डकैती का अंदाज़ा लगाया गया था, उसमें डकैत गए ही नहीं। दूसरे गाँव में डाका डालकर चंपत हो गए। पाठक महोदय अनुमान से समझ चुके होंगे कि कथित ज्योतिषी कोई और नहीं, बल्कि स्वयं पुलिस इंस्पेक्टर बाबू शारदा प्रसाद घोष थे।

धीरे-धीरे दो-चार महीने बीत गए। इस बीच दो-चार और डकैतियाँ लगातार हो चुकी हैं। हाकिम और पुलिस की फ़ौज परेशान है। शारदा बाबू डाकुओं के अड्डे का जो हाल देख आए थे, उस हाल में पुलिस की टोली का वहाँ पहुँचकर उन्हें गिरफ़्तार करना टेढ़ी खीर था। डाकुओं का गिरोह सर्वदा हथियारों से लैस और उन्मत्त-सा रहता है। पकड़ने की कोशिश की भी जाए तो तमाम लोगों की जान के ख़तरे की संभावना है।

लंबी तहक़ीक़ात के बाद पता चला कि बस्ता इलाक़े के किसी ज़मींदार का नौकर डाकुओं के गिरोह में शामिल है। शारदा बाबू ने उस ज़मींदार की मदद से नौकर को अपने बश में कर लिया है। कुछ नक़दी, कुछ लोभ और अभय प्रदान कर नौकर से सही ख़बर ले ली। शारदा बाबू की सलाह के मुताबिक़ उस नौकर ने डाकुओं के सरदार नालू मिर्धा को बताया कि बर्द्धमान

की जेल से भागकर दो डाकू किसी गाँव में छिपे हुए हैं। सरदार ने उन्हें अपने पास बुला लिया। नौकर के साथ दोनों भागे हुए डाकू अड्डे में हाज़िर हुए। पहले-पहल सरदार तथा दूसरे डकैत आगंतुकों को संदेह की निगाह से देखते रहे। लेकिन नवागत डाकुओं की डील-डौल व बातचीत से उनका संदेह दूर हो गया। उन दोनों ने कहाँ-कहाँ डकैती की थी, डकैती के पहले किस तरह की टोह लेनी पड़ती है, कैसी चतुराई बरतनी पड़ती है, आफ़त आने से कैसे भागना पड़ता है, जेलख़ाना तोड़कर कैसे भागना होता है, आदि के बारे में सुनने के बाद नालू मिर्धा ने उन्हें पक्का उस्ताद मान लिया। ससम्मान अपने साथ रखा। नवागत डकैत काफ़ी दिनों तक वहीं रहे। उनकी गतिविधियों का समाचार ज़मींदार के उस नौकर से मिलता रहा।

एक दिन की बात है। दोनों नवागत डाकुओं ने सरदार के सामने प्रस्ताव रखा कि हमलोग छोटी डकैतियाँ नहीं करते हैं। आइए, सभी मिलकर किसी लखपति के घर डाका डालें। साल भर आराम से बैठकर मज़ा लूटें। हमेशा काम करते रहेंगे तो मज़ा कब लूटेंगे? बार-बार डकैती करने जाएँ तो पकड़े जाने की भी संभावना है। सरदार और उसके साथियों को यह प्रस्ताव अच्छा लगा। उन्होंने पारित कर दिया। सबने शाबाशी दी। इस मामले को तय करने के लिए एक तिथि निश्चित की गई। निर्धारित तिथि की रात उपस्थित होने के लिए भद्रक से मेदिनीपुर तक सभी गिरोहों के सरदार नालू मिर्धा और पैढ़ी सेठी हैं। ये सभी डकैतियों से सरदारी-हिस्सा पाते हैं।

आज संकेत स्थल पर बड़ी चहल-पहल है। मेदिनीपुर से भद्रक तक के सभी डकैत इकट्ठे हुए हैं। बड़ी डकैती की योजना है। आठ-दस मटके देशी शराब के, उसी मात्रा में गाँजे का इंतज़ाम किया गया है। मनचाहा पीओ, माँगने की ज़रूरत नहीं। आठ-दस बकरियाँ, भेड़ें गाँवों से चुरा कर लाई गई हैं। कुछ लोग मांस और चाट बनाने में जुट गए हैं। आज का सारा ख़र्च नवागत डाकुओं के ज़िम्मे है। अत्यधिक नशीले पदार्थों के सेवन से कुछ डाकू नीचे लुढ़क रहे हैं। नाच-गाना और विलास-व्यसन धूमधाम से चल रहा है। घने जंगल में अड्डे के चारों ओर तीन-चार कोस तक कहीं कोई आबादी नहीं है। रात के पहले पहर के आस-पास अड्डे के चारों ओर बंदूक की आवाज़ सुनाई पड़ी। घोर गर्जना के साथ क़रीब पचास कांस्टेबल, डेढ़ सौ सिपाही, चौकीदार और पुलिस इंस्पेक्टर डकैतों पर टूट पड़े। डकैत नशे में चूर होने पर भी मुस्तैद। अँधेरे में क़रीब एक घंटे तक ख़ूब मार-धाड़ और उठा-पटक चलती रही। अंत में डाकू पकड़े गए।

सबसे अंत में रोशनी जलाई गई तो सरदार नान्नू मियाँ और पेड्डी सेठी फ़रार थे। कई डकैत भी भाग गए थे। डकैतों के भ्रम में कुछ कांस्टेबल और सिपाही भी गिरफ़्तार कर लिए गए थे।

अधिकांश डकैत टापू पार चले गए। कुछ डाकुओं को लंबा कारावास मिला। उस दिन से बालेश्वर ज़िले के उत्तरांचल में बड़ी डकैती की कोई ख़बर नहीं है।

5.

बालेश्वर का देसी नमक

(सत्य घटना)

प्राचीन काल से बालेश्वर में देसी नमक बनता आ रहा था। सरकार बहादुर ने इस मामले में कब दख़ल दिया, यह बताना मुश्किल है। फिर भी इस बात का अनुमान किया जा सकता है कि 1803 ई. में ईस्ट इंडिया कंपनी, देश पर क़ब्ज़ा करने के पहले इस व्यापार में लिप्त थी। क्योंकि इसके पहले अंग्रेज़ों के बालेश्वर से व्यापारिक संबंध होने के सबूत मिलते हैं। देश पर अधिकार करने के बाद अंग्रेजों ने नमक बनाने का प्रबंध अपनी देख-रेख में किया होगा।

सन् 1861 से नमक बनाने का काम रोक दिया गया है। लेखक कम उम्र में सरकार की तरफ़ से 'निमक महल सरिश्ता' में थोड़े दिनों के लिए कर्मचारी था। नमक बनाने के बारे में उसका जो अनुभव है, अब स्मरण शक्ति के सहारे उसका एक संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

निमक महल के मुख्य कर्मचारी को सरकार सल्ट एजेंट की उपाधि देती है। यह उपाधि किसी अलग व्यक्ति को नहीं दी जाती थी, जो भी ज़िले का कलक्टर हुआ करता था उसे सल्ट एजेंट कहा जाता था। उनके अधीन दो और अंग्रेज असिस्टेंट सल्ट एजेंट नियुक्त होते थे। जिस वर्ष नमक का उत्पादन नहीं हो पाता (शायद) उस वर्ष मिस्टर कर्नल सल्ट एजेंट, मिस्टर बंड और मिस्टर मुफट असिस्टेंट सल्ट एजेंट होते।

एजेंट साहब के अधीन सदर कचहरी में दो सरिश्ता थे पहला मुंशीख़ाना, दूसरा हिसाबख़ाना। मुंशीख़ाने में नियुक्त कर्मचारियों की उपाधियाँ क्रम से इस प्रकार थीं—दीवान, पेशकार, मुंशी, रोज़नामचा-क़ातिब, नक़ल-क़ातिब, नाज़िर और इनके सहायक मुहर्रिर। हिसाबख़ाने में नियुक्त कर्मचारियों की उपाधियाँ थीं—सरश्तादार, मुंशी और मुहर्रिर। हमने देखा है कि सदर कचहरी के दूसरे महक़मे में नियुक्त कर्मचारियों से निमक महल में नियुक्त अमलों की संख्या

ज़्यादा होती थी। निमक महल कचहरी हमेशा लोगों से भरी रहती थी।

नमक उत्पादन के स्थान पर सरकारी बहाल कर्मचारियों की उपाधियाँ थीं–दारोगा, पेशकार ज़िलादार, चपरासी, जलावन चौकीदार, नमक प्यादा, चोपदार और कयाल। नमक विक्रय स्थल में बहाल कर्मचारियों की उपाधियाँ थीं–दारोगा और पेशकार। उत्पादन के स्थान नियुक्त पर प्रहरी और पुलिस कर्मचारी थे जमादार, मुंशी और चपरासी।

हर साल अगहन के महीने में उत्पादनकारियों को सरकारी अग्रिम धन दिया जाता था। अग्रिम धन लेने वालों को गुलिया कहा जाता था। सभी गुलिया सरकार को क़बूलनामा जमा करते, फिर अग्रिम धन घर लाते। लेन-देन के दौरान बालासोर शहर में उत्सव का-सा माहौल होता। ढेर सारे रुपयों का कारोबार होता। शहर में दुकानदार दुकानों को सजाकर रखते। हटवया, व्यापारी, भिखारी, अमला-फैला सभी की दो पैसों की अच्छी कमाई हो जाती। लाखों रुपये की पेशगी दी जाती। देहात के साधारण तबक़े के लोगों के हाथ मोटी रक़म लग जाती तो वे खुश होकर बाल-बच्चों के लिए, परिवार के लिए कई क़िस्म की चीज़ें ख़रीद कर ले जाते।

गुलिया पेशगी का धन लेकर चाटी की ओर लौटता। नमक बनाने की जगह को चाटी कहते हैं। कई चाटियों को मिलाने से जो क्षेत्र बनता है उसे अड कहते हैं। हालांकि सारी चाटियाँ और अड समुद्र के किनारे हैं।

गुलिया अपने हाथों से नमक नहीं बनाता था। काम करने के लिए वह कुछ लोगों को बहाल करता था। गुलिया सिर्फ़ कर्ता के रूप में हुआ करता था।

योग्य स्थान चुनकर पाढ़ी उपाधिधारी व्यक्ति चूल्हे तैयार करता। यह चूल्हा आमतौर पर चावल पकाने के चूल्हे जैसा नहीं होता। पाठकों में से जिन्होंने पुरी शहर में श्री जगन्नाथ महाप्रभु की रसोई के चूल्हे देखे हों, वे आसानी से समझ पाएँगे। नमक बनाने के चूल्हे उसी तरह पिरामिड के आकार के होते, लेकिन प्रभु की रसोई के चूल्हों से काफ़ी बड़े होते। किसी किसी चूल्हे के तल की परिधि बीस-बीस हाथ की भी होती। ऊँचाई क़रीब तीन-चार हाथ। बड़े-बड़े चूल्हों में एक साथ दो-तीन सौ तक हंडियाँ चढ़ाई जातीं। हंडियाँ भी चावल पकाने वाली आम हंडियों की तरह नहीं होतीं। महाप्रसाद की छोटी-छोटी हंडियाँ जैसी होतीं। चूल्हा बन जाने के बाद कुम्हार हंडियाँ तत्काल मुहैया कराता। एक-एक चूल्हे में एक ही बार में बीस-पच्चीस मन तक नमक तैयार हो जाता। एक दिन में तीन बार नमक बनता। कोई कर्मठ आदमी पाढ़ी चार

मर्तबा भी निकाल लेता।

चूल्हा तैयार होते ही मलंगी उपाधिवाला कर्मचारी पछाल से मिट्टी छीलना शुरू कर देता है। समुद्री तट पर कम गहराईवाली बंजर ज़मीन पर ज्वार के दौरान समुद्र का पानी घुस आता है। भाटा के बाद वह जगह सूख जाती है। इस स्थान को पछाल कहते हैं। मलंगी वहाँ से मिट्टी छील कर इकट्ठा करता है। मिट्टी इकट्ठा करने का स्थान बाड़ी है। बाड़ी पर फिर से समुद्र का पानी उड़ेल कर पैरों से रौंदते हुए उस मिट्टी को तरल बनाया जाता है।

बाड़ी के पास एक गड्ढ़ा खोदा जाता है। उसका नाम कुंडी है। बाड़ी की गीली मिट्टी कुंडी तक एक तिनका ठूँस दिया जाता। ताड़ी निकालने वाला खजूर के पेड़ की गरदन से गगरी तक जिस तरह खजूर की एक पत्ती ठूँस देता है, यह वैसा ही है। बाड़ी का सारा पानी रिसते हुए उसके तिनके से होकर कुंडी में आकर जमा हो जाता है। बाड़ी में सिर्फ़ मिट्टी बच जाती है। उस नमकीन पानी का नाम दह-पानी है। दह-पानी को हंडी में भरकर चूल्हे पर चढ़ाने से देसी नमक तैयार होता है। चूल्हा जलते समय आठ से लेकर सोलह तक कर्मचारी काम में लगे रहते हैं। बालेश्वर ज़िले में इस तरह के हज़ारों चूल्हे थे। नमक बनाने वाले चूल्हों में लकड़ी नहीं जलाई जाती। समुद्र के किनारे तीन-चार हाथ लंबी एक क़िस्म की घास पैदा होती है। वह घास जलावन के काम आती है। भगवान ने मानो नमक बनाने वालों की सुविधा के लिए मैदान में इस घास को उगाया है। जालुआ नाम का कर्मचारी घास काटने के लिए नियुक्त है। तेज़धार वाले औज़ार 'जब' को दोनों हाथों से पकड़कर झुकते हुए जालुआ कम समय में अभ्यासवश ढेर सारी घास काट लेता। घास सूख जाने के बाद नियुक्त हलवाह गट्ठा बाँधकर चेलों से चूल्हों के पास ले आते। उसकी रखवाली के लिए सरकार द्वारा बहाल किए गए जलावन-चौकीदार तैनात रहते थे। हज़ारों बैल और हलवाह इस काम में नियुक्त थे।

नमक बनकर जमा हो जाने के बाद ज़िलादार आकर वज़न कर लेता और निम्नलिखित प्रकार के फ़ॉर्म में अडंग-पेशकार के पास रिपोर्ट भेजता

ज़िलादार फ़ॉर्म

अडंग का नाम	चाटी का नाम	गुलिया का नाम	कितनी बार	नमक का परिमाण
छानुआ	कुली गाँव	हग्रू मल्लिक	तीन बार	अस्सी मन

ज़िलादार के हिसाब मिलने के बाद अडंग-पेशकार अपने खाते में नमक का परिमाण वग़ैरह जमा कर लेता। उसकी एक नक़ल सदर कचहरी में भेजने

के बाद हिसाब महकमे के खाते में जमा होता।

सदर कचहरी के मुंशीख़ाने में नमक का कुछ भी हिसाब नहीं रहता। वहाँ सिर्फ़ सभी प्रकार के इंतज़ामों की लिखा-पढ़ी होती। अडंग का पेशकार चाटि से नमक ले जाकर माल गोदाम में जमा कर देता। मालगोदाम में नमक फिर से वज़न होने के बाद ठप्पा लगाने वाला उस पर मुहर लगा देता। सरकार के द्वारा बहाल कयाल नमक तौलता।

अडंग का दारोगा सरिश्ता का कोई काम नहीं करता। सिर्फ़ चाटियों में घूम-फिर कर चूल्हों की जाँच-पड़ताल करता है। नमक बनाने वालों की फ़रियादें भी सुनता है। दारोगा की पालकी ढोने के लिए सरकार की ओर से आठ कहार नियुक्त होते। दारोगा के दौरे के समय उनकी पालकी पर रेशम की एक छतरी रहती। उस छतरी को लेकर चलने के लिए अलग से एक नौकर का बंदोबस्त रहता है।

उत्पादित नमक के परिमाण के हिसाब से नमक बनाने वालों को अग्रिम धन की दूसरी किश्त बैसाख के महीने में मिलती। यह अग्रिम रक़म अडंग के अनुसार दी जाती। बारिश शुरू होने पर उत्पादन का काम बंद हो जाता। नमक बनाने वाले कर्मचारी उत्पादन के स्थान को छोड़कर अपने-अपने-अपने घर लौट जाते। इसके बाद सितंबर के महीने में सदर कचहरी का जब हिसाब-किताब होता, तब नमक बनाने वालों को बाक़ी की क़ीमत दी जाती। कुछ नमक बनाने वालों को ज़्यादा सर्फ़ा के लिए भी कुछ न कुछ रक़म मिल जाती। सर्फ़ा का अर्थ है नमक बनने वालों के उत्पादन स्थल से वज़न करके नमक ले जाते समय कच्चा नमक वज़न में कुछ अधिक ले लिया जाता। मालगोदाम में दुबारा वज़न करते वक़्त वह माल बच जाता। उस बचे हुए नमक का अर्थ है ज़्यादा सर्फ़ा। यह कुछ कम न होता। पाँच-दस हज़ार मन तक का माल बच जाता। इस माल की क़ीमत को अडंग के सभी नमक बनाने वालों में बराबर बाँट कर दिया जाता। यद्यपि प्रत्येक अडंग में ज़्यादा सर्फ़ा होता, लेकिन दारोगा, पेशकार, प्रहरी, पुलिस, अमला आदि कर्मचारी उसे छिपाकर सस्ते भाव में बेच देते और प्राप्त धन आपस में बाँट लेते। चोरी का नमक नीलगिरि और मयूरभंज की रियासतों में चला जाता।

हर साल बालेश्वर ज़िले में नौ लाख मन नमक का उत्पादन होता था। इसमें से अपने ज़िले बालेश्वर में ख़र्च के लिए डेढ़ लाख मन नमक मालगोदाम में रखा जाता था। बाक़ी साढ़े सात लाख मन नमक बंगदेश में इस्तेमाल के लिए कलकत्ता के पास गंगा नदी के पश्चिमी तट पर स्थित सालिका नामक

गोदाम में भेज दिया जाता था। अडंग के मालगोदाम सालिका के मालगोदाम तक नमक ले जाने के लिए बालासोर के लगभग तीन सौ जहाज़ नियुक्त थे। दो डोलीवाले बड़े जहाज़ का नाम गोराप और एक डोलीवाले छोटे जहाज़ का नाम श्लोपा है। एक-एक गोराप में आठ-दस हज़ार मन तक का माल लादा जाता था। एक-एक जहाज़ चलाने के लिए दस-बीस कर्मचारी नियुक्त होते थे। जहाज़ के चालक की उपाधि माँझी थी, उसका सहायक टँडैल, दूसरे कर्मचारी खलासी कहलाते थे। यदि प्रत्येक जहाज़ के कर्मचारियों की औसत संख्या पंद्रह मान ली जाए तो उनकी संख्या क़रीब साढ़े चार हज़ार थीं। इनके अलावा जहाज़ के निर्माण कार्य में लगने वाले बढ़ई, लोहार, दर्ज़ी और दूसरे नौकरों की संख्या लगभग पाँच हज़ार थी। ये सभी बालासोर से थे। जहाज़ के अधिकारी और सारे महाजन भी बालासोर के निवासी थे। ऐसी बात नहीं कि वे सभी जहाज़ सिर्फ़ नमक ढोने के काम आते थे। उस समय अंतर्वाणिज्य और बहिर्वाणिज्य सब कुछ बालासोर के बाशिंदाओं के हाथ में था। वाणिज्य के लिए बालेश्वर के सारे जहाज़ गोपालपुर, विशाखापट्टनम्, मद्रास, रंगून और अन्य द्वीपों में आया-जाया करते थे।

बालेश्वर के निवासियों की दो चीज़ें मुख्य उपजीव्य थीं नमक और धान। ज़िले के लगभग एक तिहाई लोग प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से नमक के व्यापार से जुड़े हुए थे। बालेश्वर के पास बहने वाली बूढ़ाबलंग नदी जहाज़ों से भरी रहती थी और नदी का किनारा जनता से। अब सारा इलाक़ा मरघट-सा लग रहा है। बालेश्वर के जहाज़ों का अब कोई नामोनिशान नहीं है। जहाज़ चलाने या निर्माण करने के काम को पुरखों से करते आने वाले जो दूसरे काम में अनभ्यस्त थे, अब उनके वंशज भी नहीं? पिछले नौ अंक दुर्भिक्ष ने कृपा करके उन सभी लोगों को सपरिवार शांतिनिकेतन भेज दिया है। अन्यथा उनकी ज़िंदगी कितनी दूभर हो गई होती?

सन् 1861 ई. में सरकारी नमक उत्पादन का काम बंद हो गया। इसके बाद कुछ वर्षों तक बालासोर के बाशिंदे कुछ महाजनों ने संयुक्त रूप से बालेश्वर के खर्च के लिए सरकारी अनुमति से नमक उत्पादन का काम जारी रखा। इसकी वजह तो नहीं पता, लेकिन काफ़ी नुकसान उठाने के बाद बंद कर दिया। इसके चलते कुछ महाजन पूरी तरह से तबाह हो गए।

क्या सरकार ने मुनाफ़ा न मिलने के कारण नमक का उत्पादन बंद कर दिया था? नमक बनाने वालों से प्रति मन पाँच आने में ख़रीदकर दो रुपये प्रति मन के हिसाब से सरकार बेचती थी। मुनाफ़ा प्रति मन एक रुपये ग्यारह

आने था। केवल बालासोर ज़िले में नौ लाख मन के फ़ायदे का हिसाब लगा लीजिए। कटक और पुरी ज़िले की बात अलग है।

"क्षीराब्धितनया रमा।" लक्ष्मी का मायका समुद्र के किनारे होने के कारण वह हमेशा इस ज़िले में ही दिखती रहती थीं। समुद्र के किनारे के व्यापारिक स्थान का नाम बंदरगाह है, इसलिए इस ज़िले का नाम बंदरगाह बालेश्वर है। तीन सौ साल पूर्व बंग देश पहुँचने के पहले ओलंदेज़, फ़ारसी, दीनामार और अंग्रेज़ व्यापारी यहाँ व्यापार कर चुके थे।

बालेश्वर जैसा लक्ष्मीवंत स्थान, दो-चार साल अकाल पड़ने के बावजूद सँभल जाता। लेकिन इस सुसमय में अच्छी फ़सल होने के बावजूद शहर के आम लोगों में से, आधे से भी ज़्यादा घरों में दोनों वक़्त चूल्हा जलता भी है कि नहीं, संदेह है। मध्यवर्ग का हाल लगभग पूर्ववत् है। एक मात्र कारण धन का अभाव है। सिर्फ़ नमक उत्पादन बंद हो जाने के चलते सब कुछ ख़त्म हो गया। कारीगरों का कुल लुप्त हो गया। व्यापार के संदर्भ में उल्लेखनीय महाजन एक भी न रहा। बाहर से कर मारवाड़ी, कच्छी, भाटिया, नाखुदा लोग क़ब्ज़ा करने लगे हैं। हाथ में धन कहाँ जो विदेशी महाजनों से टक्कर लें।

इस छोटे से ज़िले से हर साल लगभग करोड़ रुपये का धान-चावल विदेशों में निर्यात होता है। रेलवे स्टेशन चावल के बोरों से भरा रहता है। सड़कों पर दिन-रात चावल लादे बैलगाड़ियाँ चलती रहती हैं, लेकिन शहर के अधिकांश लोग व्याकुल नयनों से भूखे पेट टुकुर-टुकुर निहारते रहते हैं।

सच है कि धान-चावल बेचकर देहाती किसानों के हाथ दो-चार रुपये हाथ-ख़र्च के लिए आते हैं लेकिन आप खोजें तो घर ख़ाली मिलेगा। रुपये हाथ आते ही लोभ पर क़ाबू न पाकर जर्मनी छापवाला नक़ली छाता आदि ख़रीद कर घर ले आते हैं। एक साल अकाल पड़े तो देखिएगा, लोग पाँव पसार कर सपाट पड़े हुए मिलेंगे।

पहले देशवासी समुद्र के किनारे की मिट्टी बेचकर रुपये पाते थे, अब चावल बेचकर जर्मनी की मिट्टी ख़रीद रहे हैं। रैपार-बैपार हमारे लिए मिट्टी के समान है। हमारा कहना है, पहले बालासोर ज़िले में हर साल नौ लाख मन नमक का उत्पादन होता था। आज तक वही काम चल रहा होता तो व्यापार फल-फूलकर हर साल कम-से-कम बीस लाख मन नमक बन रहा होता। इससे देश को कम-से-कम दस लाख रुपये मिल रहे होते। हज़ार साल पहले समुद्र में नाव चलाने वाले माँझी, समुद्री तट पर रहने वाले केवटों के परिवारों की आज के वैज्ञानिक युग में कितनी उन्नति हुई होती?

आजकल बालेश्वर की जो भी चमक-दमक है वह विदेशियों के चलते है। महाजन परदेशी है। कचहरी के बड़े-बड़े नौकर भी विदेशी हैं। रेल स्टेशन की नौकरी ओड़िशा के निवासियों के नसीब में नहीं है। ज़मींदारों के हाथ बँधे हुए हैं। अब खेती ही एक मात्र सहारा है। लेकिन ज़मीन पर कहाँ है?

हे भगवान! हमारी दयालु गवर्नमेंट के कंठ में विराजमान हों कि बालेश्वर ज़िले में पूर्ववत् नमक उत्पादन का काम फिर से शुरू करने का आदेश करे।

6.
पुनर्मूषकोभव

आज से चालीस साल पहले की बात है। बालेश्वर ज़िले में नमक उत्पादन पर पाबंदी लग गई। लुनादांड़ी इलाक़े के लोग तबाह हो गए। बालेश्वर ज़िले का पूर्वांचल यानी सुवर्णरेखा नदी के उत्तरी किनारे से लेकर धामरा नदी के दक्षिणी तट तक के समुद्री तट वाले इलाक़े का नाम लुनादांडी है। इस इलाक़े के पचास हज़ार से भी अधिक लोगों की आजीविका का एकमात्र साधन नमक उत्पादन था। कोई नमक बनाता तो कोई बनाने वाले की मदद करता है। कुछ व्यापारी होते और कुछ सरकारी कर्मचारी। और जिससे कुछ नहीं बन पाता वह चोरी करता। नमक चोर और चोरी का नमक फुटकर बेचने वालों की तादाद अधिक होती। भट्ठीवाले ने नमक जमा किया है। सरकार उसका हिसाब लेगी और बेचेगी। भट्ठीवाले की मिलीभगत से अगर कोई नमक गढ़जात इलाक़े में चालान करके सस्ते में बेचे तो फिर वह चोर नहीं तो क्या कहलाएगा? सबकी कमाई यकायक बंद हो गई। भयानक आफ़त आ गई कि नमक ख़रीदकर खाना होगा। देहाती आमजन के लिए सब्ज़ी आसानी से नहीं मिलती। साग-पात का भरोसा। नमक अकेला सहारा है लेकिन उसकी तंगी है। तंगी क्यों? बाज़ार में विलायती लाफ़ी नमक बड़ी मात्रा में मौजूद है। पर, वह तो मुफ़्त में न मिलेगा। पैसा देकर ख़रीदना होगा। पैसा है कहाँ? एक और मुसीबत है, हाट ज़्यादातर गाँवों से दो-ढाई कोस की दूरी पर है। कौन जाए हाट-बाज़ार में? रोज़ कुआँ खोदकर पानी पीने वाले लोग भला रिश्तेदारी कैसे निभाते? सारे रास्ते बंद हो गए, क्या चारा है? कोई दूसरी कमाई नहीं है। इधर बिना नमक के जान चली जाएगी। बस, चोरी का रास्ता बचा है। "नष्टस्य कान्या: गतिः?" नष्टस्य क्यों? हम-आप ऐसे झमेले में पड़े होते तो क्या करते, यह सोचने की बात है। नमक के बिना जीना दूभर। कमाई एक तरह से बंद हो गई है। इधर ईश्वर ने घर के चारों ओर करोड़ों मन नमक फैला रखा है। ओलती के नीचे

से मुट्ठीभर मिट्टी पानी में घोलकर उबाल दें तो नमक तैयार हो जाता है। बड़ी आसानी से बिलकुल चंद लम्हों में बच्चा-बूढ़ा कोई भी नमक बना ले। लेकिन पाबंदी है सरकार की। नमक बनाकर इस्तेमाल किया तो चोरी के जुर्म में चालान कर दिया जाएगा। इस हाल में सरकारी हुकम मानकर लोग कहाँ तक सही रास्ते पर चले होंगे, सभी आसानी से समझ सकते हैं।

आज बालेश्वर की सदर कचहरी में बड़ी हलचल है। लुनादांडी में नमक की चोरी पर निगरानी रखने के लिए पुलिस-अमला बहाल किए जाएँगे। जिसकी बहाली होगी वह निमकी पुलिस कहलाएगी। पुराने सारे निमकी अबलिस अमला, जमादार से लेकर इंस्पेक्टर तक बहाल कर दिए गए। केवल कांस्टेबल की नई बहाली होगी। अदालत की कोठरी में बड़ी भीड़ जमने के कारण मजिस्ट्रेट साहब कचहरी के बरामदे में कुर्सी डालकर बैठे हुए हैं। साहब की कुर्सी के पीछे दो अरदली खड़े बार-बार ऊँची आवाज़ में 'ख़ामोश, ख़ा...मोश' कहकर अपनी मौजूदगी और कर्मठता का परिचय दे रहे हैं। साहब के सामने पाँच-छह, हाथ की दूरी पर पेशकार उम्मीदवारों के ओड़िया में लिखे हुए आवेदन पत्र पढ़ते जा रहे हैं। एक-एक करके उम्मीदवारों को बुलाया जा रहा है। जाँच में जो योग्य पाया गया, साहब के इशारे से पेशकार उसका नाम दर्ज़ कर लेता। बहाल होने वाला कांस्टेबल दोनों हाथ जोड़ ज़मीन पर माथा टेकते सलाम कर लौट जाता है। जाँच में अयोग्य पाया जाने वाला मुँह लटकाकर पीछे हटते हुए लौट जाता है। इस उम्मीदवार का नाम पेशकार ने टीप लिया लेकिन यह है कौन? यह तो पेशकार का घरेलू नौकर कीनू बारिक, जाति का नाई। कीनू का थोड़ा-सा ख़ास परिचय देना ज़रूरी है 'हरि बिनु कीर्तन नाहीं'। कीनू हमारी इस कहानी की मूल पूँजी है। पेशकार का घर शायद देहात में है। क्योंकि शनिवार की शाम से सोमवार की सुबह तक उनके शहरी मकान के दरवाज़े पर ताला लटका रहता है। रात-बेरात गाँव आने-जाने के लिए साथ एक आदमी का होना ज़रूरी है, फिर वे ठहरे एक सरकारी कर्मचारी; मकान में नौकर के नाते एक नाई न रहे तो काम न चले। इसलिए अपने गाँव के कीनू नाई को साथ रखा है। वह पेशकार के घर का सारा काम-काज करता है। बस्ता ढोकर कचहरी में पहुँचाता और ले आता है। पेशकार की रसोई से उसका गुज़ारा होता। पेशकार से उसे अलग से वेतन मिलता था या नहीं, यह किसी को नहीं पता। कचहरी में छह महीना पंखा झलने का काम करता, उसकी तनख़ाह लेता। फिर पेशकार के घर जो मुवक्किल आया-जाया करते, उनमें से किसी के मामले में डिक्री हुई या किसी का कोई काम हासिल हुआ तो उसे दो पैसे

बख़्शीश के नाम पर मिल जाते। फिर उसे कचहरीवाला जानकर गाँववाले उसकी अदब करते, उसकी सुनते। 'नराणां नापितो धूर्तो:'। कचहरी में आने-जाने से थोड़ी और अक़्ल आ गई है। देखने में भी पाँच हाथ का मर्द है। उम्र लगभग पच्चीस-तीस के बीच। लोगों को पाँच 'व' के कारण सम्मान मिलता है विद्या, वपु, वाक्य, वस्त्र और विभव। कीनू देखने में इंसान जैसा इंसान है। बातचीत में होशियार। मासिक वेतन छह रुपये सरकारी ख़ज़ाने से। इसलिए कमोवेश तीन 'व' पर तो उसका अधिकार है ही। अब कभी ज़रूरत पड़ने पर अगर वह सीना तानकर रास्ते पर चले तो बुरा न लगेगा। आज कीनू ने ख़ास कपड़े पहन रखे हैं। नौ हाथ लंबी हथकरघा की धोती पहन रखी है। (तब विलायती गोष्ठ मार्कावाली धोती देश में न आई थी) तन पर अँगरखा, सिर पर पगड़ी। आज अमृतबेला में कीनू ने सिर पर पगड़ी बाँध ली है। सरकार से मिलने वाली लाल पगड़ी ने उसका स्थान ले लिया है। कीनू बारिक का नाम सरकारी काग़ज़ात में दर्ज़ हुआ कीनाराम सिंह।

अगले दिन सुबह कीनाराम सिंह ड्रेस पहने, कंधे पर कांस्टेबलवाला बैग लटकाए काम के लिए निकल पड़ा। कार्यस्थल तक पहुँचने में साँझ हो आई। उसके इलाक़े में चार गाँव हैं। इनमें से मकरामपुर गाँव सबसे बड़ा है। कीनू सिंह ने उस गाँव के बीचो-बीच भागवत घर (जहाँ पंडित जी पुराण बाँचते हैं) में पुलिस चौकी लगा दी। तब सरकारी पुलिस चौकी नहीं हुआ करती थी। उसने खुद ही भागवत घर का नामकरण पुलिस चौकी किया। सरकारी मामले में कौन टाँग अड़ाए? कीनाराम सिंह को देहात में एक और नाम मिला 'पुलिस जमादार।'

मजिस्ट्रेट साहब के दौरे के समय पेशकार के साथ चलने वाले कीनू को देहातों में जाते रहने के कारण थोड़ी-बहुत अमलागिरी की चाल का पता था। गाँव में पहुँचकर जमादार ने चौकीदारों को बुलवाया। ख़बर लगते ही चारों गाँवों में हलचल मच गई। नए हाकिम पधारे हैं, घर में कोई थोड़े ही रह सकता है। सारे मुखिया लोग हाज़िर हो गए। देखने वालों में बच्चों की संख्या ज़्यादा थी। घर की औरतें टाट-दरवाज़े की आड़ से झाँक रही हैं। जमादार ने सब पर निगाह डालते हुए ऊँची आवाज़ में सरकारी हुक्म सुना दिया। उसका सारांश यही था कि "चारों गाँवों के वे देहाती हाकिम हैं।" कचहरी बंद होते-होते देर हो गई। गाँव का बूढ़ा प्यादा एक अनुभवी आदमी है। तमाम हाकिमों का सान्निध्य पा चुका है। नाम है शंकु मलिक। उसने खड़े होकर गाँववालों को संबोधित किया—"अब बैठे रहने से क्या होगा, देर हो चुकी है। अब तक

साहब की आवभगत न हुई।" प्यादे की बात सुनकर लोग खड़े हो गए। दूसरी जगह पर बैठकर सबने विचार किया। पूरे गाँव से चंदा इकट्ठा हुआ। किसी के घर से चावल, किसी के घर से लकड़ी, नमक, बैंगन आदि पहुँचाया गया। नात ग्वाले ने कलसी में कुछ निरा दूध और तनिक घी पहुँचाया। चार पासी लौंडे भागते हुए खेत के एक गड्ढे के पास जा पहुँचे। पानी उलीचकर थोड़ी मछलियाँ पकड़ लाए। पहले दिन जमादार का भोजन तैयार होते-होते रात का पहला पहर बीत गया। एक ही जून भोजन हुआ। इस तरह दो, पाँच, दस दिन आराम से गुज़रे। दिन जैसे बीतने चाहिए वैसे बीते। जमादार को भोजन की कोई चिंता नहीं है। रोज़ कहीं न कहीं से रसद पहुँच जाती। दूध, घी, मछली की कमी नहीं। यह गाँववालों की धार्मिकता से प्रेरित अतिथि परायणता नहीं, इसका मूल कारण डर है। इसलिए जमादार का मनोरंजन किया जा रहा है। कभी भी कुछ हो सकता है। सारा गाँव चोर है। जमादार को मुट्ठी में रखना चाहता है। जमादार को हाथ जलाने की ज़रूरत नहीं, गाँव का पुरोहित नरहरि पांडा दोनों जून खाना पका जाता है। रामू नाई बेगारी करता। रसोई के इंतज़ाम के अलावा झाड़-पोंछा और जूठे बर्तन माँजने वाला काम भी कर देता। जमादार दौरे से लौटते तो वह कभी-कभार उनके हाथ-पैर में तेल लगाकर मालिस कर देता। ऐसे ही दो-चार दिन बीत जाते। एक दिन जमादार ने यूँ ही सोचा कि हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से काम न होने वाला है। सरकारी काम है, पूरा करना होगा। घर-घर में चतुर नमक चोर मौजूद हैं। गाँव में थोड़े दिन ठहर कर उन्होंने ख़ूब समझ लिया था। लेकिन उन्हें पकड़ें कैसे? गाँववाले हाट से दो पैसे का विलायती लाफ्री नमक ख़रीद लाते हैं। जमादार की रसद में वही नमक रख देते हैं। उनकी समझ में यह बात भी आ गई है। दिनभर लोग जमादार के पास आते-जाते हैं। रात के पहले पहर तक लोग उनके पास बैठकर इधर-उधर की बातों से उनका मन बहलाया करते। इस बहाने जमादार कब क्या करते हैं, इस पर भी उनका ध्यान लगा रहता है। गाँव के मास्टरजी वनमाली ओझा रोज़ शाम एक घंटा भागवत घर में बैठकर जमादार को पुराण बाँचकर सुनाया करते। हाथ और सिर की भंगिमा से 'बगुला बैठा था ध्रुव के ऊपर' वाले गीत का अर्थ समझाते। गाँववाले एकजुट हैं। प्यादा भले ही सरकारी आदमी है, लेकिन है तो वह भी गाँव का ही। अब जमादार कुछ परेशान होने लगे।

आज जमादार का मिज़ाज कुछ ज़्यादा बिगड़ा हुआ है। बात-बात में नाराज़। सब पर नाराज़गी, ग़ुस्से में कुप्पा होकर चौकी में गुमसुम बैठे हुए हैं। किसी से कोई बातचीत नहीं। प्यादा शंकु मलिक के कंधे पर चार हाथ लंबी

बाँस की लाठी है। वह बरामदे के नीचे बीस हाथ दूरी पर बैठा हुआ है। जमादार ने आग-बबूला होकर प्यादे से पूछा—"क्यों रे? वह आया नहीं?" प्यादे ने खड़े होकर हाथ जोड़कर कहा—"हुज़ूर, अब की बार जोड़ूँ तो तीन बार जा चुका, लेकिन वह नहीं आया। वह बोला, जमादार की जूठन साफ़ करके भला मैं अपनी जाति क्यों गँवाऊँ? जाने-अनजाने गाँव के मालिक की बात मानकर जो कर दिया, बस कर दिया, अब आगे नहीं कर सकता।"

शाम को गाँव के गिने-चुने मुखिया लोग मामला पर पहुँचे। वहीं रामू नाई बुलाया गया। रामू हाज़िर हुआ और जमादार को प्रणाम कर हाथ जोड़े खड़ा रहा। गाँव के प्रधान गोपाल घड़ेई ने पूछा—"क्या रे रामू, तूने आज जमादार के यहाँ हाज़िरी नहीं लगाई।" रामू दो बार खखारता रहा। दो बार कुनमुनाने लगा। फिर कुछ बुदबुदाता रहा। घड़ेई ने फिर से धमकाते हुए पूछा—"अबे जो कहना है साफ़-साफ़ बता।"

रामू ने कहा—"हुज़ूर, आज सुबह नरसिंहपुर से हमारी जाति के मुखिया आए थे। मुझे मना कर गए। बोल गए कि आइंदा जमादार की जूठन साफ़ किया तो जाति से निकाल दिया जाऊँगा। हुज़ूर, आप लोग इंसाफ़ कीजिए। जाति-बिरादरी का मामला है। मुखिया का आदेश भला मैं कैसे टालूँ?" सभी चुप हो गए। भेद तो खुला नहीं, पर सभी जान गए कि जमादार नाई जाति का है। रामू अपने जातिवाले की सेवा करने को तैयार न था। जमादार कुपित हो काँपने लगे। लेकिन हैं बड़े होशियार। सोचा कि रामू पर ज़ुल्म हुआ तो भेद खुल जाएगा। मौन रहे। रात गहराने लगी तो सभी अपने-अपने घर की ओर मुख़ातिब हुए। रामू भी उनके पीछे हो लिया।

जमादार के सात पुरखों का काम था जूठन उठाना। पेशकार के घर भी वही काम था उनका। क्या उनने जूठे बर्तन माँज नहीं सकते? लेकिन, बात इज़्ज़त की थी। उसका ख़्याल ज़रूरी है। क्या करते, काम चलाना पड़ा। लेकिन रामू पर गुस्सा बना रहा।

एक बुज़ुर्ग मुसलमान मौलवी हिंदू पुराणों के जानकार थे। इसलिए उनका मिज़ाज चढ़ा होता। वे कहते, "महाभारत अउर कुछ नाहीं। भाइयों के बीच टकराहट का क़िस्सा है। अउर रामायण जो है, भाई की चुगलख़ोरी में रावण की बुनियादी बरबादी है।" मौलवी साहब की बात भले जो हो, हमने अपनी आँखों से एडिशनल मुंसिफ़ के दरवाज़े से लेकर हाईकोर्ट की दहलीज़ तक भाइयों की आपसी तकरार में कई ख़ानदानों को तबाह होते देखा है। अदना रामू नाई को भी निजात नहीं। रामू नाई की भी अपने भाई से तकरार थी।

गाँववाले जानते हैं कि रामू पर जमादार ख़फ़ा है। उसके कान में भी ख़बर आई। रामू को सबक सिखाने के लिए एक दिन अकेले में जमादार के पास हाज़िर होकर यह बात बताई गई कि रामू चोरी-छिपे अपने घर नमक बना रहा है। जमादार बड़े खुश हुए। उन्हें कुबेर का भंडार मिल गया। एक पंथ दो काज। यानी बदमाश रामू को सबक मिल जाएगा और पहला मामला दायर हो जाएगा।

अगले दिन पहले पहर में जमादार वर्दी पहनकर प्यादे के साथ रामू के द्वार पर हाज़िर हो गए। जमादार को सही सूचना मिली थी। रामू अहाते से घिरे अपने घर के आँगन में आधा मटका लोना पानी लेकर धान उबालने वाले चूल्हे में नमक बनाने वाला था। अचानक जमादार आँगन में उसके सामने खड़े हो गए। रामू पारखी आदमी था। जमादार को देखते ही सारा मामला समझ गया। जल्दबाज़ी में सारा पानी नाली में उड़ेल दिया जमादार स्वयं देख रहे हैं, फिर क्या चाहिए? रामू को गिरफ़्तार किया गया। नमकवाला पानी जहाँ उड़ेला गया था, वहाँ से आधा मटका मिट्टी रामू के हाथों भरवाई गई। सड़क पर रामू को खड़ा कर दिया गया। जमादार के आदेश से प्यादे ने रामू के हाथों में बँधी हुई रस्सी पकड़े गाँव की बीच सड़क पर खींचते हुए पुलिस चौकी की ओर चलना शुरू कर दिया। जमादार के हुक्म से तीन गाँवों के तीन प्यादे भी हाज़िर हुए। उनकी निगरानी में रामू बँधी हुई हालत में चोर की तरह पुलिस चौकी में सारा दिन पड़ा रहा।

पूरे गाँव में हलचल मची। शहरी इलाक़े में ऐसी बातों पर किसी का ध्यान नहीं पड़ता, लेकिन देहात में यह एक बड़ी घटना है। चारों ओर ख़बर फैल गई कि पुलिस जमादार नमक चोरों को पकड़ने लगा है। लोगों के काम-धंधे ठप्प हो गए, उनका सुख-चैन भी जाता रहा। लेकिन गाँव के बच्चे बड़े खुश हैं। शिक्षक पाठशाला छोड़ चले गए हैं। वहाँ पहुँच कर हुल्लड़ मचाते हैं तो प्यादा उन्हें चिल्लाकर, धमका कर भगा दे रहा है। डर के मारे बच्चे लौट आते हैं और फिर धीरे-धीरे भागवत घर पहुँच जाते हैं। यह उनके लिए खेल जैसा था। औरतें काम-धंधे छोड़ ख़ामोश बैठी हुई हैं। गाँव पर मानो वज्रपात हुआ हो। आज रामू पकड़ा गया, पता नहीं कल किसके सिर पर गाज गिरे। नमक बनाना तो घर-घर में होता है। लेकिन, सरकार से मुक़ाबला कैसे हो? उस दिन के दोपहर का खाना शाम को ही हो पाया। रामू के घर तो चूल्हा न जला।

गाँव के नुक्कड़ पर बरगद के नीचे आठ-दस मुखिया लोग विचार-विमर्श करने बैठ गए। तमाम चर्चाएँ और वाद-विवाद के बाद तय हुआ कि चाहे जैसे

भी हो, जो भी ख़र्च हो रामू को छुड़ाना होगा। लोगों की सलाह के मुताबिक गाँव के पुरोहित बुज़ुर्ग ब्राह्मण नारायण मिश्र ने एकांत में जमादार से मुलाक़ात की। जमादार के अभिवादन से पहले ही मिश्र जी ने थोड़ा झुककर दोनों हाथ जोड़े 'अश्वत्थामा बली व्यास हनुमान विभीषण' श्लोक सुनाकर उन्हें दीर्घायु, गोपलक्ष्मी, धनधान्य आदि की निश्चित प्राप्ति का आशीर्वाद देते हुए उनके पास बैठ गए। जमादार भी अनुभवी, मिश्र जी के आगमन का मतलब समझ गए। मिश्र जी के साथ यूँ तमाम तरह की बातचीत करते थे लेकिन आज उनकी ज़ुबान नहीं खुली। ख़ामोश तथा गंभीर मुद्रा में हाकिम की तरह बैठे रहे। मिश्र ने थोड़ी देर बैठने के बाद जमादार की तारीफ़ शुरू कर दी कि वे चार गाँवों के कर्ता-धर्ता व विधाता हैं। सबकी मान-मर्यादा उन्हीं के हाथ है। वे मार सकते हैं, तार सकते हैं। जमादार मौन हैं। मिश्र जी भी थोड़ी-बहुत दुनियादारी जानते हैं। दो-चार बार जम्हाई भरने के बाद चारों ओर निगाहें डालकर इशारे से कहा कि रामू को छोड़ दिया जाए तो दस रुपये मिलेंगे। (कोई दूसरा मामला होता तो जमादार कुछ करते। हम इसका अनुमान लगा सकते हैं। लेकिन, यह रामू की बात जो ठहरी। बदतमीज़ ने कोई मामूली काम नहीं किया है, इज़्ज़त में बट्टा लगाया है) जमादार ने ख़ूब ख़फ़ा होकर लाल आँखों से मिश्र की ओर ताकते हुए कहा–"तू भी कैसा गोसाई है रे? मुझे और हाकिमों की तरह समझ लिया?" मिश्र जी एकबारगी दब गए। सरकारी आदमी है, अरे बाप रे, न जाने क्या कर बैठे? थोड़ी देर बैठने के बाद एक उसाँस भरते हुए धीरे से उठकर चले गए।

अगले दिन अलसुबह रामू के दाहिने बाज़ू में रस्सी बँधी हुई थी, बाईं ओर कंधे पर चोरी के नमक का मटका। प्यादा शंकु मलिक के दाएँ कंधे पर लाठी और बाएँ हाथ में रामू को बाँधी गई रस्सी का सिरा। जमादार अपनी वर्दी पहनकर सीना ताने गाँव की बीच सड़क पर सदर कचहरी के लिए रवाना हुए। जमादार के मन में काफ़ी फुरती है, ज़ल्दी-ज़ल्दी क़दम डाल रहे हैं। प्यादा कुछ पिछड़ जाए तो उसे धमकाते हुए कहते हैं–"ज़ल्दी चल, कचहरी में पहले हाज़िर होना पड़ेगा।"

मक़ामपुर से सदर कचहरी क़रीब सात कोस दूरी पर है। लेकिन जमादार मुलज़िम के साथ दिन के दो बजे कचहरी पहुँच गए। हमें न मालूम मन के साथ पैर के इस संबंध के बारे में। भले ही मनोविज्ञान शास्त्र में हम कोरे हैं, फिर भी दार्शनिकों से पूछने की ज़रूरत नहीं है। हमने अनुमान लगा लिया कि जमादार के पैरों की चुस्ती असल में उनके मन की चुस्ती है। जमादार ने

कचहरी में पहुँचकर परिचित व अपरिचित अमला-हाकिमों का अभिवादन किया। पेशकार को सलाम ठोंककर असामी के मुक़दमे के बारे में संक्षेप में सब कुछ बता दिया। मजिस्ट्रेट के समक्ष रपट पेश की गई। असामी को नाज़िर के दफ़्तर से हवालात में भेजा गया। बरामद माल नाजिरख़ाने में रखा गया। मामला डिप्टी मजिस्ट्रेट मौलवी अब्दुल मियाँ के सामने पेश किया गया। आगामी पाँच तारीख़, शुक्रवार को सुनवाई होगी।

कचहरी से लौटकर जमादार पेशकार के यहाँ ठहरे, प्यादा भी ठहरा। मामले की तारीख़ चौथे दिन है। आज का दिन तो गुज़र गया, तारीख़ के दिन मामला पेश होगा। बीच में बस दो दिन। पुलिस चौकी चलकर लौटना आसान नहीं है। इसलिए पेशकार के मकान में जमादार ठहरे हुए हैं। बिना वजह प्यादे को दस बार बुलाते और हाकिम की सेवा के लिए कुछ फ़रमाते। मतलब यह कि लोग जानें कि कोई उनके अधीन है। उसके बुलाने पर प्यादा 'जी हुज़ूर' कहता है, लोग सुनें।

रात का लगभग पहला पहर है। पेशकार अपनी कोठरी में चटाई पर बैठे हुए हैं। सामने दीवट पर मिट्टी के दिए में बाती टिमटिमा रही है। पेशकार के सामने मुक़दमे के काग़ज़ात बिखरे पड़े हैं। पेशकार बड़े जतन से उनकी सूची बनाकर तरतीब से रखने में व्यस्त हैं। जमादार कीनू रामसिंह बरामदे में पालथी मारकर ख़ामोश बैठे हैं। प्यादा ओलती के नीचे बैठकर जमादार की ओर ताक रहा है, न जाने कब क्या हुक्म मिले। रसोई बनाने वाला लड़का चूल्हा जलाने में लगा हुआ है। चूल्हे में पूला झोंककर फूँक रहा है। ठीक उसी वक़्त आवाज़ आई—"हरिबोल, हरिबोल, पेशकार बाबू का मंगल हो, जय हो, जय हो।"

पेशकार आवाज़ पहचानते थे। घर से निकले। 'पधारें रथ महोदय, पधारिए।' कहकर उन्होंने प्रणाम किया। गाँव का कुशल क्षेम पूछा। अतिथि का नाम है पुरुषोत्तम रथ। पेशकार बाबू के पुरोहित। एक ही गाँव के हैं। रथ जी का बेटा भीकू पेशकार बाबू का रसोइया है। बेटे से मिल लेंगे, दुकान-बाज़ार भी कर लेंगे। कमाऊ यजमान है तो कुछ पाने की भी उम्मीद बनी रहती है। इसलिए रथ जी महीने में एक-दो बार शहर आ जाते हैं। पेशकार से बातचीत पूरी होने के बाद रथ महोदय ने इधर उधर नज़र दौड़ाई। आज का नज़ारा कुछ नया-सा लगा। इसके पहले वे जब भी पहुँचा करते थे तत्काल कीनू पाँव पड़ता और हाथ-पाँव धोने के लिए लोटाभर पानी रख देता। लेकिन आज उठ क्यों न रहा है? उनसे रहा न गया। एक हाँक लगाई—"अरे कीनू, ऐ कीनू!" लेकिन कीनू ने कोई जवाब नहीं दिया। ब्राह्मण का मन पीतल के पतले तवे के समान होता

है, जल्दी गरम। गुस्से में बुलाया–"रे ए कीनू।" रथ जी का क्रोध नाजायज़ है। उनके आने की ख़बर कीनाराम सिंह को है नहीं। इसे हम दृढ़ता के साथ कह सकते हैं। सिंह साहब के मन में तमाम परेशानियाँ खलबली मचा रही थीं। कैसे रामू जेल जाएगा, चौकी में पहुँचकर किस तरह नया तरीक़ा अपनाएँगे, सरकार से नेकनामी कैसे हासिल होगी, दो-चार और मामले दायर हो जाएँ तो जमादारी कैसे हासिल होगी, ऐसी चिंताओं से वे परेशान हो रहे हैं। मनोविज्ञान और दर्शन के पंडितों का मानना है कि अगर मन किसी मामले में डूबा हो तो अन्य विषयों का ध्यान नहीं रहता। सिंह का मन अब एक नहीं चार-पाँच विषयों में तल्लीन है, इसलिए वे रथ महोदय की आवाज़ सुन न सके। अतः उन्हें दोषी ठहराया नहीं जा सकता। लेकिन, इस बात को बेचारा ब्राह्मण समझ नहीं सका। फिर से हाँकने लगा–"अरे कीनू, कीनू। एक लोटा पानी ला, पैर धोऊँगा।" सिंह अचकचाए रथ महोदय की ओर देखने लगे, फिर प्यादे पर नज़र पड़ी। "अरे कीनू, बोला न एक लोटा पानी ला, पैर धोऊँगा।" ज़रूर प्यादे ने सुना है। रथ जी का क्रोध अकारण है तो सिंह जी का क्रोध उतना ही सकारण है। सिंह ने रोष भरे स्वर में जवाब दिया–"कैसे अक्खड़ गुसाईं हो, थोड़ा भी सब्र नहीं कर सकते?"

"क्या बोला? क्या बोला? अक्खड़?" रथ साहब की तो टेंट खुलने को है। पेशकार सब सुन रहे थे। दौड़ते हुए पहुँचकर उन्होंने सँभाल लिया। पतले तवे की गर्मी देर तक नहीं टिकती। रथ जी हाथ-पैर धोकर पेशकार के बिस्तर पर बैठे। मन की राहत के लिए टेंट से नासदानी निकाली। पेशकार से बातचीत शुरू की। इधर-उधर की बातों के बाद कीनू नाई के कांस्टेबल बनने की बात चली और चोर को चालान करने पर भी चर्चा हुई। सुनने के बाद रथ जी ने कहा–"अच्छा, यही बात है? पुनर्मूषकोभव।"

जब से रामू का चालान हुआ है तब से गोपालपुर जैसे गाँवों में सन्नाटा छाया हुआ है। काम-काज ठप्प पड़े हैं। किसी को अमन-चैन नहीं। प्रति घर से चंदा इकट्ठा किया गया। गोपाल घड़ेई रुपये-पैसे लेकर कमर कसने लगे। रामू के मौसेरे भाई मक्रा और हग्रू भी उसके साथ चले। गोपाल घड़ेई दुनियादारी समझते हैं। आसपास के गाँवों में उनकी पहचान है। नमक बनाने के तीन चूल्हे थे उनके। चार जोड़ी बैलों की खेती के मालिक हैं। सैकड़ों रुपयों का लेन-देन होता है। शहर आते-जाते हैं तो क़ानून भी जानते हैं। फिर भी जब वे रवाना हुए उस समय चार बड़े बुज़ुर्ग कई तरह के उपदेश देते हुए आधा कोस तक उनके साथ चलते रहे। विदा करते वक़्त मास्टरजी वनमाली ओझा ने

कहा–"जाओ घड़ेई सुत, श्री मधुसूदन, श्री मधुसूदन जाप करते जाना। फिर से मुहूर्त निकाला है, उसमें सफलता मिलेगी ही।"

आज मामले की तारीख़ है। जेल के असामी चालान होकर नाजिरखाना लाए गए हैं। गोपाल घड़ेई ने मुट्ठी गर्म करवाई। वह हाजत के दरवाज़े तक पहुँच गए। दाहिने हाथ के अंगूठे और सिर को अनेक प्रकार से इशारा कर रामू से कुछ कहना चाहते हैं। रामू हाजत में रहकर घबरा गया था। अगर उसे उसी हालत में हाकिम के पास लाया जाता तो पता नहीं क्या होता। लेकिन रामू भले देहात का नाई हो लेकिन दौरे पर आने वाले सैकड़ों हाकिमों की हजामत कर चुका था। इसी काम में उसके केश पक चुके थे। घड़ेई को देख उसमें हिम्मत बँधी। सिर-हाथ हिलाकर उसने घड़ेई के इशारों का जवाब दिया। घड़ेई के अपना काम पूरा करके चार-छह हाथ की दूरी पार करते ही कांस्टेबल ने आवाज़ लगाई–'तफ़ावत, तफ़ावत'। यानी नाजिर को पता चले कि वह बाहरी लोगों को हाजत के असामी के पास फटकने नहीं दे रहा है। घड़ेई ने नाजिरख़ाने से लौटकर वकील अब्दुल शोभान ख़ान के पास असामी की ओर से वकालतनामा पेश किया।

आला दर्ज़े के डिप्टी मजिस्ट्रेट मौलवी अब्दुल्ला ख़ाँ के इजलास में इस मामले को सबसे पहले पेश किया गया। मौलवी साहब का थोड़ा-सा परिचय देना ज़रूरी है। हम अकारण यह परिचय नहीं दे रहे हैं। आप इसे समझ जाएँगे। आजकल सरकार जिस तरह से हाकिमों को बिल्ली के बच्चों की तरह चारों ओर घुमाकर मार रही है, ऐसा पहले न था। एक-एक हाकिम एक-एक ज़िले में आठ-दस साल तक रह जाते थे। ख़ाँ साहब भी पिछले लगभग दस साल से इसी ज़िले में हैं। घर-द्वार, बाग़-बग़ीचे बना चुके हैं। शहर में उनकी बड़ी पूछ है। देहात में वे डिप्टी के नाम से प्रसिद्ध हैं। वकील और मुख़्तारों का कहना है कि मौलवी के न्याय में पानी भी चू नहीं सकता। लेकिन हम मौलवी का एक बहुत बड़ा दोष या गुण भी जानते हैं। वे सदा पुलिस पर नाराज़ रहते हैं। पता नहीं कैसे उनके मन में यह धारणा बँध चुकी है कि पुलिस बेकसूरों को जान-बूझकर चालान कर देती है। इसलिए चालान के मामले में कहीं भी फाँक हो तो वे असामी को खलास कर देते।

हाकिम के इजलास में बैठते ही पेशकार बाएँ हाथ में काग़ज़ात और दाहिने में दवात-क़लम लेकर इजलास के सामने की बेंच के पास पहुँचा। बेंच पर काग़ज़ात रखे। हाकिम के सामने सिर झुकाते हुए सलाम करके बेंच पर बैठ गए।

हाकिम–'मामला पेश करो।'

पेशकार–"हुजूर, पहला मामला निमकी-पुलिस का चालान है। सरकारी मुदई कांस्टेबल कीनाराम सिंह। मुद्देलेह रामू नाई।"

चपरासी ने ऊँची आवाज़ में तीन बार पुकारा–"कांस्टेबल कीनाराम हाज़िर हो।" कीनाराम सिंह हाकिम को सलाम ठोंक कर गवाह के कटघरे में खड़ा हो गया। नाजिरख़ाने के कांस्टेबल ने असामी को लाकर हाज़िर कराया।

पेशकार के मुताबिक़ कीनाराम सत्यपाठ करके इज़हार करने लगे। हाकिम ने मुद्दई का नाम, पिता का नाम, उम्र आदि दस्तूर के मुताबिक़ लिखा। मुद्दई ने मामले का पूरा विवरण हाकिम के सवाल के अनुसार बयान किया। ज़बानबंदी के बाद हाकिम ने मुद्दालेह के वकील से पूछा–"जिरह करेंगे?"

वकील ने सलाम करके कहा–"हाँ, हुजूर।"

वकील का सवाल–"असामी ने जो नमक पानी उड़ेल दिया, किसने देखा है?"

मुद्दई का जवाब–"मैंने देखा है, उसने मटके में पानी भरकर चूल्हे के पास..."

वकील–"बस-बस, मैं जो पूछूँगा उसका जवाब दो, ज़्यादा मत बको। मैं पूछ रहा हूँ कि किसी और ने देखा है या नहीं? 'हाँ' या 'ना' में जवाब दो।"

कांस्टेबल का जवाब–"ना, किसी और ने नहीं देखा है।"

वकील का सवाल–"यह कैसे पता चला कि उसने लोना पानी उड़ेला था या मामूली पानी?"

कांस्टेबल का जवाब–"जासूस से ख़बर मिलने के बाद मैंने पकड़ा है।"

वकील का सवाल–"हाँ पकड़ा तो है लेकिन यह कैसे मालूम कि नमक का पानी उड़ेला गया था।"

कांस्टेबल का जवाब–"मैंने मिट्टी को चख कर देखा, नमकीन थी।"

वकील–"अब एक बार चखो।"

कांस्टेबल ने बरामद मिट्टी में से तनिक मटके से लेकर चखा। कहा–"देखिए, नमकीन लग रही है।"

वकील–"दुबारा थोड़ा ज़्यादा चखो।"

कांस्टेबल ने तनिक गुस्से में आकर मुट्ठी भर मिट्टी मुँह में भर दी। कटघरे से निकल कर थू-थू करके बाहर फेंक आए। कठघरे में आकर वकील से ख़ूब हिम्मत के साथ कहा–"देखो, मिट्टी काफ़ी नमकीन है।"

वकील मुँह पर रूमाल रखकर हँस पड़े, फिर कुछ न पूछा।

मुद्दई की ओर से गवाह प्यादा शंकू मलिक का नाम पता हाकिम ने

लिखा। इसके बाद पेशकार ने उसका सत्यपाठ कराया।

सवाल–"कांस्टेबल ने जब असामी को गिरफ़्तार किया, उस वक़्त क्या तू उनके पास था?"

शंकू मलिक का जवाब–"हाँ, मैं उनके पास था।"

सवाल–"असामी रामू ने नमक बनाने के लिए मटके में लोना पानी रखा था, क्या तू इसे जानता है?"

जवाब–"हाँ, मुझे मालूम है।"

सवाल–"असामी ने नाले में पानी उड़ेल दिया था, क्या तूने देखा है?"

जवाब–"जी, हुजूर। हाँ, हाँ रामू ने पानी उड़ेल दिया था। वह नमक बनाता है।"

मुद्दालेह के वकील का सवाल–"रामू जब पानी उड़ेल रहा था, उस वक़्त उसके पास खड़े हो कर तुमने देखा था या नहीं?"

जवाब–"नहीं, मैं सड़क पर खड़ा था। जमादार कह रहे थे, मैंने सुना है।"

हाकिम ने कीनाराम सिंह से पूछा–"तुम्हारा कोई और गवाह है?"

कीनाराम सिंह ने कहा–"मैं सरकारी पुलिस हूँ। खुद अपनी आँखों से देखा है। फिर गवाह की क्या ज़रूरत है?"

हाकिम ने यह सुनकर मुस्कान भर दी।

मामले को पुष्ट करने के लिए गवाह ज़रूरी है, कीनाराम सिंह को यह पता न था। इसके बाद असामी का जवाब लिया गया।

असामी रामू नाई का नाम पता हाकिम ने लिखा। इसके बाद उस पर लगाए गए इलज़ाम के बारे में संक्षेप में बताया गया। फिर हाकिम ने पूछा–"तू दोषी है या निर्दोष?"

जवाब असामी राम नाई का–"मैं निरपराध हूँ साहब।"

हाकिम–"तो तुझे पुलिस ने चालान क्यों किया?"

जवाब–"हुजूर! मैंने जमादार की बेगार खटने से इनकार कर दिया। इसलिए वे मेरे हाथों में आधा मटका मिट्टी रखकर मुझे बाँधकर ले आए हैं।"

सवाल–"तुझे कैसे बाँधकर ले आए?"

जवाब–"हुजूर मैं अपने घर सोया हुआ था। घर में घुसकर मुझे ख़ूब मारा और बाँधकर ले आए।"

सवाल–"दिन में सोया हुआ था तू?"

जवाब–"जी मुझे बुख़ार था। नहीं, नहीं मेरे पेट में दर्द था। इसलिए सोया हुआ था।"

सवाल–"सफ़ाई में तेरा कोई गवाह?"

असामी रामू नाई जवाब देने के पहले वकील तत्काल बोले–"जी हुज़ूर! दो गवाह हैं।" असामी की ओर से पहला गवाह मकर नाई उर्फ़ मक्रा के नाम-पता वाला फ़ॉर्म भरकर पेशकार ने हलफ़ दिलवाया।

सवाल–"तुझे इस मामले में क्या मालूम है?"

मक्रा का जवाब "जी, मुझे पता है। रामू ने नमक नहीं बनाया है। उसे पाख़ाना हो रहा था। घर में सोया हुआ था, फिर नमक कब बनाया उसने?"

मुद्दालेह के वकील का बयान–"तुम गाँववाले नमक कहाँ से लाकर खाते हो?"

जवाब–"हुज़ूर, हाट से बराबर विलायती नमक ख़रीदकर खाते हैं।"

सवाल–"रामू हाट से ख़रीदता है या नहीं?

जवाब–"बराबर।"

सवाल–"ये बराबर क्या है रे? अरे, रामू हाट से नमक ख़रीद लाता है, क्या तूने आँखों से देखा है?"

जवाब–"जी, रामू बराबर हाट से नमक ख़रीदकर लाता है, मैंने अपनी आँखों से देखा है।"

सवाल–"कांस्टेबल रामू पर नाराज़ था या नहीं?"

जवाब–"जी हुज़ूर, बराबर। रामू ने जमादार के जूठे बरतन माँजने से इनकार कर दिया। इसलिए आठ-दस दिन से उस पर काफ़ी नाराज़ थे। जेल भेजने की धमकी देते थे। रामू को बाँधकर ख़ूब मारा। रामू 'बाप रे, मैया री' कहकर ख़ूब चिल्ला रहा था।"

सरकारी कोर्ट इंस्पेक्टर का सवाल–'रामू को कांस्टेबल का मारना तूने देखा है?"

जवाब–"जी नहीं, मैंने सुना है।"

दूसरा गवाह हग्रू सामल ने पहले गवाह की तरह सारा बयान दिया।

मिसिल तैयार हो जाने के बाद असामी के वकील अब्दुल शोभान खाँ की ओर मुख़ातिब होकर जो भाषण किया था उसका सार मर्म है : वकील का वक्तव्य–

1. हुज़ूर यह मामला झूठ और फ़रेब का है। मुद्दई कीनाराम सिंह नाई है, असामी भी नाई जाति का है। असामी ने उसके जूठे बरतन नहीं माँजे। इसलिए वे काफ़ी नाराज़ थे। असामी को क़ाबू में रखने और परेशान करने के मक़सद से यह मामला खड़ा किया गया है।

2. मिसिल से साफ़ ज़ाहिर है कि मुद्दालेह हाट से नमक खरीदता आया है। इसलिए उसे नमक बनाने की ज़रूरत नहीं है।
3. गिरफ़्तारी के वक़्त असामी बीमार की हालत में बिस्तर पर पड़ा हुआ था। बीमार आदमी कभी नमक बना नहीं सकता।
4. सरकारी प्यादा कांस्टेबल के साथ था, असामी नमक बना रहा होता तो उसने भी देखा होता।
5. बरामद हुई मिट्टी जो पेश की गई है वह मुद्दालेह द्वारा नाली के पास से लाई गई है। यह सच भी है। उस मिट्टी के नमकीन होने का कारण यह है कि देहात में स्त्रियाँ रात को डर के मारे बाहर नहीं निकलतीं। मिट्टी पिछवाड़े की नाली के पास की है...आदि, आदि। रोज़-रोज़ के उस पानी से मिट्टी नमकीन होगी ही। इसकी सच्चाई की परख हेतु मुद्दई कीनाराम एक बार फिर मिट्टी चखें और सूँघें तो पता चल जाएगा कि वैसी घिनौनी बू आ रही है या नहीं।"

वकील का वक्तव्य सुनकर हाकिम ठहाके लगाने लगे। पेशकार हाकिम की ओर कागज़ात ओट करके ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे। अन्य भी मुँह पर कपड़ा रखकर हँसने लगे। इसके बाद खड़े होकर बोले—"हुज़ूर, माई-बाप, असामी निहायत ग़रीब और बेकसूर है। उसे रिहा किया जाए।"

हाकिम ने दो फ़र्द फुलस्केप कागज़ पर लंबी राय दी। वकील के बताए गए कारणों को अपनी राय में शामिल कर लिया। असामी को बरी किया। ऊपर से राय में यह भी उल्लेख कर दिया कि मुद्दई कीनाराम सिंह पुलिस के काम हेतु अयोग्य हैं।

राय की एक नकल श्रीमान मजिस्ट्रेट साहब की खिदमत में पेश की गई। इस कार्यवाही में कीनाराम का नौकरी बचा पाना मुश्किल था। लेकिन पेशकार ने हाकिम को समझाया—"हुज़ूर, पुलिस विभाग में यह नया आया है। गाँववाले मिले हुए हैं। सभी बदमाश हैं। सदा नमक की चोरी करते हैं। सरकार का नुकसान करते हैं। पुलिस को डिसमिस करने से सरकारी नमक बरबाद हो जाएगा। यह कांस्टेबल बड़ा होशियार है। चालाक भी। गाँववालों की साज़िश के कारण यह मामला साबित नहीं हो सका।" हाकिम ने कुछ चेतावनी देकर कानू को छोड़ दिया।

हमारे जमादार साहब बड़ी मुस्तैदी से असामी को देहात से लेकर पहुँचे थे। मामले का हाल देखकर उनकी कमर टूट गई। मामूली आदमी ऐसा ही होता है। थोड़ी-सी खुशी में फूला न समाता, थोड़े से कष्ट पाकर टूट जाता है।

कचहरी से लौटे सिंह पेशकार के मकान के एक कोने में अंगोछा बिछाकर फ़ौरन लेट गए। बीमारी का बहाना बनाकर रात को कुछ खाया भी नहीं। हमें इसकी सही जानकारी नहीं है कि रात को उन्हें नींद आई कि नहीं। लेकिन, पौ फटने से पहले ही प्यादे को लेकर पुलिस चौकी की ओर रवाना हो गए। दूसरे दिन वे दिन ढलने के काफ़ी पहले पहुँच जाते थे। लेकिन आज पहुँचे रात का पहला पहर बीतने के बाद ही। रसोई का कोई इंतज़ाम न हुआ। प्यादे ने गाँव से कुछ नाश्ता मँगवा लिया।

सुबह जमादार चौकी के बरामदे में बैठे मन-ही-मन सोच रहे हैं कि गाँववाले अब उनका अनादर करेंगे, कोई-कोई मज़ाक़ भी उड़ाएँगे। किसी को आँख उठाकर देख नहीं पा रहे हैं। गाँव के मुखिया लोगों ने पूर्ववत् उनका अभिवादन किया। यद्यपि जमादार के रात में पहुँचने की ख़बर उन्हें थी फिर भी उन लोगों ने बहाना किया कि वे जान न सके। रात को उपास रहना पड़ा, इसलिए खेद प्रकट किया। फ़ौरन उनकी रसोई का इंतज़ाम करवाया।

वक़्त यूँ ही गुज़र जाता है। जमादार पहले की तरह गाँव का दौरा नहीं कर रहे हैं। आज भी पाँच-सात लोग अपना काम निपटाने के बाद शाम को उनके साथ बैठते हैं। इधर-उधर की तमाम बातें होती हैं। ओझा जी पहुँचते हैं तो कुछ छंद बाँच लेते हैं। लेकिन अब दोनों पक्ष चिंतित हैं, सजग भी। जमादार तमाम उपाय सोच चुके हैं, कोई कूल-किनारा नहीं रहा है। गाँववालों ने एकांत में बैठकर सोचा कि हाँ, रामू तो रिहा होकर आ गया, लेकिन अब कृपा किया जाए? सरकार की पुलिस दबोचने लगी है। अब पार कैसे पाया जाए? रामू के मामले में कुल ख़र्च आया सत्ताइस रुपये चौदह आने दो पैसे। आइंदा कोई मामला हुआ तो रुपये आएँगे कहाँ से? इस बार चंदे के रुपये जैसे वसूले गए, वह मन ही जानता है। रुपये हैं भी किसके पास? एक दिन आधी रात तक गोपाल घड़ेई के बरामदे में बैठकर लोगों ने विचार किया। अंत में ओझा मास्टर ने उपाय सुझाया तो सभी सहमत हुए। तय हुआ कि कल खुद मास्टरजी जमादार के सामने प्रस्ताव रखेंगे।

साँझबाती जल चुकी है। जमादार भागवत घर में बैठे हुए हैं। प्यादा भी नहीं है। किसी को बुलाने गया है। ओझा मास्टरजी हौले-हौले जा पहुँचे। जमादार को अभिवादन कर उनके नज़दीक जा बैठे। निहायत एकांत। आस-पास कोई नहीं। इधर-उधर की दो-चार बातें करने के बाद मास्टरजी इधर-उधर ताक कर दो-चार बार गला खखार कर एक बार जम्हाई लेते हैं। फिर उन्होंने फ़ौरन प्रस्ताव रखा। प्रस्ताव का सारांश था–''जमादार का ख़र्च गाँववाले उठाएँगे।

इसके अलावा मासिक पान-ख़र्च के लिए दो रुपये और हर महीने एक नमक चोर असामी पकड़वा देंगे।"

जमादार को मानो करोड़ों की संपत्ति मिल गई। तत्काल राज़ी हो गए। तमाम दुश्चिंताओं से मुक्त हो गए।

इसके अगले दिन चारों गाँवों के मुखिया लोगों की सभा हुई। तय हो गया कि चारों गाँव मिल-बाँट कर जमादार का ख़र्चा उठाएँगे। इसके सिवा एक पासी के हाथ में कुछ नमक देकर चोरी के नाते उसे पकड़वा देंगे। (हालाँकि उस पासी की सहमति ले ली जाएगी) वह पासी जब तक जेल में रहेगा तब तक उसके बाल-बच्चों का सारा ख़र्च, अन्य परेशानियाँ गाँववाले उठाएँगे।

काम ख़ूब चलने लगा। जमादार खाना-पूरी के लिए दौरे पर निकलते। अक्सर चौसर खेलते, गाँव में घूमते और ओझा मास्टरजी से पुराण सुनकर उत्तम भोजन के बाद डकार छोड़ते। दो-चार मामले भी चालान कर चुके हैं। मामले साफ़ साबित हुए हैं। असामी को सज़ा मिल चुकी है।

"यों ही बढ़ता है ख़ूब विधर्मी वित्त
डूबता है पर मूल सहित।"

जमादार ने मज़े से ख़ूब रुपये कमाए। 'राजा पश्यति कर्णभ्या'। यानी राजा कानों से देखते हैं। न्याय कब तक छिपा रहता? सरकार के कान तक बात जा पहुँची। इस बर्ष लाट साहब के दरबार से नमक की जो वार्षिक रिपोर्ट निकली, उसमें ठगी का यह मामला साफ़ नज़र आ रहा है। ज़िला हाकिम भौचक्का रह गए। काफ़ी चौकन्ने हुए। वे ताक में रहे। लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला।

पुलिस की इस चाल को पकड़ने के लिए ज़िला हाकिम पूरी कोशिश में रहे। लेकिन, हुआ कुछ नहीं। भला कैसे करते, देहात के चौकीदारों से लेकर सदर के अभिलेखापाल तक सब चोर हैं। "चोर-चोर मौसेरे भाई, जो मिले सो मिल बाँटकर खाएँ।" न कोई झमेला, न झंझट। काम चल रहा है बड़े मज़े से। नमक चुराने वाले दोष क़बूलते हुए ख़ूब जेल जा रहे हैं। पुलिस का कांस्टेबल गाँव मे पहरा दे रहा है तो दूसरी जाति के लोग नमक कैसे चुरा सकते हैं?

आज सदर कचहरी में बड़ी भारी हलचल मची है। अमला-फैला, मुवक्किल सबकी ज़ुबान में एक ही बात। बरगद के नीचे मुखारों में चहल-पहल कुछ ज़्यादा है। मामला क्या है? पता चला कि नमक बनाए जाने वाले इलाके के पुलिस कर्मचारियों की ठगी पकड़ने के लिए सदर से जासूस-पुलिस भेजी गई थी। कुछ महीनों से भेष बदलकर देहातों में घूम रही थी। कुछ पुलिस कांस्टेबल की ठगी को प्रमाणित करके गवाह और सबूत के साथ मुलाज़िमों को चालान

कर दिया गया है। मुलज़िमों में कौन हैं? हमारे कीनाराम सिंह जी हैं। मामले की ख़ूब तहक़ीक़ात हुई। मुलज़िमों के मामलों की सारी बातें लिखने से क्या फ़ायदा? अंत में मजिस्ट्रेट साहब का फ़ैसला सुनाया गया–''कांस्टेबल कीनाराम सिंह को कड़ी मेहनत के साथ दो महीने की क़ैद की सज़ा और बीस रुपये का जुर्माना। जुर्माना नहीं भरें तो और तीन महीने की सज़ा।''

मजिस्ट्रेट साहब के हुक्म की तारीख़ से आज कम-से-कम छह महीने बीत चुके हैं। सुनने में आया है कि कीनू नाई चार महीने से गाँव में आकर पड़ा हुआ है। घर से निकलता भी नहीं। गाँववालों की निगाह से बचता है। कीनू ख़ूब पैसे कमाकर लाया था। ठहरा वह नाई। सैकड़ों रुपये उसकी औक़ात से ज़्यादा थे। बैठे-बैठे खाने से कुबेर की संपत्ति भी कम पड़ती है। पैसे की तंगी सताने लगी। कब तक घर में घुसा रहता? धीरे-धीरे बाहर निकला। मजूरी के सिवा कोई चारा नहीं। पेशकार ने नाराज़ होकर उसे बाहर निकाल दिया। हाकिम के यहाँ काम करने वाले, एक चोर को कैसे अपने यहाँ रहने देते? आफ़त का अँधेरा चारों ओर से दबोचना शुरू कर देता है। गाँव में मजूरी कैसे करता? पुरोहित जी ने पोथी खोलकर गाँववालों को सुना दिया है–''कीनू ने पासी ही नहीं, भंगी ही नहीं बल्कि जेलख़ाने में छत्तीस क़िस्म के शूद्रों के साथ भात खाया है। वह पतित है। अब उसे जो छुएगा, हुक्का-पानी पिलाएगा वह भी पतित कहलाएगा।'' कीनू बरबाद हो चुका है। दुख की कोई हद नहीं। दो महीने तक कीनू पुरोहित के द्वार पर गुहार लगाते बैठा रहा। कुल के लोग पुरोहित के सामने सिर पटक-पटक कर गंजे हो चुके हैं। पुरोहित दयालु हैं। दो महीने बाद गाँव के बरगद के नीचे सभा बुलाई गई। पुरोहित जी ने देखा पोथी-पत्रा, ''पच्चीस ब्राह्मणों को भोज और दक्षिणा, जाति-बिरादरीवालों के लिए तीन वक़्त का भोजन देना पड़ेगा।'' प्रायश्चित के दिन पुरोहित ने सभा में सबको सुनाकर कहा–''ब्रह्मशाप से यदुवंश का विनाश हुआ, स्वयं विष्णु उससे उबर न सके।''

कीनू के पास दो एकड़ ज़मीन थी और घर में थोड़े-से बरतन-भाँडे। सरकारी ज़ुर्माने के रुपये वसूलने के लिए पुलिस का जमादार सब कुछ नीलाम करके ले गया। सब कुछ ख़त्म हो गया। अब वह गाँव में मज़दूरी करके गुज़ारा करता है।

कीनू के साथ किसी की अनबन हो तो वह ठिठोली करके कहता है–''पुनर्मूषको भव।''

7.

डाक-मुंशी

सरकारी नौकरी में बहाल होने के बाद हरि सिंह देहात में कई छोटे-बड़े डाकघरों में काम कर चुके हैं। पिछले दस वर्षों से कटक सदर डाकघर में लगातार कार्यरत हैं। बढ़िया काम करने के चलते प्रोमोशन भी मिला है। अब वे हेड पिऊन है। माहवार तनख़्वाह नौ रुपये। कटक शहर में हर चीज़ ख़रीदनी पड़ती है। आग के लिए भी दियासलाई ख़रीदनी होती है। किफ़ायत से चलने पर भी महीने में पाँच रुपये से कम का ख़र्च नहीं आता। किसी भी तरह घर के लिए चार रुपये भेजने पड़ते। परिवार में पत्नी और आठ बरस का बेटा गोपाल है। देहाती जगह है। खींच-तानकर किसी तरह चार रुपये में गुज़ारा कर लेते हैं। इससे एक पैसा भी कम हुआ तो मुश्किल। गोपाल अपर प्राइमरी स्कूल में पढ़ रहा है। स्कूल में मासिक फ़ीस दो आने हैं। स्कूल फ़ीस के अलावा आज कोई किताब तो कल स्लेट या काग़ज़ ख़रीदने के लिए कुछ ज़्यादा ख़र्च आ जाता है। ऐसा ऊपरी ख़र्च आ गया तो बड़ी मुसीबत आ जाती है। कभी-कभार बूढ़े को भूखा रहना होता है। भले ही वे भूखे रह जाएँ, बेटे की पढ़ाई पूरी हो जाए।

एक दिन पोस्टमास्टर ने सर्विस बुक देखकर कहा–"हरि सिंह, तुम पचपन साल के हो गए। पेंशन लेनी पड़ेगी। अब और नौकरी नहीं कर सकते।" सिंह के माथे पर मूसल गिरा। क्या करे? घर-गृहस्थी कैसे चले? घर-गृहस्थी का जो हो, गोपाल की पढ़ाई रुक जाएगी तो? गोपाल के जन्म से ही सिंह के मन में एक बहुत बड़ी आशा पल रही है गोपाल देहात के डाकघर में सब-पोस्टमास्टर बने। कम-से-कम विलेज पोस्टमास्टर हो। लेकिन थोड़ी अंग्रेज़ी जाने बिना इतनी बड़ी नौकरी मिलना मुश्किल है। देहात में सुविधा नहीं है। कटक में साथ रखकर अंग्रेज़ी पढ़ाना होगा। नौकरी चली गई तो कितनी बड़ी उम्मीद से हाथ धोना पड़ेगा। हमेशा यही बात सोच-सोचकर शरीर काला पड़ने लगा है। कभी-कभी

रात को नींद नहीं आती। सोचते-सोचते रात गुज़र जाती है।

पोस्टमास्टर बाबू सिंह पर बड़े मेहरबान हैं। उनके घर मुकर्रर नौकर होने पर भी सरकारी काम निपटाने के बाद शाम को सिंह, बाबू के डेरे पर दो-चार काम कर आते। शाम को आरामकुर्सी पर लेटे-लेटे साहब अंग्रेज़ी अख़बार पढ़ते समय सिंह जिस ढंग से तंबाकू की एक चिलम भर देते, वैसा कोई दूसरा नहीं भर सकता है। एक दिन शाम को सिंह ने अच्छे ढंग से तंबाकू की एक चिलम भर कर सुलगा दी। बाबू के मुँह से इंजन की पाइप की तरह धुआँ भक-भक निकल रहा है। आँखें तनिक मुँदने लगी हैं। सिंह समझ गए कि यही सही वक़्त है। सिंह ने साहब के पैरों के नज़दीक प्रणाम करके हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक सविनय मधुर स्वर में धीरे-धीरे अपना दुखड़ा सुना दिया। गोपाल के बारे में अपनी संचित आशा के बारे में भी बताया। साहब की आँखें वैसी ही अधमुँदी दशा में थीं। धीर, गंभीर स्वर में बोले–"अच्छा, एक अर्ज़ी लिखकर ले आना। साहब को भरोसा था। क्योंकि पोस्टल इंस्पेक्टर या सुपरिंटेंडेंट साहब जब भी दौरे पर आते तो पोस्टमास्टर साहब के घर ठहरा करते थे। बड़े साहबों को खुश करने के लिए खाने-पीने का जो इंतज़ाम होना चाहिए, उसमें कोई कमी न होने देते। ऐसी रातों में पोस्टमास्टर साहब की हाँक हरि सिंह-हरि सिंह दसों बार सुनाई पड़ती। हरि सिंह पुराने आदमी हैं। उन्होंने तमाम हाकिमों की आवभगत की है। उन्हें मिज़ाज के बारे में पता है। वे जानते हैं कि किन हाकिमों को क्या पसंद है। उस दिन आधी रात तक सिंह को साहब के मकान में रहना पड़ता। क्योंकि ओड़िशा की भद्दी हवा के कारण कुछ साहब अचानक पीड़ित होकर उल्टी-पुल्टी कर लेते तो हरि सिंह सोडा, नमक, नींबू आदि पहुँचाकर उन्हें सँभालते। साहब लोगों के आराम से सो जाने के बाद सिंह आधी रात डेरे पर लौट कर खुद के लिए खाना पकाते।

हरि सिंह की दरख़्वास्त पर तगड़ी सिफ़ारिश करके उसे सदर भेज दिया। कुछ ही दिनों में एक्सटेंशन का हुक्म आ पहुँचा। सिंह अति प्रसन्न हो गए। इस खुशख़बरी को गाँव भी लिख भेजा। सब लोग उपस्थित सुख या दुख से विमोहित हो जाते हैं। भविष्य-विधाता उनके लिए क्या विधान रचता है, उधर एक बार भी निहारना उचित नहीं समझते। सिंह की इतनी बड़ी खुशी पानी के बुलबुले की तरह बिला गई। घर से ख़बर पहुँची कि गोपाल की माँ सन्निपात से ग्रसित है। बचने की उम्मीद नहीं है। सिंह ने पोस्टमास्टर साहब को पत्र दिखाया। साहब बड़े दयालु थे। तत्काल छुट्टी मंजूर कर दी। सिंह घर पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्हें जो देखना पड़ा, उससे उनकी आँखों की ज्योति जाती रही।

संसार अंधकारमय प्रतीत हुआ। बूढ़ी का अंतिम समय आ पहुँचा था। पति को निहारती रही। उसने अपने दोनों हाथ ऊपर उठाए, मानो प्रणाम कर रही हो। पति की चरणधूल पाने का इशारा किया। शायद इसके इंतज़ार में थी अब तक। सब कुछ ख़त्म हो गया। सिंह का असली घर ढह गया। उस घर के दो-चार असबाब जो बचे थे, उन्हें बेचकर बेटे को साथ लिए सिंह जी कटक लौट आए।

गोपाल माइनर का छात्र है। सिंह अब मुश्किल में हैं। पेंशनभोगी हैं, भारी तंगी में भी। घर के लोटा-बरतन बेच-बाचकर गुज़र-बसर हो रही है। नौकरी के दौरान पेट काट-कपट कर दो-चार आने बचाकर सेविंग्स बैंक में कुछ जमा किया था। माइनर की पढ़ाई में सब ख़त्म हो गया। सिंह को बड़ी उम्मीद है कि गोपाल पास हो जाएगा तो सारी मुसीबतें दूर होंगी। गोपाल भी कई बार भरोसा दिला चुका है, "बापू, धार-उधार करके मुझे पढ़ाओ, नौकरी करके सब चुका दूँगा।"

हरिसिंह की प्रार्थना दीनबंधु प्रभु भगवान ने सुनी। गोपाल माइनर पास हुआ। सिंह जी की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। वही पुराने मास्टर बाबू हैं, सिंह जी ने उनके ज़रिए काफ़ी निवेदन किया। ऊपर के हाकिमों की भी कुछ कृपा थी। गोपाल सीधे देहात के मक्रामपुर डाकघर में सब-पोस्टमास्टर के रूप में बहाल हुआ। वेतन मासिक बीस रुपये। अब सदर पोस्ट ऑफिस में चार महीने काम सीखने के बाद देहात में जाएगा।

हरि सिंह की ख़ुशी का आर-पार नहीं। प्रभु की ओर अपलक देख प्रणामपूर्वक कह रहे हैं–"धन्य है प्रभु तुम्हारी करुणा। दुखी की प्रार्थना सुनी।" नौकरी का समाचार पाने वाले दिन बूढ़े सिंह रात को ख़ूब रोये। हाय, आज बूढ़ी होती तो कितनी ख़ुश होती। उनके गोपाल को हाकिम की नौकरी मिली है। यह जानकर ख़ुशी से उछलती रही होती। हाय, अभागिन के नसीब में यह लिखा न था। ख़ैर, गोपाल तो हाकिम बन गया। प्रभु, गोपाल पर कृपा बनाए रखें।

गोपाल ने पहले महीने का वेतन बूढ़े के हाथ में दिया। बूढ़े की ख़ुशी का क्या कहना! पाँव ज़मीन पर नहीं पड़ते। बेटा हाकिम है। इतने सारे रुपये एक महीने में मिले। रुपये चार-पाँच बार गिनने के बाद टेंट में बाँधकर सो गए। अगले दिन तड़के बाज़ार दौड़े। जूता, कुर्ता, धोती ज़रूरत की चीज़ें ख़रीदी गईं। गोपाल अब हाकिम है ऐसा-वैसा कपड़ा कैसे पहने? जैसा देश वैसा भेष।

इधर गोपाल बाबू ऑफ़िस में पाँच बाबुओं के साथ मिलकर अंग्रेज़ी में

लिखा-पढ़ी करते हैं। हमेशा बाबुओं के साथ कारोबार। सभी कहते 'डाकमुंशी बाबू'। पूरा नाम गोपाल चंद्र सिंह। घर आकर देखते कि बूढ़ा मटमैला कपड़ा पहनकर काम में लगा हुआ है। गोपाल को लेकर सारी चिंताएँ। गोपाल क्या खाएगा, नहाने गया है, गीले कपड़े सूखे कि नहीं। बेटा काम करते-करते थक चुका है। पहले बूढ़े सिंह कभी-कभी हरिनाम लेते थे। कुछ धर्म-कर्म भी कर लेते थे। अब गोपाल बाबू के लिए सब कुछ भुला बैठे हैं। शायद भगवान यह सब देखकर बूढ़े पर ख़फ़ा हैं। मानो वह धमकाकर कह रहा हो, "अरे मूर्ख, यह क्या है? अच्छा, भुगतेगा।"

आजकल गोपाल बाबू का स्वभाव कुछ बदला-बदला-सा है। अब बूढ़े को देखते ही ख़ामख़ाह झुँझलाते हैं। मूर्ख है यह। अंग्रेज़ी नहीं जानता। मैला-कुचैला पहने रहता है। इसे बापू कहूँ तो लोग क्या समझेंगे? अभी उस दिन की बात है। कुछ पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ कुरती पहन कर खड़ी थीं। बूढ़े के तन पर कुरता नहीं था, उनके सामने से होकर निकल गया। कैसी शर्मिंदगी है? कैसी बेइज़्ज़ती? इसे घर से बाहर न निकाला गया तो इज़्ज़त न बचेगी।

आख़िर एक दिन डाकमुंशी बाबू ने बाप से कह दिया–"देखो, तुमने मुझ पर कोई उपकार तो किया नहीं। मन हो तो डेरे में रहो, न हो तो चले जाओ। और देखो, बाबू लोग हमारे यहाँ आएँ तो तुम घर से निकलना ही नहीं।" गोपाल की हिदायतें सुनकर बूढ़े की कनपट्टी भाँय-भाँय करने लगी। गुमसुम बैठ गया। बेटे की बात है। किससे कहे? गुप्तांग का घाव न देखते बनता है और न दिखाते बनता है। जिससे मन की बात कहता, वह तो जा चुकी है। बूढ़ी की याद आई, चारों ओर निहारने लगा। कोई भरोसा नहीं है। दुख की घड़ी में वह बुढ़िया को याद करता, सुख के वक़्त भी। आँसू समेट लिए उसने। वह फिर न रोया। कहीं गोपाल का अमंगल न हो जाए उसके रोने से।

कल तड़के गोपालबाबू देहात में अपने कार्यस्थल पहुँचेंगे। बूढ़े को कुछ बताया भी नहीं था। सुबह जगे और लापरवाही से बोले–"ऐ बाबू, मैं देहात जा रहा हूँ। सारा सामान लेते आना। सामान है भी क्या? ख़बरदार, मज़दूरों के हाथ मत देना। उनसे ढुलवाओगे तो तुम जानो। मैं पैसा न दूँगा।" बाबू पोशाक पहनकर, बग़ल में छाता दबाए छड़ी घुमाते हुए निकल गए। बूढ़ा क्या करता? सारा सामान समेटे उसने एक बड़ी गठरी बाँधी और सिर पर रखी। चला नहीं जा रहा है। शरीर में ताक़त नहीं बची। आँखों से रह-रहकर आँसू निकल रहे हैं। दस जगह गिरते-पड़ते शाम तक मक्रामपुर पहुँचे। बाबू सुबह-शाम ऑफिस जाते। बूढ़े को मुँह बंद करके घर के काम-काज

में लगे रहना पड़ता। किसी ने यह नहीं देखा कि बाप-बेटे दोनों साथ बैठकर सुख-दुख की बात कर रहे हों। डाक-मुंशी देहात के हाकिम हैं। कितने लोग आते हैं और चरण बंदगी कर जाते हैं। मूरख बूढ़ा जानता भी क्या है जो उनसे बातचीत करता।

बूढ़े की तबीयत और देहात के पानी का मेल न हो सका। बुखार में खाँव-खाँव खाँसता। यह खाँसी रात को बढ़ जाती। बाबू की नींद बाधित होती। पिऊन को हुक्म मिला–"बूढ़े को केवड़े की झाड़ियों में फेंक दो।" यह पिऊन मूर्ख है। अंग्रेज़ी नहीं पढ़ी है उसने। उसके पास एक देशी हृदय है। सोचा, यह क्या है? एक बूढ़े मरीज को केवड़े की झाड़ियों में फेंक दूँ? एक दिन बूढ़े को तेज़ बुखार हुआ। तीन दिनों से खाया तक नहीं। आधी रात। घना अँधेरा। ठंड के चलते खाँसी तेज़ हुई। बाबू को बड़ा क्रोध आया। बूढ़े के सीने पर दो अंग्रेज़ी घूसे जमा दिए। कपड़े-लत्ते बाहर फेंक दिए। बूढ़ा अपने गाँव चला गया।

आस-पास के भले मानुस से सुनने को मिला कि तब से गोपाल बाबू काफ़ी खुश हैं। इधर बूढ़ा ने गाँव में आकर अपनी दो एकड़ की ज़मीन साझे पर लगा दी है। घर बैठे अनाज मिल जाता है। पेंशन के रुपयों से कपड़े-लत्ते और नून-तेल का ख़र्च निकल आता है। खाँसी से राहत पाने के लिए बूढ़ा थोड़ा-थोड़ा अफीम लेने लगा है। सारा ख़र्च चल जाता है। अपने ही घर के बरामदे में बैठकर हरिनाम जपता रहता है। अब बाप-बेटा दोनों खुश हैं। पाठको, दूसरों को सुखी पाकर आप लोग खुश हो जाएँ।

8.

धूलिया बाबा

देवगाँव के हनुमान जी जाग्रत देवता हैं। वे आजकल के कलयुगी देवता तो हैं नहीं, सतयुग से विराजमान हैं। महंत महाराजा का नाम है हनुमान दास। उनकी भी वैसी महिमा है। बड़े वाकसिद्ध पुरुष हैं। जिसे जो कहते, तत्काल वही फलता। उनकी महिमा सारी धरती पर ख्यात है। नागपुर मराठा फ़ौजदार ने उनकी ख्याति सुनी तो वे दर्शन हेतु पधारे। सुबह का समय था। महंत महाराज दीवार पर बैठे गाँजा मल रहे थे। दूर से देखा कि एक बहुत बड़े दंतार। हाथी पर हौदा पड़ा हुआ है। उस पर रेशमी छाता लगा हुआ है। फ़ौजदार हाथी पर बैठे पधार रहे हैं। महंत महाराज ने सिर्फ़ इतना कहा—"हूँह-चल बाबा दीवार, चल।" फिर क्या दीवार रह सकती थी? चल पड़ी। उधर से हाथी आ रहा है, इधर से दीवार जा रही है। बीच रास्ते में भेंट हुई। फ़ौजदार ने एक बार देख लिया, फिर क्या वह हाथी पर बैठ सकता था? धम से हाथी पर से कूदते हुए महंत के पैरों में जा गिरा। महंत महाराज ने आशीर्वाद दिया—"जीते रहो, जीते रहो बच्चा, उठो, उठो।" फ़ौजदार जैसे ही उठा, फ़ौरन ताँबे की पट्टी पर दो सौ चालीस एकड़ ज़मीन की सनद लिख दी। ये महंत गद्दी पर बैठे रहे बारह सौ साल, बारह महीने और बारह दिन तक। वे तो थे इच्छामय पुरुष, अब संसार में रहने की इच्छा न रही। अयोध्या में ख़बर पहुँची। हनुमान गद्दी से एक चेला आया। उसे गद्दी सौंपकर स्वर्ग सिधार गए। इस चेले का नाम था नरकट दास महंत महाराज। गद्दी की महिमा का क्या बखान करें, यह महंत भी वैसे ही थे। इनके समय फिरंगी राज चला। कटक के साहब ने कहा—"एक हिंदू फ़कीर बिना लगान के इतनी सारी ज़मीन मुफ़्त में क्यों खाएगा? बुलाओ उसे। देखते हैं।" परवाना पाकर महंत घोड़े पर सवार होकर निकले। सामने झंडे फहरा रहे हैं। हरिबोल की धुन। कीर्तन जारी है। महानदी के किनारे पधारे। भादों के दिन हैं। महानदी के दोनों किनारे उफन

रहे हैं। ख़ूब आँधी और बरसात। माँझी ने नाव खोलने से इनकार कर दिया। पार कैसे करें? महंत महाराज ने आदेश दिया–"कोई परवाह नहीं।" बगल में बाघ की खाल जो थी। उसे बिछा दिया पानी पर। उस पर खुद बैठ गए। मुंशी नौकर, रसोइया आदि ज़रूरी लोगों को पास बिठा लिया। एक सेवक महंत के सिर पर रेशमी छाता किए खड़ा है। दो नाविक खाल खे रहे हैं। उधर महानदी के पार साहब तंबू लगाए बैठे हुए हैं। दूरबीन से देख लिया। पास बैठे लोगों से पूछा–"यह क्या?' लोगों ने बताया–"हिंदू फ़कीर पधार रहे हैं।" साहब भला कुर्सी पर कैसे बैठे रहते। भागते हुए नदी के किनारे पहुँचे। सिर से टोपी उतार कर नीचे रख दी। तीन बार सलाम ठोंके। बोले हैलो फ़कीर! तुम्हारी ज़मीन बहाल है। जाओ।" यह महंत डेढ़ हज़ार वर्षों तक गद्दी पर बैठे। उनके बाद गद्दी पर बिराजे जांबवान महंत महाराज। मंदिर के पिछवाड़े दो शाखा वाला बूढ़ा सिहोड़ का पेड़ जो दिखाई पड़ रहा है, जानते हैं न वह क्या है? महंत एक दिन सिहोड़ के दातून से दाँत साफ़ कर रहे थे। दातौन को दाँत से फाड़कर जीभ साफ़ करने के बाद दोनों टुकड़े जोड़कर मिट्टी में गाड़ दिया। उस पर ज्यों ही एक बूँद पानी डाला, त्यों ही अंकुर निकल आया। यह वही पेड़ है। मौजूदा महंत का नाम बंदर दास महंत महाराज है। ऐसा महंत न भूतो न भविष्यति। पाँच हाथ का मरद है। गाल और होंठ सीने से लग चुके हैं। गर्दन दिखाई नहीं देती। भुजाएँ दूसरे लोगों की जाँघों की तरह मोटी हैं। तोंद माने ढाई मन अनाज रखने का मटका हो। अनजान लोगों को लगेगा कि महंत नंगे हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। बालिस्त भर चौड़ा और डेढ़ हाथ लंबा कपड़े का कौपीन पहने हुए हैं। जाँघें सटी हुई हैं। तोंद लटकी हुई है। कौपीन दिखती नहीं। महंत जी की महिमा अपार है। मंदिर में इतने सारे पलंग होते हुए भी वे किसी पलंग पर सोएँगे नहीं। हमेशा धूल पर लोटते रहेंगे। शरीर धूल से सना हुआ। कभी नहाते नहीं। पानी से परहेज़ है। इसलिए लोग महंत महाराज को धूलिया बाबा कहते हैं। मंदिर में अमाप वैभव, तमाम पीठा-पकवान है। लेकिन कुछ भी नहीं छूते। दस सेर शुद्ध दूध औटने पर पाँच सेर हो जाता है। उस पर आलता की तरह लाल और मोटी मलाई जम जाती है। दोपहर की धूप में ठाकुर के पास उसका भोग लगता है। महंत महाराज बस उतना ही सेवन करते हैं। इसके बाद तोला भर अफ़ीम और पौवा भर गाँजा। दिन-रात हाथ से गाँजे की चिलम नहीं छूटती। दोनों छोटी-छोटी आँखें सिंदूर के रंग की हैं। हमेशा टिमटिमाती निहारती हैं। हाथ भर लंबी है गाँजे की चिलम। दस-पंद्रह चेलों और भगतों से घिरे रहते हैं। चिलम भरने के लिए चार-पाँच लोग जुटे

रहते हैं। मंदिर का प्रसाद सेवन कर वे सदा वहीं पड़े रहते हैं।

पहले के महंतों की महिमागाथा देश के लोगों को पता है। फिर भी उन्होंने तमाम बातें ताड़ के पत्तों पर देवनागरी लिपि में रक्त चंदन से लिखकर ठाकुर के सिंहासन के पास रखी हुई हैं। इसलिए धूलिया बाबा वो सब पढ़कर अपने प्रिय भक्तों को चुपके से बताते हैं। कोई-कोई गद्दार भक्त उन बातों को लोगों के सामने प्रकट कर देता है।

धूलिया बाबा रोज़ चेलों से कहते हैं—"पुरी में यह जो जगन्नाथ जी का मंदिर है, इसके बन जाने के बाद जब उद्घाटन हुआ तब अयोध्या से एक हज़ार आठ साधु-महंत पंगत के लिए आए हुए थे। वे सभी उनके साथ पधारे हुए थे। चेलों की भक्ति को वे टाल नहीं सके। यहीं रह गए। (ऐसे ही एक महंत लेखक के पड़ोसी थे। लेखक ने उनके श्रीमुख से यह बात सुनी थी)। अब यह झूठा देश अच्छा नहीं लग रहा है। अयोध्या की हनुमान गद्दी लौट जाऊँगा!" प्रसाद सेवन करने वाले चेले-चपाटे पैरों में गिर पड़ते हैं। उन पर कृपा करके धूलिया बाबा रह जाते हैं। यह घटना सैकड़ों बार घट चुकी है।

महंत के पास बेशुमार धन-दौलत है। झुंड की झुंड गाय और बैल। अनाज और रुपये की कोई सीमा नहीं। बड़ी आमदनी है। आमदनी में से एक खास आमदनी इस प्रकार है। इलाके में कोई मुकदमा शुरू हो जाता है तो मुद्दई और मुद्दालह दोनों प्रभु के पास मन्नत मानते हैं कि मामले की डिक्री हो जाने के बाद कौन कितने रुपये देगा। मुंशी लिखकर रखता है। जिसकी डिक्री होती, प्यादे को भेजकर उससे उतने रुपये वसूल कर लिए जाते हैं।

राम साहू और श्याम साहू दो भाई हैं। बँटवारे को लेकर कटक की अदालत में मुकदमा दायर हुआ। राम साहू ने प्रभु के सामने मन्नत माँगी कि मामले में डिक्री होने से कितने रुपये देगा। मुंशी के पास जाकर उसने लिखवा दिया। श्याम साहू नहीं आया। पूछे-पूछे, श्याम क्यों नहीं आया। एक चेला छिपकर आया और बताया—"प्रभो! क्या कहूँ, कहने में डर लगता है। हुज़ूर श्याम की कैसी हिम्मत? पाँच लोगों के सामने साफ़-साफ़ बता दिया कि महंत में उतनी करामात कहाँ है, जो मैं मन्नत माँगने जाऊँ?" महंत उस समय चिलम पी रहे थे। गुस्से में आकर खूब ज़ोर से चिलम का एक कश खींचा। चिलम आग से जल उठी। महंत ने थोड़ा-थोड़ा भक-भक करके मुँह से धुआँ छोड़ा, चिलम की आग बाल दी। धीरे-धीरे बोले—"देखो शिष्यो, हम हुक्म करेंगे, चिलम की आग ... दृढ़ विश्वास है कि महंत जीतेंगे!" चेलों की खुशी का ठिकाना न रहा। उनका दृढ़ विश्वास है कि महंत ... उस दिन इलाके में बात फैल गई कि महंत के हुक्म का उल्लंघन नहीं हो सकता।

धूलिया बाबा को प्रभु ने स्वप्न में दर्शन दिए। वे सिद्ध पुरुष हो चुके हैं। उनकी चिलम बोलती है। दस लोगों को हुक्म हुआ है। उसने भी सुना है। अगले दिन सैकड़ों लोगों का ताँता लग गया। किसी को बीमारी से छुटकारा नहीं मिल रहा है तो किसी का बैल कहीं गुम हो गया है, मिल न रहा है। किसी का मामला दायर है, डिक्री चाहिए। तमाम स्त्रियों ने चरण-पूजन भिजवाया है। वे माँ बनने का सुख हासिल नहीं कर पा रही हैं। चिलम प्रभु। वरदान कीजिए। लोग पाँव पूजा करके रुपया, अठन्नी, चवन्नी महंत के चरणों में अर्पित कर उनकी शरण में हैं।

महंत महाराज का आदेश मिला–"उठो-उठो बच्चो। हम कुछ नहीं कहेंगे। हमारी गाँजे की चिलम से जो आग निकल रही है, उससे धूनी की स्थापना होगी। उस धूनी में देव स्वर्ग से धरती पर अवतरित होंगे। हमें सपने में ऐसा हुक्म हुआ है। हम धूनी की स्थापना करके उन्हें प्रतिष्ठित करेंगे। प्रार्थना के अनुसार पूजा करने से तत्काल वरदान प्राप्त होगा। पूजा का विधान बता दिया गया। धूनी में एक सौ आठ की आहुतियाँ दी जाएँगी। उसके लिए एक नया वस्त्र, पाँच पाव घी, पाँच प्रकार के भोग, पाँच रंगों के फूल, अपनी सामर्थ्य के अनुसार गद्दी-पूजा की दक्षिणा कम-से-कम सवा रुपये चाहिए।

अग्नि पूर्णिमा की आधी रात धूनी पूजा शुरू हुई। महंत महाराज ने आहुति दी तो अग्नि देव प्रतिष्ठित हो गए। धूनी धू-धू जलने लगी। अपनी-अपनी मन्नतें हाथ जोड़कर माँगी गईं तो धूनी के भीतर से अग्निदेव गंभीर स्वर में 'हाँ, ना, होगा' आदि हुक्म सुनाते रहे। हाथ कंगन को आरसी क्या? लोग सुनकर चकित हुए। भक्तिपूर्वक साष्टांग दंडवत्। हरिबोल की धुन से मठ गूँज उठा।

श्याम साहू ने सारी बातें सुनीं। घर में रोते-कलपते सिर पटक रहा है। लोग धूनी की पूजा करके अपनी मन्नतें पूरी कर लेंगे। राम भैया को भी मनचाहा वरदान हासिल होगा। मेरा सर्वनाश होगा। इजमाली धन कम नहीं है। लाख से ज़्यादा होगा। राम भैया सबका मालिक बन जाएगा। महंत महाराज ने कुपित होकर आदेश किया–"अच्छा, देख लेंगे उस तेली के लौंडे को।" यह सुनकर श्याम का दम घुटने लगा। वह क्या करे? इस सोच में पड़ा रहा। काफ़ी देर बाद उसे एक उपाय सूझा है। महंत महाराज के गाँजे का प्रसाद सेवन करने वालों को जा पकड़ा। किसी को पाँच तो किसी को दस देकर विनती की। सभी ने अभय दान किया और महाराज के पैरों में पड़ने की सलाह दी।

[illegible] तक सेवक घेर कर बैठ गए हैं। धूल पर बैठे महंत चिलम पी रहे हैं। पूरी जगह धुएँ से भर उठी है। श्याम की छाती धड़क रही है। [illegible] के लिए मुट्ठी भर रुपये झट से महंत के चरणों में अर्पित कर श्याम प्रणाम करते हुए बोला–"प्रभु! मैं बालक महापापी हूँ। मेरा अपराध क्षमा कीजिए।" महंत आँखें मूँदकर बैठे-बैठे चिलम पी रहे हैं। कोई हुक्म न हुआ। सभी सेवकों ने एक साथ महंत महाराज की वंदना की–"हे महाप्रभु, [illegible] महापापी हैं। अपराधी हैं। प्रभु क्षमा न करेंगे तो इस संसार में भला कौन है?" दयामय प्रभु ने तुरंत हुक्म दिया–"जाओ बेटा, पूजा ले आओ।" श्याम साहू की खुशी का ठिकाना न रहा। पूजा के आयोजन में जुट गया। बड़ा महाजन, पूजा का बड़ा आयोजन। घी पाँच पाव के बदले पाँच सेर। इसी के अनुपात में अन्य सामग्री। ज़री के आँचल वाली बरहमपुरी रेशमी साड़ी। श्याम बाबू की बड़ी पूजा होगी। दोनों भाई गाँव के बड़े तगड़े महाजन हैं। आसपास के पाँच गावों के लोग अग्निदेव का वरदान सुनने भागे चले आ रहे हैं। लगभग पाँच सौ लोगों का समागम हो चुका है, अहाते में जगह नहीं है।

मंदिर के अहाते में दीवार से सटकर कोठरियाँ कतार में बनी हैं। एक कोठरी में मेला-महोत्सव की मिठाइयाँ बनती हैं। इसके पास भंडार है। मिठाईवाली कोठरी में धूनी जमाई गई है। रात के दूसरे प्रहर के आसपास महंत महाराज मंदिर की बग़लवाली कोठरी से निकले। आज प्रभु का मन बड़ा खुश है। बड़े रोज़गार का मामला है। एक तोला अफीम के बाद शाम को दूसरा तोला अफीम ले चुके हैं। गाँजे का भी ख़ूब सेवन हो रहा है। पैर लड़खड़ा रहे हैं। चार सेवक सहारा देकर ले जा रहे हैं। महंत के दर्शन कर सभी देखनहारे हरिबोल की ध्वनि के साथ पैरों तले गिरे रहे। पूजा शुरू हुई। पाँच सेर घी की आहुति हुई। ख़ूब मोटी-मोटी लकड़ियाँ धूनी में डाली गईं। घृताहुति पाकर अग्निशिखा चार-पाँच हाथ ऊँची उठने लगी। कोठरी में महंत अकेले हैं। प्रभु की अपार महिमा है वरना आग की लपट के पास भला कोई बैठ सकता है? श्याम साहू गले में अंगोछा डाले हाथ जोड़कर चौखट के बाहर खड़े-खड़े धूनी महाराज की प्रार्थना कर रहे हैं। महंत जी ने आँख मूँदकर ऊँची आवाज़ में प्रार्थना की–"धूनी जी, श्याम बेटा को वर दीजिए, वर दीजिए, उसके मामले की फ़तह हो।" धूनी ने कोई जवाब न दिया। महंत अपनी करामात लोगों को दिखाने के लिए खड़े हो गए। उनके हाथ में दस सेर लोहे का चिमटा था। उसे ख़ूब ज़ोर से दे मारा। आवाज़ हुई 'धप'। श्याम साहू ने चौंक कर देखा कि कोठरी में छाती तक गहरा एक गड्ढा है। समझ में कुछ न आया। पल भर

बाद भक्ति के प्रताप से समझ गया कि धूनी देवता देह धारण करके पधार चुके हैं। महंत जी को गले लगा रहे हैं। उसका भाग्य खुल रहा है। वरदान मिलेगा। पलभर में यह सब कुछ समझ में आ गया। ख़ूब ज़ोर से हरिबोल की ध्वनि करते हुए कहा कि धूनी देवता रूप धारण कर पधार चुके हैं। समवेत लोग हरिबोल की ध्वनि करते हैं। मंदिर में घंटा, तुरही, झांझ बज उठे। समुद्र के गर्जन की तरह ध्वनि उठ रही है। लोग दौड़े चले आ रहे हैं। अग्निदेव के दर्शन के लिए। एक ही दरवाज़ा था। कोठरी में धुआँ भर चुका था। दरवाज़े के पास धक्कम-धक्का से कई लोग घायल हुए, दब-कुचल कर गिर पड़े।

एक पहर बीता। लोग नाचते-कूदते हरिबोल की ध्वनि कर रहे हैं। यह क्या लाश के जलने की तीव्र गंध। लोग नाक पर कपड़ा डाल रहे हैं। कुछ परिचित लोगों ने चौखट के पास जाकर गौर से देखा—अरे महंत महाराज जल रहे हैं। कुछ गँवारों ने समझा कि अग्निदेव पधार कर महंत जी को खा रहे हैं। कहीं ऐसा न हो कि वे उन्हें भी खा जाएँ। भागो, भागो, भागो। गिरते-उठते, एक-दूसरे पर गिरते लोग भाग रहे हैं। अंत में मंदिर के पुजारी, नौकर, चाकर भी भागने लगे। पलभर में इतने बड़े मंदिर में सन्नाटा छा गया। बस, धूनी की कोठरी से आवाज़ आ रही है फड़-फड़। साथ ही दुर्गंध निकल रही है।

देवगाँव के निकट गोपालपुर का सरकारी थाना पूरा ढाई कोस की दूरी पर है। सुबह वहाँ ख़बर पहुँच गई। दारोगा साहब पाँच-छह बरकंदाज़, आठ-दस चौकीदार साथ लिए आ पहुँचे। (बहुत दिन पहले की बात है। उस ज़माने में कांस्टेबल होते न थे)। दारोगा ने देखा कि मंदिर तो क्या पूरे गाँव में कोई आदमी नहीं है। घर-घर के टाट-दरवाज़े बंद पड़े हैं। चौकीदारों ने ख़ूब बुलाया तो घर के अंदर से औरतों का जवाब मिला कि घर में कोई नहीं है। कोई बैल की खोज में तो कोई जाति-बिरादरी के भोज में शामिल होने गया है। कई लोग मुक़दमों के चलते कटक गए हुए हैं। बड़ी मुश्किल से मंदिर के पुजारी और कुछ नौकर मिले। जाँच पड़ताल के बाद दारोगा को पता चला कि भंडार घर से धूनीवाली कोठरी के बीच तक एक सुरंग है जिसमें एक आदमी रेंगते हुए जा सकता है। धूनी के नीचे ढाई-ढाई हाथ लंबा-चौड़ा और ढाई हाथ गहरा एक गड्ढ़ा खोदा गया है। उसके ऊपर थोड़ी-सी मिट्टी ही डाली गई थी। उस मिट्टी पर धूनी जलती थी। भंडार घर से सुरंग में रेंगते हुए एक आदमी जाकर धूनी के नीचे बैठता था। महंत कुछ पूछते थे तो वही जवाब देता था। हादसे की रात एक गँजेड़ी चेला धूनी के नीचे बैठा हुआ था। उसका नाम था हुंडा दास। ख़ूब नशे के कारण महंत को होश न था। यूँ ही शरीर से भारी-भरकम

दूसरी ओर से ताकत लगाकर चिमटे से प्रहार करने के पश्चात् ऊपर की मिट्टी के साथ सारी आग गड्ढे में जा गिरी। दोनों आदमी एक दूसरे से लिपटकर जल मरे। बाहर काफ़ी शोरगुल था। इसलिए उनकी बेचैन चीखें कोई सुन न सका।

दारोगा साहब ने रपट लिखकर मुआइना के लिए दोनों अधजली लाशों को शहर भिजवा दिया। (यह घटना आंशिक सत्य है। घटना का स्थान दशपल्ला है। महंत जी जलकर न मरे थे बल्कि बड़ी मात्रा में रुपयों-पैसों के साथ पकड़े गए थे। पत्र-पत्रिकाओं में ऐसा उल्लेख है)।

9.

कमला प्रसाद खोराप

बहुत बड़े महाजन की हवेली। पौ फटने से लेकर आधी रात तक चहल-पहल लगी रहती है। आज बड़ा सुनसान है। रास्ते पर चलने वालों को लगेगा कि इस बड़ी दो मंज़िली हवेली में एक भी इंसान नहीं है। ख़ाली पड़ी हुई है। मुँह अँधेरे स्वरूप माँझी के पहुँचते ही बाबूजी की हवेली पर मानो गाज गिरी हो। हवेली के अंदर स्त्रियों की किचिर-पिचिर। मालकिन के सख़्त हुक्म के चलते बच्चों की दौड़-धूप, चहल-पहल बंद है। बरतनों की खनखनाहट भी नहीं आ रही है। दासी तारी माँ 'हाय-हाय' मचाकर रो पड़ती है। पाँच महीने की तनख़्वाह साढ़े सात रुपये उसने पहले ही बटम में लिये थे। भीमा नानी ने सारा जीवन पेट काट-कपट कर गले के लिए सोने का कंठा बनवाया था। अब बीस रुपये की गिरवी में है। बड़ी उम्मीद थी कि बटम में बढ़कर तीस रुपये हो जाने से रुपये-सवा रुपये ब्याज में देकर अंजलि भर ज़्यादा पैसा पा जाएगी। वह खुद को बिलकुल सँभाल नहीं पा रही है। पिछवाड़े की चौखट पर बैठकर कलप रही है। मालकिन के डर से घर में कोई शोर नहीं मच रहा है। दुख से बाबूजी की कमर टूट-सी चुकी है। भौचक हो गुमसुम बैठे हुए हैं। घर में शोरगुल होने से वे झुँझलाएँगे, इसलिए मालकिन की सख़्त हिदायत कि कोई हल्ला न मचाए।

स्वयं बाबू नरहरि नायक कचहरीवाले कमरे में अपनी गद्दी पर बैठे बड़ेवाले तकिए से पीठ टिकाए हुक्का पी रहे हैं। किसी से कोई बातचीत नहीं। कोई हिम्मत करके पास फटक नहीं पा रहा है। हुक्का आसन पर रखते ही नाई का लड़का रामू चिलम बदल देता है। उसका मन भी उदास है। उसने भी जोड़-तोड़कर साढ़े दस रुपये बटम में दिए थे। माँ की गोद में रहने वाले बच्चों के नाम भी रुपये बटम में दिए गए थे।

बैठकख़ाने के अहाते में माँझी स्वरूप बेहेरा खंभे के पास हाथ पर गाल

रखे सिर झुकाए बैठा है। उससे दो-तीन हाथ के फ़ासले पर खलासी राम बेहेरा और मक्रम बेहेरा दोनों सिर झुकाकर बैठे हुए हैं। सभी ख़ामोश बैठे हैं। छोटा, मैला-कुचैला कपड़ा पहने गले से मैला गमछा लटकाए हुए है। धूल और कीचड़ से शरीर सना हुआ है। दाढ़ी बढ़ी हुई है।

बैठकख़ाने से बाबूजी ने हाँक लगाई–'माँझी'। स्वरूप माँझी ने कहा–'जी हुज़ूर'। वह बाबूजी के सामने खड़ा हो गया। बाबूजी ने उसे एक बार निहारते हुए 'हूँ' कहा और वे तमाखू पीने लगे। चिलम भर तमाखू फूँक चुके हैं। माँझी खड़ा है सिर झुकाकर। थोड़ी देर बाद बाबूजी ने कहा–"क्या हुआ माँझी, फिर एक बार असली बात संक्षेप में बता तो।" बाबूजी का नरम सुर सुनकर माँझी रो पड़ा। फिर अपने को सँभालते हुए सिसकते हुए धीरे-धीरे कहने लगा–"हुज़ूर, पिछले अमावस के बाद प्रतिपदा के दिन आढ़तदार आपुडु स्वामी से मुँह उजाले रुपये-पैसे लेकर दोपहर के आस-पास मद्रास बंदरगाह से लंगर उठाया।" बाबू जी ने पूछा–"आढ़तदार ने पूरा हिसाब कर दिया था या कुछ बाक़ी था?"

माँझी–"आढ़तदार ने मुझे नगद बारह हज़ार रुपये गिन कर दिए। हिसाब डाक से भिजवाने की बात कही।"

बाबूजी ने बक्सा खोलकर कलवाली डाक से आई हुई मोटी चिट्ठी निकाली। तेलुगु में लिखी गई थी। उसके एक कोने में धागे से गूँथी लाल रंग की पर्चियों की गड्डी निकाली। इधर-उधर उलटने-पुलटने के बाद वीरेशलिंगम को बुलावा भेजा। वह तेलुगु जानने वाला गुमाश्ता है। दक्षिणांचल से आने वाली चिट्ठियाँ पढ़कर बाबूजी को ओड़िया में समझाता है। गुमाश्ता को बुलाने के लिए प्यादा दौड़ा। उसके बाद बाबूजी ने माँझी की ओर देखते हुए कहा 'हूँ'।

स्वरूप माँझी ने कहा–"लंगर उठाकर पाल खोला तो पाल खुला ही रहा। पूरे आठ दिनों तक जहाज़ दिन-रात चलता रहा। पीछे दक्षिणी हवा, निर्मल आकाश, समुद्र का पानी तालाब की तरह शांत। पतवार पर सिर्फ़ हाथ रखा हुआ है। जहाज़ सीधा बढ़ता जा रहा है। नौवें दिन रात को पहले पहर में कटक बंदरगाह के फलसा पेंठवाले दीप स्तंभ पर नज़र पड़ते ही पीछे हवा धीरे-धीरे बहकने लगी। आहिस्ते-आहिस्ते तेज़ होने लगी। फिर इस तरह तेज़ बहने लगी कि आधी रात तक भयानक हो उठी। पीछे की वज़नदार ज़ंजीर और आगे के दोनों लंगर डाल दिए, झटपट टूट गए। सारी रात यही हाल रहा। फिर सँभाल न सके। आधी रात के लगभग जहाज़ में पानी घुसने लगा। सब मिलकर पानी उलीचने लगे। मुँह अँधेरे जहाज़ बैठ गया। दिन निकला तो देखा

कि घड़ियालों से भरा धामरा का मुहाना है। और कोई चारा न था, रक्षा नौका पर सवार होना पड़ा।

बाबूजी ने पूछा–"रुपये?"

माँझी सिर्फ़ रोता रहा, कुछ नहीं कह सका।

बाबू ने कहा–"सच है कि यहाँ थोड़े-से बादल हैं, हल्का-सा तूफ़ान आया था। लेकिन इतना बड़ा तूफ़ान तो नहीं था।"

माँझी–"हुज़ूर, तूफ़ान नहीं, चक्रवात था। ऐसे चक्रवात समुद्र में आते रहते हैं। कलकत्ता, विलायत, रंगून आदि के लिए छह जहाज़ों ने पाल खोले थे। कहाँ ग़ायब हो गए, किसी को पता नहीं है।

बाबूजी ने ज्योतिषी कमललोचन नायक को बुलवाया था। माँझी से बातचीत के दौरान ज्योतिषी पहुँचे। पंचांग के पोथे खोलकर पढ़ने लगे–

"मंगलम् भगवान विष्णु।"

"मंग..."

बाबूजी ने गुस्से में कहा–"हाँ-हाँ, तुम अपने पंचांग के पोथे को बाँधकर रख दो। क्या अच्छा मुहूर्त निकाला था। पिछले गुरुवार को पंचांग देखकर कहा था न कि पूर्णिमा के दिन ज्वार जब उभार पर हो, तब कमलाप्रसाद को घाट से खोला जाए। अच्छा शास्त्र पढ़ा है।"

नायक जी ने गहरी साँस छोड़ी। चुपचाप पीछे सरक गए। बैठकख़ाने के बरामदे के किनारे बैठकर टेंट से खड़िया का ढेला निकाला। राशि-चक्र की रेखाएँ खींचकर ढेर सारा पाठ लिखते रहे। खड़िया का ढेला पूरी तरह घिस गया। गुमसुम हो बैठे रहे। दिन का तीसरा पहर ढलने वाला है। बाबूजी बैठकख़ाने से उठ नहीं रहे हैं। गुमाश्ता और दूसरे नौकर कैसे उठते? नहाने का वक़्त बीता जा रहा है। सभी अपनी-अपनी जगह पर ख़ामोश बैठे हैं। घर के अंदर से तीन बार बुलावा आ चुका है। अंत में नौकराइन गुरुवारी ने आकर कहा–"मालकिन ने कह भेजा है कि जो होना था, सो हो गया। अब घर के सारे बाल-बच्चे भूख के मारे छटपटा रहे हैं।"

बाबू जिस रास्ते से होकर हवेली के अंदर जाते, ज्योतिषी उसी रास्ते की बग़ल में बैठे हुए थे। बाबूजी को देखकर खड़े होते हुए उन्होंने पूछा–"हुज़ूर, यह कैसे हुआ? बाबूजी ने थोड़ा गुस्सा जताते हुए कहा–"पूछो माँझी से।"

बाबूजी के पीछे-पीछे गुमाश्ता लोग खाता-बही समेट कर निकले। श्याम दास गुमाश्ता ने ज्योतिष का थोड़ा मज़ाक़ उड़ाया–"क्या है पंडित जी? क्या कहता है तुम्हारा पाठ? जाकर नहा लो तो शायद पाठ ठीक निकले?"

नायक ने कहा—"गुमाश्ता बाबू, आप पाठ का मज़ाक़ न उड़ाएँ। आप मेरी बात सुनें। यह देखिए, बाबूजी का कर्क लग्न है। उसमें वृहस्पति है। फिर अब वृहस्पति महादशा है और मंगल जो पंचम पर स्थित है, लाभ ही लाभ हैं। उसका अंतर चल रहा है। और भी देख लें, घर में मालकिन का मेष लग्न-लग्न के स्थान द्वितीय में चंद्र ऊँचा है। फिर उसी की महादशा चल रही है। क्या कह रहे हैं गुमाश्ता जी, ऐसी स्थिति में विपत्ति कैसे आ सकती है? कभी नहीं, कभी नहीं। जहाज़ डूब नहीं सकता।"

यह साठ साल पुरानी घटना है। उन दिनों बालासोर में चल रहे जहाज़ी कारोबार के बारे में बिना जाने मूल घटना को समझने में दिक़्क़त होगी अथवा बिलकुल समझ न सकेंगे। इसलिए तब के वृत्तांत के बारे में संक्षेप में जान लेना ज़रूरी है।

प्राचीन काल से भारत के पूर्वी तटीय बंदरगाहों में बालासोर की बड़ी ख्याति थी। समुद्रगामी हज़ारों जहाज़ नदी के पानी को आच्छादित कर अच्छे मौसम में बालेश्वर के बंदरगाह के घाटों में तैरने लगते। भिन्न-भिन्न क़िस्म के लगभग दस हज़ार कारीगर काम में जुटे रहते थे। शहर के पास नदी के किनारे-किनारे क़रीब दो कोस तक पैंठ लगन की तरह लोगों की चहल-पहल लगी रहती थी। रंगून, जावा, वर्णियो, विशाखापट्टनम, मद्रास, सिंहल, मालदीव, लक्षदीव आदि की ओर जाने वाले सैकड़ों जहाज़ समुद्र में हवा को फाड़कर सर्पिल गति से बढ़ रहते थे। तब तो रेल या स्टीमर का नाम भी सुनने को न मिला था। उत्कल में विदेशी माल का आयात और निर्यात बालेश्वर के बंदरगाह से ही होता था। बंगाल के क़रीब आधे ज़िलों के लोगों के खाने का नमक बालेश्वर के जहाज़ों से पहुँचता था। बंगाल का नाम सुनने से पहले दिनामार, ओलंदाज, फ़ारसी, अंग्रेज आदि विदेशी जाति के व्यापारी बालेश्वर के बंदरगाह पर दुकानें खोल चुके थे। अब बंदरगाह पर नदी के घाट पर जाइए तो सन्नाटे से साक्षात्कार होगा। बूढ़ाबलंग नदी मानो कलकल की धुन में रोते हुए समुद्र की ओर जा रही हो।

बालेश्वर बंदरगाह के दुर्भाग्य का मूल कारण है नमक उत्पादन बंद हो जाना। दूसरा कारण है स्टीमर और रेल से कारोबार का चलना, तीसरा तथा ख़ास कारण है बालेश्वर की नदी के मुहाने में रेत का भर जाना। अमावस और पूनम के दिन ख़ूब ज्वार आता है। इन दो दिनों के अलावा बाकी दिनों में समुद्र से जहाज़ नदी में घुस नहीं पाते हैं।

बालेश्वर के जहाज़ तीन क़िस्म के होते थे। बड़े जहाज़ों का नाम खोराप,

बीच वालों का सुलुप और बिलकुल छोटे जहाज़ों का नाम दुउणी होता है। सुलुप और दुउणी कलकत्ता आया-जाया करते थे। खोराप समुद्र में दूर-दूर तक के देशों में जाते थे। हर एक जहाज़ का एक-एक नाम होता था। जैसे कमलाप्रसाद, उमाप्रसाद, दुर्गाप्रसाद, ईश्वरीप्रसाद आदि।

बालेश्वर में ढेर सारे जहाज़ के महाजन थे। जिसके पास जितने ज़्यादा जहाज़ होते वह उतना बड़ा महाजन कहलाता। समाज में उसकी प्रतिष्ठा अधिक होती।

बाबू रामहरि नायक एक छोटे महाजन हैं। चार जहाज़ हैं केवल उनके पास। कमलाप्रसाद खोराप मद्रास, कोलंबो, रंगून जाता रहता है। बाकी तीन जहाज़ सुलुप हैं।

स्वरूप बेहेरा कमलाप्रसाद खोराप का माँझी है। बीस साल से नौकरी कर रहा है। ख़ूब विश्वस्त, बड़ा ईमानदार, ख़ूब नमकहलाल। बहुत ईमानदार आदमी न हो तो माँझी की नौकरी नहीं मिलती। क्योंकि उसके मार्फ़त तमाम नक़द रुपयों का लेन-देन होता है।

स्वरूप माँझी कमलाप्रसाद खोराप में माल लेकर मद्रास गया था। लौटते जहाज़ के डूब जाने की बात सुनाई पड़ती है। जहाज़ के डूबने से महाजन के अलावा और भी तमाम लोगों का नुक़सान हुआ है। सदा से यह दस्तूर चला आ रहा है कि माँझी दूर देशों में माल ले जाते समय हर सोलह आने में दो आने का माल बिना किराया दिए ले जा सकता है। मान लें कि एक जहाज़ में आठ हज़ार मन माल लद सकता है, उसमें से एक हज़ार मन माँझी का है। उस माल के लिए महाजन को जहाज़ का किराया नहीं मिलेगा। उस लदे हुए माल के ख़रीदने-बेचने का अधिकार सिर्फ़ माँझी को है। लेकिन उसके पास इतने रुपये होते कहाँ हैं? बाबू के घर के नौकर-नौकरानी, बहू-बेटी, गुमाश्ता-प्यादा आदि जितने लोग होते हैं, माँझी उन सबसे रुपये उधार लेता है। उन रुपयों को बटम कहा जाता है। माँझी बटम के उन रुपयों से माल ख़रीद कर कारोबार करता है। उससे मिलने वाला आधा लाभ बटमदार का तो आधा लाभ माँझी का होता है। कमलाप्रसाद खोराप में बटम के ढेर सारे रुपयों का माल था।

आज पूर्णिमा है। यूँ तेज़ ज्वार उठता है। बारह बजे भाटा होगा। बिलकुल उसी समय अमृत योग है। आज तमाम जहाज़ों की यात्रा तय हुई है। चार-पाँच दिन से माँझी और सारे खलासी पूरी तरह काम में जुटे हुए हैं। जहाज़ की साफ़-सफ़ाई करके मस्तूल पर पाल, आड़ी लकड़ियाँ, रस्सी, पीछे एक और मस्तूल व अन्य सामान सजाए अतिरिक्त पाल लपेटे इंतज़ाम पुख़्ता कर रहे हैं।

...ट से जहाज़ काफी सुंदर लग रहा है। दिन के पहले पहर के आसपास खुद मालिक नहा-धोकर, रेशम की धोती और उत्तरीय पहनकर जहाज़ में पहुँच गए। जहाज़ की गलही पर होम और पूजा का काम शुरू हुआ। माँझी भी नहा-धोकर छापा-तिलक लगाए पूजा के पास बैठ गया। पुरोहित ने पूजा समाप्त कर बाबू के सिर पर और माँझी के सिर पर भी अक्षत डाला। गले में फूल की मालाएँ पहना दीं। पंडित नरसिंह मिश्र जहाज़ की सकुशल वापसी के लिए चंडी-पाठ हेतु बाबूजी के हाथ से संकल्प की सुपारी ग्रहण करके उतर गए। माँझी ने हाँक दी–"तैयार रहो।" खलासी और अन्य कर्मचारी अपने-अपने स्थान पर खड़े हो गए। टँडैल (सहायक माँझी) सामने के लंगर की चरखी को निहारते हुए खड़ा है। लंगर उठाने वाले छह जन चरखी की बग़ल में तैयार हैं।

बाबू, पुरोहित, ज्योतिष नदी के किनारे जहाज़ पर निगाह टिकाए बैठे हैं। माँझी जहाज़ की दीवार पर औंधे लेटे बाबू का चेहरा ताक रहा है। ज्योतिष सूर्य की और पंचांग की ओर बार-बार देख रहे हैं। दिन के ठीक बारह बज गए। बाबू और ज्योतिष दोनों ने खड़े होकर हाँक लगाई 'माँझी'।

माँझी ने जहाज़ की ओर मुड़कर हाँक लगाई–"हाँ, भाई"।

टँडैल ने आवाज़ दी–"ओ, होय।"

चरखी के बग़ल में खड़े छह खलासियों ने आवाज़ दी–"ओ, होय।"

टँडैल–"ओ, होय।"

खलासी–"ओ, भाय।"

टँडैल–"दरिया पीर।"

खलासीगण–"एँ-याँ।"

टँडैल–"लागे सिर।"

खलासी–"एँ-याँ।"

टँडैल–"साहब सलामत।"

खलासी–"एँ-याँ।"

टँडैल–"जवान जबर।"

खलासी–"एँ-याँ।"

टँडैल–"काम की खबर?"

खलासी–"एँ-याँ।"

टँडैल–"लागे सिर।"

टँडैल की हाँक लगाते ही खलासी 'एँ याँ' कहकर एक साथ ज़ोर से

चरखी के बाजू में खड़े-खड़े एक झटका लगाते, लंगर पानी से थोड़ा उठ आता।

टंडैल ने हाँक लगाते हुए कहा–"बढ़ो-बढ़ो-बढ़ो।" लंगर उठ गया। पानी के भाटे में जहाज़ धीरे-धीरे बढ़ने लगा।

उस समय नदी के किनारे बड़ी हलचल मची। समुद्र से एक बड़ा जहाज़ बहता चला आ रहा है। उसमें कोई आदमी नहीं है। 'सँभलो-सँभलो।' लंगरवाले जहाज़ों पर पहरेदार खड़े हो गए। उस जहाज़ के किसी दूसरे जहाज़ से टकराने से दोनों जहाज़ नष्ट हो जाएँगे। चले आ रहे जहाज़ को रोकने के लिए चार रक्षा नौकाओं पर छह-छह खलासी सवार होकर निकल पड़े।

जहाज़ को बीच नदी में रोका गया। देखो-देखो, किसका जहाज़ है? ओ यह तो रामहरिबाबू का कमलाप्रसाद है। ख़बर पाकर रामहरिबाबू हड़बड़ा कर भागे चले आ रहे हैं। कच्छा खुल चुका है। धोती भी खुलने वाली है। नाई का बेटा रामू साथ न होता तो रास्ते में धोती खुल चुकी होती। देखो-देखो, जहाज़ में सब ठीक-ठाक है न? नहीं है तो सिर्फ़ बाबूजी के रुपये और माँझी तथा खलासियों के असबाब। कहाँ गया स्वरूप माँझी? अब माँझी कहाँ? माँझी ग़ायब।

घाट के कप्तान साहब से चिट्ठी पाकर मजिस्ट्रेट साहब ने पुलिस तैनात की। आठ-दस दिनों बाद देखा गया कि बालेश्वर शहर की सड़क पर पुलिस के दारोगा जी वर्दी पहनकर, घोड़े पर सवार होकर बड़ी तेज़ी से कचहरी की ओर जा रहे हैं। उनके पीछे-पीछे माँझी, खलासी, टंडैल, नौकर आदि सोलह आदमी जा रहे हैं। उनके हाथ एक दूसरे से अच्छी तरह बँधे हुए हैं। चालीस-पचास चपरासी चौकीदार उनके चारों ओर घेरा बनाकर जा रहे हैं। सबके बीच छह भार रुपयों के। पुलिस के पहुँच जाने के कारण माँझी और खलासियों ने जो रुपये आपस में बाँटकर रखे थे, भलेमानस की तरह उन्हें दारोगा के सामने रख दिए।

पुलिस दारोगा ने मजिस्ट्रेट के सामने जो रपट पेश की थी, उसका सारांश इस प्रकार है–"इस मई महीने की पहली तारीख़ को स्वरूप माँझी मद्रास बंदरगाह से कमलाप्रसाद खोराप को लेकर बालेश्वर बंदरगाह की ओर रवाना हुआ। नौ तारीख़ की शाम धामरा नदी के मुहाने के पास पहुँचा। उस रात के अंत तक बालेश्वर बंदरगाह पहुँच गया होता। लेकिन आकाश बादलों से घिर गया। हल्का-सा तूफ़ान उमड़ा तो जहाज़-चलाने की हिम्मत माँझी की न हुई। सुरक्षित रहने के लिए घड़ियामाल नदी में जहाज़ को ले जाकर लंगर डाल दिया गया। वहाँ से माँझी और खलासियों का गाँव मक्रामपुर बमुश्किल आधा कोस

दूरी पर है। काफ़ी दिनों से बाल-बच्चों से दूर रहने के कारण सभी घर जाने के लिए बेचैन हो उठे। सिर्फ़ चार खलासी जहाज़ पर पहरा देते रहे। बाक़ी सब उतर कर अपने-अपने घर चले गए। रात गुज़रते ही मुँह अँधेरे जहाज़ में लौट आने की बात तय हुई थी।

आधी रात के आसपास तूफ़ान के साथ तेज़ बारिश हुई। चार लोगों से जहाज़ पर क़ाबू न पाया गया। जहाज़ रेत के एक दूह में जा फँसा। सुबह-सुबह माँझी और खलासी भागते हुए पहुँचे। जहाज़ की दशा देख सिर पीटने लगे। भाटे का वक़्त था। जहाज़ बुरी तरह रेत के दूह मे धँस चुका है। अब कोई चारा नहीं। घड़ियामाल नदी बड़ी भयानक है। जहाज़ रेत के दूह में फँस जाए तो उसे निकालना मुश्किल है। तमाम जहाज़ घायल हुए हैं। इस नदी से माँझी डरे-सहमे रहते हैं।

माँझी और खलासी सभी बैठकर सोचने लगे कि जहाज़ तो गया, नौकरी बचेगी नहीं। सुनने में आ रहा कि जहाज़ों का कारोबार बालेश्वर में ठप्प होने वाला है। तय किया गया कि रुपये बाँटकर ले जाएँगे और चैन से रहेंगे। महाजन को बता दिया जाएगा कि जहाज़ डूब गया। लेकिन, अगर कोशिश की गई होती तो जहाज़ निकाला जा सकता था।

चार-छह दिन बाद पूनम की तिथि आई। तेज़ ज्वार उठा। जहाज़ जिस रेत के दूह में फँसा था, वहाँ जल भर गया। संयोग था कि तेज़ हवा का झोंका आया। जहाज़ जलधारा में बहते हुए समुद्र में आ पहुँचा। जिस तरह बहता हुआ आ रहा था, गंगा में जा घुसता। लेकिन बालेश्वर बंदरगाह के बाहर बया के पास पहुँचने ही पूनम की सुबह समुद्र में ज्वार शुरू हो गया। जलप्रवाह के साथ बालेश्वर की बूढ़ावलंग नदी में जहाज़ घुस गया।
माँझी और खलासियों को चार साल की सज़ा हुई।

बाद में सुना गया कि माँझी और खलासियों ज्योतिषी कमललोचन नायक गरमी के दिनों में भी रेशम धोती और उत्तरीय ओढ़कर, हाथ में सोने का कड़ा पहनकर एक महीने तक शहर के सभी बड़े लोगों के यहाँ घूमते हुए नज़र आ रहे थे।

10.
प्यारी बहू

रामहरि पट्टनायक थे पुलिस दारोगा। सालेपूर परगणा में गोपीनाथपुर गाँव के जाने-पहचाने व्यक्ति। भला-बुरा कुछ भी हो आसपास दस गाँवों के लोग उनकी सलाह लेने दौड़े आते हैं। पंचायत के लोग राह देखते रहते थे कि रामहरि बाबू कब पहुँचेंगे। उनके आने के बाद ही बात शुरू होती है। बाबू पेंशन लेकर पाँच साल तक घर में रहे। उनकी मृत्यु के समय बेटा शिवसुंदर दस साल का था। बेटी चंपादेवी पाँच की हो रही थी। विधवा विमला देवी बड़ी दयालु, बड़ी लापरवाह और भोली थीं। मुसीबत आ पड़ी तो अब एक अच्छी गृहिणी बन गई हैं। घर-बार और दोनों बच्चों को सँभाल लिया है। रामहरि बाबू का वेतन और ऊपरी आमदनी मिलाकर आराम से दस रुपये का रोज़गार था। लेकिन आदमी थे बड़े शाहख़र्च। ख़ाली हाथ मरे। विमला देवी ने पेट काट-कपट कर जो दस रुपये रखे थे, अपने थोड़े से गहने जो थे, उन्हें बेच-बाचकर आज तक परिवार चलाती रहीं। बाक़ी का ख़र्च खींच-खाँचकर बेटे की पढ़ाई में सब कुछ खपा दिया। हमेशा कहतीं–''शिबू दो अक्षर पढ़ ले, उसमें हुनर आ जाए, तो कल घर-बार सँभाल लेगा।''

बेटी चंपा देखने मे काफ़ी सुंदर है। तलवार की धार की तरह पैनी नाक। आँखें बड़ी-बड़ी, काली-काली और सुघड़। सुंदर केश-राशि और दंत पंक्तियाँ सुंदर चेहरे पर ख़ूब फबती हैं। बदन का रंग मानो कुंकुम से सना हुआ हो। रूप जैसा गुण भी वैसा। माँ से पीठा-पकवान बनाना ख़ूब सीख चुकी है। अन्य गुणों में भी उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता है। शिबू भाई ने दुलार के साथ कुछ पढ़ाया-लिखाया भी है। कोई काम-काज न हो तो शाम के समय माँ के पास बैठकर 'कृपासिंधु बदन' और 'छंदमाला' के कुछ गीत सुनाती। शिबू बाबू कचहरी में क्लर्क हैं। नौकरी पाने के बाद से उनकी दिली इच्छा है कि रसोई के लिए एक लड़का रख लेने से माँ को थोड़ा आराम मिलेगा। लेकिन,

विमला देवी मानने को तैयार नहीं। काम ही क्या है? आधा सेर चावल उबाल हैं। बेटे का वेतन भी कितना है जो ख़र्च बढ़ाते जाएँ?

वक़्त पानी की तरह बहता चला जा रहा है। आने वाली वृश्चिक राशि के छठे दिन चंपा बारह पार कर तेरह की हो जाएगी। फिर चौदह की होगी। जोड़ी उम्र में शादी नहीं होती। इस साल विवाह न हुआ तो फिर क्या होगा? कायस्थ घराने में बेटी को बूढ़ी बनाकर रखना निहायत शर्मिंदगी है। अच्छा ख़ानदान है। कन्या सुलक्षणी है। अच्छे-ख़ासे प्रस्ताव आ रहे हैं। विमलादेवी का तत्काल जवाब था—नहीं। चाहे कोई जितना समझाए, एक ही जवाब था—नहीं। एक दिन की बात है। शाम के वक़्त विमला देवी ने अनी फूफी और शिबू बाबू को अपने पास बिठाकर मन की बात खोल कर कही—"देख फूफी, बेटी को दामाद ले गया तो तर गई, यम ले गया तो मर गई।" बड़ा आदमी देखकर दूर दराज़ में धकेल दूँगी तो जब मन हो उसे देखने के लिए तरस जाऊँगी। कायस्थ कुल है, जो कह दिया वह पक्का। मेरी दो आँखें हैं। एक चली गई तो कानी हो जाऊँगी। आस-पास में दूँ तो बुलाने पर 'हाँ भाई' जवाब देगी। यह तो एक बात हुई। असली बात है कि सत्य का उल्लंघन नहीं करूँगी। दोनों बाबू और मेरी सहेली परलोक में हैं। मैं यहाँ नरक में। सत्य का उल्लंघन हुआ तो नरक में भी जगह नहीं मिलेगी।"

रामहरि बाबू के पड़ोसी चार मकान बाद रहते थे। नाम नवघन दास, पुलिस जमादार। नौकरी के दौरान एक ही थाने में एक साथ वक़्त गुज़ारा था। नवघन बाबू कें परिवार से दोस्ती भी। इधर विमला देवी और कमला देवी के बीच भी वैसी अंतरंगता। दोनों जब युवा थीं, रोज़ सुबह घर के पिछवाड़े तालाब के पनघट पर घंटों बैठकर दातौन करतीं। फिर सुख-दुख, हँसी-ख़ुशी, चूल्हे-चौके और घर-बार की ढेर सारी बातें करती रहतीं। होली के मौके पर दोनों ने धर्म को साक्षी रखकर सहेली का रिश्ता जोड़ा। चंपा जब पेट में थी, तब कमला देवी ने कहा—"सखी, तुम्हें यदि लड़की हुई तो मेरे दिबू को देना।" विमला देवी ने कहा—"हाँ, सखी ज़रूर दूँगी।" कमला देवी ने पूछा—"सत्य"। विमला देवी ने जवाब दिया—"सत्य"। तीन बार सत्य कहा गया। इसके बाद भला कैसे मुकर सकती हैं। नवघन बाबू और कमलादेवी स्वर्ग सिधार चुके हैं। बेटा दिवाकर घर में अकेला है। लड़का योग्य है। थोड़ी-बहुत अंग्रेज़ी जानता है। जवान है, सुदर्शन भी। काकटपुर ज़मींदार के यहाँ मुनीम है। विमला देवी ने उस सत्य को हृदय में लिख रखा है। उन्होंने कहा—"सत्य का उल्लंघन न करूँगी। अनाथ लड़के को सँभाल लूँगी।" विवाह हो गया। दिवाकर और चंपा

माणिक्य की जोड़ी की तरह सुखपूर्वक रहने लगे। दोनों का मन एक-सा, कर्म एक-सी और इच्छाएँ भी एक जैसी। संसार में यदि कोई स्वर्गीय सुख है तो वह दांपत्य प्रेम है।

माँ विमलादेवी की ज़िद है कि घर में बहू आए। रविवार का दिन है। कचहरी बंद रहती है। बेटा घर पर है। शिबू बाबू पोथी पढ़ रहे हैं। धीरे-धीरे बूढ़ी उनके पास जाकर बैठी। दुलार भरे स्वर में बोलीं–"शिबू बेटे, पिछले पाँच बरसों से तुम्हारे पीछे लगी हूँ, बोलती आ रही हूँ, तू अनसुना किए जा रहा है। पहले-पहले यह बोला कि पढ़ाई के बाद शादी करेगा। पढ़ाई पूरी हुई। फिर बोला कि नौकरी लगने के बाद विवाह होगा। नौकरी भी लगी। शादी-ब्याह की चूँ-चपड़ भी नहीं। तुम ही बोलो, अब क्या मेरी आयु कब तक साथ देगी? क्या मैं काम-धंधे कर पाने लायक़ रह गई? विद्या की माँ बाहर का काम भले निपटा जाए, अंदर के काम, रसोई आदि कौन करता है? शाम को आँखों से कुछ दिखाई भी नहीं पड़ता। दिन में दो-चार बार ठोकरें खानी ही पड़ती हैं। काम करते नहीं बनता। कभी-कभार तबीयत बिगड़ी तो चंपा आकर चूल्हा-चौका कर जाती है। वह भी तो हमेशा आ नहीं सकती है; तो अब वह पराए घर की। उसका भी घर-बार है। वहाँ अकेली है। न सास है और न ननद। इसलिए चाहने पर भी आ नहीं सकती है। फिर देखो, तीन कमरोंवाला यह घर फैला हुआ है। मैं किसी कोने में पड़ी रहती हूँ अकेली, तेरे कचहरी चले जाने के बाद यह घर काटने को दौड़ता है। क्या हाल हो गया है इस घर का? हाय रे हाय, मैं अब कब तक ज़िंदा रहूँगी? ज़रा मेरे बारे में भी सोच मेरे लाल! वे होते तो क्या अब तक तू कुँवारा बैठा रहता?" बूढ़ी माँ से आगे कुछ कहा न गया। सिसकते हुए रोती रही और और सिसकारते हुए नाक पोंछती रहीं।

माँ के दुख जानकर शिबूबाबू को बड़ा कट हुआ। मेज़ पर पोथी रखकर वे आनी नानी के आँगन में जा पहुँचे। आनी नानी दूर के रिश्ते में विमला देवी की फूफी है। शिबू और चंपा को गोद में लेकर खिलाया-पिलाया है। विमला देवी उन्हें मातृवत् मानती हैं। आनी भी विमला देवी को बेटी समझती हैं। प्यार करती हैं। मदद करती हैं। आनी नानी का घर विमला देवी के अहाते से सटा हुआ है। बस दरवाज़े अलग-अलग हैं। आनी नानी के वंशवृक्ष के बारे में कुछ बताने में अक्षम हैं। विवाह के बारे में नानी और नाती की बातचीत हुई। नानी ने कहा–"अच्छा शिबू, तेरे लिए एक ख़ूबसूरत बहू लाऊँगी तो मुझे एक किनारीदार साड़ी दिलवाएगा न?"

अधेड़ उम्र तक नानी बड़ी झगड़ालू थीं। लेकिन दूसरों का भला करने में

हो या मित्रता के मामले में वह हमेशा आगे रहती थीं। आवश्यकतानुसार सही सलाह देने में भी बड़ी माहिर थीं। विधवा हुई तो क्या, मुसीबत में गाँववाले उनसे सलाह-मशविरा ज़रूर करते। इधर वह काफी बूढ़ी हो चुकी हैं। लाठी उठाकर ठक-ठक करते हुए निकल पड़ीं। 'री विमला, ओरी ओ बेटी विमला।' की हाँक फाटक से ही लगाना शुरू कर देती हैं। भतीजी के पास जा पहुँचीं। इधर-उधर की दो-चार बातों के बाद बोलीं–"हाँ बिटिया, शिबू शादी के लिए तैयार है। बस, लड़की अच्छे घराने की हो। दो-चार अक्षर पढ़ी-लिखी हो।"

शिबू बाबू की एक और माँग थी कि लड़की ख़ूबसूरत हो। लेकिन, नानी ने यह बात भतीजी से नहीं कही। सिर्फ़ शिबू बाबू क्यों? ख़ूबसूरत कन्या से विवाह करने की इच्छा किस युवक की नहीं होती? पाठक-पाठिकाएं बताएं कि क्या यह झूठ है? विमला देवी ने खुशी के मारे उछलकर अपनी फूफी को गले लगाकर कहा–"फूफी, तू ज़रा लगी रह। मेरा है भी कौन? पितृहारा बेटे के लिए कौन भाग-दौड़ करेगा? दामादजी के कंधे पर सब कुछ निर्भर करेगा। मैं तो उन्हें बोल नहीं सकती। तू ही जाकर बताना। वे ही ढूँढ़-ढाँढकर रिश्ता पक्का करें। चंपा से कहूँगी कि वह भी दामाद जी से कहे। कुछ भी हो, वह बच्ची है। ढंग से बोल न सकेगी। तू ही जाकर, उन्हें समझा-बुझाकर बताना।"

अब दिबू बाबू की उलझनें बढ़ने लगीं। उठते-बैठते चंपा उनके पीछे पड़ गई। वह कहती–"मेरे भाई के लिए एक लड़की देखो।" जैसे ही, दिबू बाबू बाहर से घूम-फिर कर लौटते चंपा पूछने लग जाती–"क्यों जी, लड़की मिली? रिश्ता तय हुआ?" वाह भाई, लड़कियाँ क्या मैदान में पड़ी हुई हैं कि भागते हुए जाकर उठा लावें? चंपा जोंक की तरह लगी हुई है।

दिबू बाबू ज़मींदार के नायब हैं। देहात की ख़बर से परिचित रहते हैं। कई जगहों पर ख़बर भिजवाई गई। दोनों ओर से लोगों का आना-जाना लगा हुआ है। बात पक्की न हो पा रही है। रिश्ता तय नहीं हो पा रहा है। अंत में एक जगह बात चली। दुमदुमपुर की एक कन्या सयानी हो चुकी है। सत्रहवाँ साल चल रहा है। विधवा की लड़की है। उसके बड़े भाई बलराम दास गाँव में शिक्षक हैं।

सभी मामले सुनने के बाद शिबू बाबू कुछ टालमटोल करने लगे। यह तो हर कोई चाहता है कि लड़की बड़े घर की हो। ख़ूबसूरत हो। लेकिन ऐसा सबके नसीब में नहीं होता है। विवाह तो विधाता का विधान है। उनके लेखे लड़की जिसके चूल्हे में चावल रख आई होगी, वहीं खिंची चली जाएगी। शिबू बाबू ने निगाह दौड़ाई। कहीं कुछ तय नहीं हो पा को कौन टाल सकता है?

रहा है। इधर माँ की परेशानियाँ बढ़ती चली जा रही हैं। क्या करते? राज़ी हो गए। विमला देवी की ख़ुशी का कोई ठिकाना न रहा। भूखे व्यक्ति के लिए थोड़ा-सा माँड़ भी अमृत जैसा होता है। बहू की माला फेरने लगीं। रिश्ता तय हो गया। फिर क्या कहना? चंपा ने सोचा–"सयानी बहू आएगी, सीधे चूल्हा-चौकी सम्हाल लेगी। अच्छा हुआ कि माँ को छुटकारा मिलेगा।"

दिबू बाबू को पता चला कि कन्या के शरीर का रंग थोड़ा साँवला है। नाम है नीमा। नाम थोड़ा अटपटा है। वजह यह कि इसके पहले के जन्मे लगातार दोनों भाई गुज़र गए। माँ ने देखा कि बेटी बहुत सुंदर है। चौंक पड़ी। ऊपर के दोनों भाइयों को यम ले गया था। कहीं इसे न ले जाए। इसलिए नाम नीमा रखा गया। यानी नीम की तरह कसैला, यम महाराज को पसंद न आएगी।

जाने भी दिया जाए इन प्रसंगों को। नीमा के साथ शिबू का विवाह हो गया। अत्यंत प्रेमपूर्वक, बड़ी ख़ुशी से सास बहू को घर लेती आई। नई बहू घर में आई। उसे अचानक कोई कैसे कहे कि घर के काम में हाथ बँटाए। बहू कपड़े से ढँकी कमरे में बैठी रहती है। चंपा अपने यहाँ के काम ख़त्म करके सुबह बहू को जगाने आती। अपने साथ ले-जाकर नहलाकर ले आती। विमला देवी खाना पका कर परोस देतीं। बहू खाने के बाद हाथ-मुँह धोकर फिर से सो जाती। विद्या की माँ जूठे बरतन साफ़ कर जाती।

पंद्रह दिन गुज़रे। महीनाभर बीत गया। दो महीने पूरे हो गए। बहू की दिनचर्या में कोई बदलाव नहीं आया। अब भी उसने काम-काज में हाथ न बँटाया है। चंपा दो-चार बार कह चुकी है–"भाभी उठो, काम-काज में लगो, चूल्हा-चौका करो। बेकार खाट पर क्यों पड़ी हो?" बहू ऊँघती रही। सुनकर भी अनसुना करती है। सोचती है–"माँ ने कहा है मेरा पति नौकरी करता है, मैं इस घर की मालकिन हूँ। ये सभी मेरे पति का खाकर काम-काज करेंगे। मैं क्यों मेहनत करूँ?" माँ के सारे उपदेश उसे भलीभाँति याद हैं। माँ ने कहा था सास को सीधे मुँह जवाब न देना। इशारा कर देना। बहू खाने बैठती है। भात या सब्ज़ी चाहिए होता तो बरतन मिट्टी पर ठोंक कर इशारा करती। उसे भूख बहुत लगती है। खाना बनाने में सास की थोड़ी देर होती तो वह चौके में जाकर हूँ-हूँ करते पेट पर हाथ सहलाते इशारा कर देती। विमला देवी भी समझ जाती हैं कि बहू को भूख लगी है।

चंपा से अब न सहा गया। बहू को डाँटने लगी। बहू भी कितना सहे और क्यों सहे? वह तो घर की मालकिन है। पहले-पहल वह गुस्से में भुनभुना

रही थी। अब साफ़ जवाब देने लगी है। एक दिन चंपा काफ़ी गुस्से में आकर बहू को गालियाँ बकने लगी। बहू ने भी गाली बकना शुरू कर दिया। विमला भी दौड़ी चली आईं। बोलीं–"नहीं, बेटी चंपा। बच्ची माँ से अलग रहकर बहुत दुखी है। बाद में घर का सारा काम-काज सम्हाल लेगी। ढोल, लटका दिया जाए तो बजाना भी आ जाएगा।" चंपा ने कहा "ना, माँ, देख रही हूँ यह बहू ढोल तो क्या ढकुली भी कंधे पर बाँध दें तो भी हिलेगी-डुलेगी नहीं।"

आनी नानी ने नतनी से पूछा–"ओरी चंपा, तू तो बहू को इतना समझा रही है। अब काम-काज करने लगी है न?"

चंपा ने कहा–"नहीं नानी, कोयला चाहे जितना घिसो, उसका कालापन नहीं छूटता।" खाना बनाने में थोड़ी देर हो जाए या कोई और बात आ जाए तो बहू सास पर कुढ़ने लगती है। वैसे बहू अपनी माँ की बात भूली नहीं है। सास को मुँह पर गाली नहीं देती। घूँघट के पीछे से बुदबुदाते हुए बकती रहती है।"

बहू के इन तमाम गुणों के बारे में शिबू बाबू अनजान हैं। माँ तो कुछ बोलेंगी नहीं। चंपा भी उन्हें कुछ न बताती। लेकिन यह कैसे संभव कि उन्हें घर का हाल-चाल मालूम न हो। सब कुछ न सुनें, लेकिन कुछ तो जानते हैं। आजकल चंपा पर बहू हावी होने लगी है। भाई से सारी बातें न कहें तो मुश्किल है। घर में बताए तो माँ चुप करा देंगी। पूरी बातें करने न देंगी।

एक दिन शाम को आनी नानी के आँगन मे नाती-नतनी और नानी तीनों ने बैठकर लंबी बातचीत की। सलाह-मशविरा किया। यानी कुलीन भाषा में लिखी जाए तो कमेटी लगी। ऐसी चुपके से बातें हुई कि किसी को कानों-कान ख़बर न हुई। अंत में शिबू बाबू ने कहा, अर्थात् रिज्योलूशन पास हुआ "देख चंपा, अगले शुक्रवार से लेकर सोमवार तक गुड-फ्राइडेवाली छुट्टी है। चार दिनों तक कचहरी बंद रहेगी, उसी दौरान सब ठीक-ठाक कर लेंगे।"

आज शुक्रवार है। जवाँई दिबू बाबू सुबह-सुबह काकटपुर ज़मींदार के यहाँ निकल पड़े। दो दिन तक वहीं ठहरेंगे। चंपा दरवाज़े पर ताला लगाकर मायके आ गई। भाई बरामदे में बैठे हैं। चंपा सीधे बहू के बिस्तर के पास पहुँची। उसकी नींद अभी खुली थी लेकिन ख़ामख़ाह बिस्तर पर लेटे-लेटे करवट बदल रही थी। चंपा ने ख़ूब ख़फ़ा होने की तरह चीख़ते हुए कहा–"ऐ भाभी! मगरमच्छ की तरह नाक तक ठूँसकर बिस्तर पर पड़े-पड़े करवट बदल रही है। घर का काम-काज कौन करेगा अपने संग दासी लेकर आई है क्या?" अब बहू से रहा न गया। यूँ भी वह बहुत गुस्सैल है। फिर उसका मानना था कि वही घर की मालकिन है, घर की कोई दूसरी नहीं। केश खुले हुए हैं। गरजते हुए

उसने शुरू किया–“लौंडी, मुँहझौंसी, दूर हट। मैं हूँ मालकिन, तू है कौन?” गालियाँ बकती जा रही है, फिर वही बातें बार-बार दोहराए जा रही है। इधर चंपा मुस्कराते हुए माँ के हाथ से झाड़ू छीन घर बुहारने लगी।

विमला देवी को कुछ पता ही नहीं है। झगड़ा सुनकर बेचैन हो उठीं। झगड़े से उनको बड़ा डर लगता है। झगड़े की जगह से भाग जाती हैं। सड़क पर कोई झगड़े तो दरवाज़ा बंद कर देती हैं। बहू को चुप कराने आ रही थीं, मगर चंपा हाथ पकड़कर खींच ले गई।

वह चीख़-चीख़कर थक गई। धड़ाम से बिस्तर पर जा गिरी। तब चंपा ने काम छोड़, हँसते हुए, आकर गुस्सा दिखाते हुए कहा–“कहाँ गई वह दासी, मुँहझौंसी? झाड़ू से पीटूँगी दस बार उसका सिर। उसके दाढ़ीजार, कलमुँहे भाई को खींच लाऊँगी और गिन-गिनकर बीस बार झाड़ू से पीटूँगी उसके सिर पर।” फिर वह गुस्से में खड़ी हो गई। चंपा पर गालियाँ बकने लगी। विमला देवी दौड़कर बोलीं–“ना चंपा ना, उसे गाली मत दो। अपनी माँ से दूर है वह।” चंपा बोली–“रोने दो उसकी माँ को, इस मुँहजली का गला न घोंटकर इसे यहाँ क्यों भेजा? इस झाड़ू से दासी की जान ले लूँगी। एक ख़ूबसूरत बहू मिल गई है। आज शादी का सारा इंतज़ाम हो जाएगा।”

शिबू बाबू घर के बाहर खड़े थे। भागते हुए आए और चंपा का हाथ पकड़ कर खींचते हुए, ले जाते बोले–“चल, चंपा, चल। माँ अपनी प्यारी बहू को साथ लेकर घर में रहे। हम दोनों घर छोड़कर चले जाएँगे। दोनों अपने-अपने मुँह पर कपड़ा रखकर तनिक मुस्कराहट के साथ दरवाज़े तक गए। बूढ़ी लथपथ हो पीछे भागते हुए बोलीं–“अरे तुम लोग मत जाओ। अरे शिबू, ख़ूब देर हो चुकी है। चंपा ने चावल चढ़ाया है, दो कौर खाते जाओ।”

शिबू–“अच्छा, तू इस बेटी की क़सम खा कि कुछ भी नहीं बताएगी। वरना हम दोनों खाना नहीं खाएँगे, घर छोड़कर चले जाएँगे।”

विमला देवी–“मेरी माँ की क़सम है, आँखें छू रही हूँ, किसी से कुछ न कहूँगी।”

अब बेटा-बेटी से विमला देवी कुछ बोल नहीं पा रही हैं। घर और पिछवाड़े में आ-जा रही हैं। बेटा-बेटी से आँखें चुराकर बहू के कमरे में झाँक आती हैं।

माँड़ निकालकर चंपा बहू के दरवाज़े के पास फिर पहुँच गई। उसने गालियाँ बकनी शुरू कर दीं। उसने देखा कि अब बहू की ताक़त नहीं उठने की। गर्म लोहे से बछड़े को दाग़ा जाए तो जिस तरह वह गरजता है, बहू भी बिलकुल वैसे गरज रही है।

बिस्तर पर पड़े-पड़े बहू मन-ही-मन सोचने लगी—"मैं अब कहाँ की मालकिन? ननद इतनी गालियाँ बक रही है। मेरे लिए कोई समर्थन नहीं है। ऊपर से भाई-बहन का यह मेल। क्या, ये फिर दूसरी शादी करेंगे? मेरी हालत क्या होगी? सास तो पास भी नहीं फटक रही हैं। मैं क्या करूँ?" चुपचाप बिस्तर पर पड़ी हुई है। बाहर की बातचीत कान लगाकर सुन रही है।

इतने में चंपा ने भों-भों कर शंख बजा दिया। फिर बोली—"अरी नाइन, आ, दूब, बेर की पत्तियाँ, चंदन, सिंदूर आदि सभी चीज़ें सजाकर लेती आ। अरे नाई, बैठकख़ाना साफ़ करके आसन बिछा दे। पानी वगैरह भरकर रख, वक़्त बीतता जा रहा है। मेहमान आ जाएँगे तो क्या होगा?" भों... भों... भों... फिर शंख बज उठा। "अरे श्याम! मिठाई की थालें अंदर रख दे। क्या कहा राधिका ने? दही-मलाई बिल्ली खा गई। उफ़ अब मेहमानों को नाश्ते में क्या दिया जाए?"

चंपा ने खाना बनाकर माँ और भाई को खिलाया। माँ बोली—"तू भी थोड़ा खा ले। और बहू..." बेटे पर नज़र पड़ते ही सहमते हुए बोलीं—"नहीं, नहीं, मेरा मतलब है चंपू अकेले खाएगी।" शिबूबाबू बोले—"हाँ, ख़बरदार, बहू का नाम मत लो।" माँ आँगन की तरफ़ चली गई।

शाम होने को है। आनी नानी लाठी टेकते हुए आ पहुँचीं। बहू को सुनाने के लिए बोलीं—"अरी चंपा, हो क्या रहा है? फूलों की मालाएँ, चंदन, सिंदूर आदि क्यों?" चंपा—"देख रही हो न, भाई साहब दूसरी शादी करने जा रहे हैं। आज महाप्रसाद का दिन है। तुम जाओ, उस कमरे में दही-मिठाई है। ले आओ, खाओ। निकाल कर देने के लिए भी फ़ुरसत नहीं है।"

भों-भों शंख बज उठा। उसके साथ-साथ हुलरी भी।

नानी—"अच्छा, नई बहू आएगी। इस बहू का क्या होगा?"

चंपा—"धत! यह भी कोई बहू है क्या? घर-बार की सफ़ाई करेगी, चूल्हा-चौका करेगी। इसलिए तो भाई इसे लेकर आए थे। यह तो कुछ करती भी नहीं। फिर बहू कैसी?"

नानी—"ये बता, यह खाएगी क्या?"

चंपा—"क्या खाएगी? नई बहू के खाने के बाद जो जूठा बचा रहेगा, यह वही खाकर जूठे बर्तन माँजेगी।"

चंपा—"ना, नानी, ना। उसके पास तो न जाओ। यूँ ही भूखी-प्यासी पड़े-पड़े मर जाए।" वहाँ चंपा ने मुस्कराते हुए कुछ इशारा किया। "अच्छा, अच्छा, बस एक बार देख आती हूँ"—कहकर नानी आगे बढ़ती है और बहू के

पास पहुँचते ही वह खड़ी हो जाती है और बूढ़ी के दोनों पैर ज़ोर से पकड़ लेती है। ज़बान खुल न पा रही है। दोनों पैर पकड़ कर फूट-फूटकर रो रही है। बड़ी मुश्किल से कहती है–''नानी उन-से क हो शा दी न क रें।''

आनी नानी–''क्या सुनेगा वह मेरी बात? तू तो घर का काम-काज कुछ करेगी नहीं, भात बनाएगी नहीं, बात-बात में झगड़ा करेगी, इसलिए दूसरी बहू आ रही है।''

बहू–''मैं स ब क रूँ गी।''

आनी नानी–''अच्छा, तू शिबू से बोल। अरे शिबू, यहाँ आ तो, बहू कुछ कह रही है, सुनो।''

शिबू–''ना, ना, मैं नहीं जा सकता।''

इधर बहू अपनी पूरी ताक़त के साथ आनी नानी के पैर जकड़ कर पकड़े हुई है। शायद दोनों पैर तोड़ डालेगी। नानी के चरण कमल के अलावा अब नीमादेवी के संसार में कोई दूसरा भरोसा न था। आनी नानी ने चिल्लाकर कहा–''अरे शिबू, आ जा। मेरे दोनों पैरों में काफ़ी दर्द होने लगा है।''

शिबू बाबू के पास आते ही आनी नानी अपने पैर छुड़ाकर अलग खड़ी हो गईं। बहू अच्छी तरह से पति के पैर जकड़कर बैठी। पैर छोड़ेगी तभी न कहीं जा सकते हैं। ''सारा संसार अँधेरा है, चरणकमल सहारा है।'' आनी नानी ने बहू के लिए सिफ़ारिश की–''अरे शिबू! अब बहू घर का सारा काम-काज करेगी, तू शादी करने मत जा।'' शिबू बाबू ने कहा–''कहाँ, वह तो खुद कुछ न बोल रही है?'' यह सुनकर बहू को बड़ा भरोसा हुआ। फ़ौरन बोली–''हूँ हूँ ऊँ ऊँ।''

शिबूबाबू ने कहा–''मैं ये हूँ ऊँ ऊँ नहीं समझता। साफ़-साफ़ कहे जो कहना है।'' शिबू बाबू ने जैसे कहा बहू बिलकुल उसी तरह साफ़-साफ़ बोली।

इसके बाद शिबू बाबू बोले–''अच्छा नानी, उसने क्यों चंपा के साथ तू-तू मैं-मैं की? ज़मीन पर नाक रगड़े।'' कोई शिकायत नहीं। बहू ज़मीन पर नाक रगड़ने लगी। चंपा खड़ी-खड़ी हँस रही थी। बहू नाक रगड़ते समय भाग गई। बहू नानी के सामने नाक रगड़ती रही। शिबू बोले–''अच्छा नानी, माँ के सामने भी वैसा कहे।'' सभी माँ के पास पहुँचे। बहू ने सारी बातें साफ़-साफ़ कहीं। ज़मीन पर नाक रगड़ते वक़्त माँ तनिक दुखी होकर बोलीं–''हाँ रे, हो गया, बहू सब करेगी।'' शिबू बाबू आँखें तरेरते हुए माँ को देखते हैं 'ना रे, ना' कहकर विमला देवी घर के पिछवाड़े चली जाती हैं।

शिव बाबू ने कहा–''अच्छा, अब चंपा के पैर पकड़े।'' चंपा दौड़कर आई

गले लगा लिया।" "ना भैया, ना, चाहे जो भी हो, वह मेरी भाभी उसका पैर पड़ना चाहिए।" चंपा ने बहू को नमस्ते किया गले लगा लिया। ननद-भावज ने थोड़ा रोना-धोना किया। लेकिन, बस थोड़ा। चंपा बहू को घर के पिछवाड़े ले गयी। नहलाया। चंपा ने खाना बनाया और माँ-भाई बहू भूखी-प्यासी है। वह कैसे खाती? ननद भावज दोनों ने साथ लोटा भर पानी पीकर बहू ज़मीन पर लेट गई।

दिन भी काटने से पहले वह सुबह का सारा काम खत्म कर चुकी धूप निकलने के बाद चंपा ने आकर देखा कि सुबह का सारा हो चुका है। मन-ही-मन थोड़ी खुशी हुई। ननद-भावज दोनों साथ गई। शुरू-शुरू में बहू खाना बनाना नहीं जानती थी। चंपा के के बाद अब अच्छा भोजन बनाने लगी है। सास कोई काम करने है तो बहू उन्हें रोक लेती है। बेटा और बेटी के डर से बूढ़ी माँ अब काम में हाथ नहीं बँटाती है। एक ही जगह बैठकर बहू को बता रही है।

विमला देवी एक ही स्थान पर बैठे दिन-रात माला फेरती रहती हैं। गाँव आदमी आता है तो उसके सामने केवल बहू की तारीफ़ करती हैं। बीसियों बार जिस-तिस के सामने कहती है–"मेरी तो बहू प्यारी है।"

11.

विधवा का बेटा अनंता

एक था सुबल महाकुड़। लोग उसे सुबल सिंह भी कहते थे।

सुबल के पास बाप-दादा के ज़माने से कुछ भैंसें थीं। हरीशपुर के जंगल में सुबल भैंसों के इस झुंड के साथ मगन रहता। घर ही न आता। उसके लिए ठंड, बरसात और गरमी सब बराबर। वैसे बरसात के दिनों में सुबल खुश रहता क्योंकि इस समय चारा ख़ूब होता था। चारा खाकर भैंसें दुधारू हो जातीं। ख़ूब दूध देती थीं।

सुबल सारा दिन भैंसों के पीछे भागता। उसका शरीर कीचड़ से सना रहता था। उसे अपने इस हाल पर मज़ा भी आता। बरसात के दिनों में सुबल झाड़-फूस की झोंपड़ी बना लेता। झोंपड़ी क्या, सिर पर छत रहती, बस। छत भी इतनी ऊँची कि वह बैठे-बैठे ही भीतर घुसता। बैठे-बैठे खाना पकाता। खड़ा होता तो छत से सिर टकराता। झोंपड़ी में कोई दीवार भी नहीं थी। सुबल ने ऐसा इसलिए किया था कि कभी रात को अगर कोई जानवर आ जाए, तो वह भैंसों की जान बचा सके।

सुबल सोते समय टोप से अपना मुँह ढँक लेता ताकि बारिश का पानी न गिरे। एक तो भैंसों का गोबर और मूत्र, उस पर बारिश का पानी। सुबल इसी में चेंग मछली की तरह तैरता रहता था।

तीसरे पहर जब भैंसें चरने के लिए जंगल जातीं तब सुबल जाग जाता। सुबल के पास हमेशा एक लाठी रहती। जब कभी भैंसें छींकतीं, सुबल समझ जाता कि कोई जंगली जानवर आया है।

सुबल ज़ोर की आवाज़ लगाता–"अरे... रे... रे।"

सुबल की तगड़ी हाँक सुनकर जानवर भाग खड़े होते। सुबह जब मुर्गे बांग देते तब तक भैंसों का झुंड लौटकर आ जाता। सुबल उनको बाँधकर दूध दुहने लगता।

दिन निकलते ही सुबल की घरवाली देवकी आ जाती। वह भूसा-चावल मिलाकर छोटा-सा पीठा बनाती और पाँच सेर मोटा चावल और तंबाकू लेकर सुबल के पास पहुँच जाती। सुबल डटकर चावल खाता और तंबाकू पीता। भैंस का सेर भर दूध भी पी जाता। यह उसकी दिनभर की असली खुराक थी। यानी चावल और दूध।

देवकी परिवार का हालचाल सुनाकर दूध का घड़ा सिर पर रखकर लौट जाती।

गर्मी में सुबल कुछ परेशान रहता। जंगल में पानी की कमी हो जाती है। भैंसें कीचड़-भरे तलाब में डूबी रहतीं। भैंसों के लिए चारे-पानी की वहाँ कोई कमी न थी। सुबल भी भैंसों के पास ताड़ के पत्तों का एक बड़ा छाता लगाकर उसी के नीचे बैठा रहता। रात को अपनी खड़ाऊँ सिर के नीचे रखकर सो जाता। मच्छरों से बचने के लिए वह आसपास गोबर के उपले जला लेता लेकिन जब मच्छरों से छुटकारा न मिलता तो अपने शरीर पर ही गोबर पोत लेता। फिर कहता–"धत् स्साले मच्छर।" वह सोने की कोशिश करता लेकिन स्साले तो मच्छर। पीछा नहीं छोड़ते।

नींद खुलने पर वह भैंसों को आवाज़ देता–"अरी शुकरी, अरी साँवली।"

भैंसें सुबल की आवाज़ सुनकर उसके पास आ जाती थी।

एक समय की बात है। अचानक शीतला माता का प्रकोप हो गया। इस कारण सुबल का तबेला तबाह हो गया। उसकी तो कमर ही टूट गई। तब उसकी घरवाली ने उसे समझाया–"जो होना था हो गया। सब ठीक हो जाएगा। मैं अपने भाई के तबेले मे दूध लेकर कारोबार चला लूँगी। देखना, दो साल में फिर से अपने पास भैंसों का झुंड होगा। गिन लेना तुम।"

शीतला माता के प्रकोप से भैंसों के चार पाड़े बच गए थे। सुबल ने उन्हें एक ज़मींदार को बेच दिया। और वहीं उनके वहाँ नौकरी करने लगा। लोग सुबल को सेठ कहने लगे। उसकी घरवाली खुश। कोई उसे सेठानी न कहता, तो वह उन्हें मारने दौड़ती।

जाड़े के दिन थे। एक बार पुलिस के साहब आए। उन्होंने अमराई के नीचे डेरा डाला। पास ही झील थी। वहाँ तरह-तरह के पक्षियों का जमघट था। कबूतर, चकवा, हंस, टिटहर। साहब ने देखा तो शिकार करने के लिए चल पड़े पीछे-पीछे चार सिपाही। आठ-दस चौकीदार। झील के पास पहुँचकर बंदूक दाग़ दी। धड़ाम की आवाज़ सुनकर हज़ारों पक्षी आकाश में इधर-उधर मँडराने लगे। आसपास का वातावरण पक्षियों के शोर से गूँजने लगा। मानो पक्षी

एक-दूसरे से यह पूछ रहे हों कि आख़िर ये सफ़ेदपोश है कौन? दो पक्षी घायल हो गए थे। वे झील में जा गिरे। अब झील में कौन घुसे। सभी ने सुन रखा था कि झील में दो मगरमच्छ भी हैं। सिपाही तैरना नहीं जानते थे। सच तो यह था कि किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी।

सुबल सेठ यह सब देख रहा था। वह फ़ौरन झील में घुस गया। पल भर में दोनों पक्षी साहब के सामने थे।

साहब खुश। उन्होंने सुबल को ग़ौर से देखा। पाँच हाथ का मर्द। गोलमटोल। मज़बूत कद-काठी।

साहब ने पूछा, "तुम कौन हो?"

"हुज़ूर, मैं ज़मींदार के रेवड़ का सुबल सेठ।"

"क्या तुम दरोगा बनोगे?"

सुबल कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, "घरवाली से पूछ लूँ।"

साहब समझ न सके। उन्होंने जमादार की तरफ़ देखा। चौकीदारों को पता है कि जमादार अंग्रेज़ी जानते हैं। हमें मालूम है कि उनकी फ़ास्टबुक बिलकुल पढ़ी हुई थी, और काग़ज़ातों पर अंग्रेज़ी में दस्तख़त करते हैं। उन्होंने साहब को महाकुड की बात अंग्रेज़ी में समझा दी। Sir, this guala Mahakur said he ask his wife. If he tell, he will constable." साहब मन-ही-मन मुस्कुराने लगे। पॉकेट से नोटबुक निकाल कर उन्होंने लिखा, " Subal Singh is fit to be a constable. He seems to be a clever man. He is stout and strong and knows how to show respect to the fair sex." ("सुबल सिंह दरोगा होने के लायक़ है। वह चतुर लगता है। वह यह भी जानता है कि महिला को कैसे सम्मान दिया जाना चाहिए।") हुक्म हुआ, "तुम कल फ़जर डेरा का पास हाज़िर हो।"

सुबल बाद में साहब का अर्दली बन गया। साहब शिकार के शौक़ीन थे। शिकार का सारा सामान सुबल ही देखता। वेतन नौ रुपया महीना था। कुछ पैसे ऊपर से भी मिल जाते थे।

देवकी सारा हिसाब-किताब रखती। भूले से भी बेज़ा ख़र्चा करे तो नाराज़ हो जाती और गालियाँ शुरू, "मुँहजला, ऐसे पैसे बहाएगा तो नौकरी काहे कर रहा है?"

सुबल को नौकरी करते-करते तीन साल हो गए थे।

एक बार साहब और जज साहब मिलकर शिकार पर गए डोमपाड़ा के जंगल में। जज साहब ने गोली चलाई। गोली तेंदुए को लगी। तेंदुआ झाड़ी में

घुस गया। दहाड़ें मारने लगा। साथ में बहुत से लोग थे, मगर तेंदुए के पास कौन जाए? सब सुबल को देखने लगे। सुबल बिना कुछ कहे आगे बढ़ा। उसके हाथ में लाठी भर थी। उसने उस लाठी से तेंदुए को जमकर पीटा और उसकी पूँछ पकड़ कर बाहर ले आया। उसे बीस रुपये का इनाम मिला। वेतन भी बढ़कर बीस रुपया हो गया। सुबल बड़ा ख़ुश हुआ।

पर काल को तो कुछ और ही मंज़ूर था।...

...अचानक एक दिन सुबल बीमार पड़ गया और तीसरे दिन चल बसा।

पति के जाने के बाद देवकी टूटी नहीं। वह सिंहनी की तरह हिम्मतवाली थी। पति का क्रियाकर्म करके वह अपने काम-काज में लग गई। देवकी को सजने-सँवरने का बड़ा शौक़ था। उसे गहनों से लगाव था। विधवा होने के बाद भी उसने अपने गहने नहीं उतारे। नाक में एक तोले का लौंग। गले में चाँदी के सिक्कों की माला जो पेट तक लटकती रहती। दोनों हाथों में दो-दो अँगूठियाँ भी।

सुनसान जगह पर देवकी का घर था, मगर उसे डर नहीं लगता था। वह अपने बच्चे के साथ रहती। सबको पता था कि वह ख़ूब पैसेवाली है। एक बार कुछ चोर उसके घर में घुस गए लेकिन वह चोरों पर कूद पड़ी। दो भाग गए। एक पकड़ में आ गया। सबने देखा चोर और कोई नहीं गाँव का ही चौकीदार झपट सिंह था। देवकी ने उसे इतने थप्पड़ मारे कि चौकीदार के गाल सूज गए। पंद्रह दिन तक बिस्तर से उठ न सका।

दिन बीतते गए। पिता के परलोक गमन के समय सुबल का लड़का चार साल का था। बेटे का चेहरा-मोहरा माँ-बाप पर ही गया था। काम करके देवकी शाम को घर लौटती। बेटे को गोद में बिठाकर प्यार करती और गाती–

हाथी झूमे लदर-फदर केवड़ा कंद को खावे
अनंता फूले लदर-फदर, माँ का दूध पचावे।
रात में चंदा फूले सुंदर उसके संग हैं तारे
अनंता झूले माँ की गोदी, देखे सपने न्यारे।
बापू गया भैंस की रेवड़ दूध दुहेगी मैया
एक दिन हाथी पर घूमेगा अपना राजा भैया।

देवकी अनंता को ख़ूब दुलार देती। ख़ूब सजाती। हल्दी तेल लगाती। बाल सँवारती। छोटी-सी चोटी बना देती। बुरी नज़र से बचाने के लिए उसने अनंता के गले में ताबीज़ लटका दिया। वह अपने पैर की धूल बेटे के माथे पर लगाती। दही-छाछ की हांडी सिर पर रखकर बेचने चली जाती।

सुंदरता को देखकर सब चकित रहते।

देवकी की सुंदरता को देखकर सब चकित रहते। कोई कहता देवकी ग्वालन है। कोई कहता- महाकुड़ाइन है। उसका एक और नाम था ताड़का। चौथा नाम था नंदीघोष। लेकिन देवकी को लोग जब सिंहनी कहते तो वह बहुत खुश हो जाती थी। दही देते समय अगर कोई उसे बार-बार सिंहनी बोलता, तो उसे दो-चार कटोरी दही फोकट में दे देती थी।

समय किसी का इंतज़ार नहीं करता। देखते ही देखते अनंता दस साल का हो गया। पर वह दिखने में बीस साल का लगता था।

देवकी दही बेचकर आती और पाँच सेर चावल चूल्हे पर चढ़ा देती। फिर तीन सेर मांड के चावल बेटे को परोस देती। कभी-कभी उड़द की दाल भी बेटे के सामने रख देती। देवकी ने एक गाय पाल रखी थी जो रोज़ चार लीटर दूध देती थी। खाने के बाद अनंता सारा दूध पी जाता था।

देवकी अपने बेटे के कारण परेशान थी। लोग अनंता से जलते थे। लोग आए दिन अनंता की शिकायत करने आ जाते।

कोई कहता, "वह हमारे बग़ीचे की ककड़ी खा गया।"

कोई कहता, "अनंता भुट्टा तोड़ लेता है।"

कोई कहता, "वह पेड़ पर चढ़कर आम, इमली खा गया।"

देवकी शिकायत सुनकर दुखी होती। मगर अनंता से कुछ न कहती।

देवकी गुरुजी के पास जाकर बोली, "मेरे अनंता को पढ़ा दीजिए।"

माँ के डर से अनंता पढ़ने बैठ गया। गुरुजी 'अ-आ' लिखवाने लगे, लेकिन अनंता का मन पढ़ने में नहीं लगता था। वह पेड़ को देखता। उसमें फल लगे थे। नज़र बचाकर वह पेड़ पर चढ़ जाता, फल तोड़ता और फिर आकर लिखने लगता। इमली के पेड़ पर बंदर देख उनकी दुम पकड़ कर पटक देता।

उसकी हरकत देखकर गुरुजी परेशान हो गए। अनंता किसी को धकेल देता, किसी को पटक देता। गुरुजी बच्चों को पीटते तो अनंता को बड़ा मज़ा आता। देवकी गुरुजी को फोकट में कटोरी भरकर छाछ पिलाती थी इसलिए गुरुजी कुछ बोल नहीं पाते थे। भय और लालच आदमी से क्या नहीं कराते। लेकिन एक दिन अनंता की हरकत से परेशान गुरुजी ने उसकी जमकर पिटाई कर दी। लेकिन उस पर कोई असर ही नहीं हुआ।

मार खाकर भी अनंता माँ से कुछ नहीं बोला। पाँच महीने बाद अनंता 'अ' लिखना सीख गया। अब 'आ' लिखना सीखेगा। फिर भी अनंता की शैतानी जारी रही।

एक दिन गुरुजी ने दस-बीस सोंटे जड़ दिए। पहली बार अनंता को थोड़ी तकलीफ़ हुई मगर वह रोया नहीं। वह मन-ही-मन सोचता रहा, "देख लूँगा तुम को।"

दूसरे दिन अनंता मन लगाकर लिख रहा था। गुरुजी ने सोचा, यह तो सुधर गया है। सोचकर खुश हुए, काश! पहले इसकी पिटाई कर देता।

एक दिन पढ़ाई के बाद गुरुजी को लगा कि शौच जाना चाहिए। उन्होंने आवाज़ लगाई, "जाओ रे, लोटा ले आओ। तंबाकू ले आओ।"

चार छह लड़के काम में जुट गए। गुरुजी अपना सारा काम बच्चों से ही कराते थे। कपड़ा, बरतन धुलवाना, पैर दबवाना। क्या अमीर क्या ग़रीब, हर बच्चा गुरुजी की सेवा करता था। ऐसा करने से विद्या देवी खुश होती हैं।

गुरुजी ने देखा अनंता अक्षर लिखना सीख रहा है। गुरुजी को उस पर दया आ गई। उसके सिर पर हाथ फिरा कर बोले, "जा लोटे में पानी भर कर ले आ।"

अनंता हाथ में लोटा लेकर तालाब की ओर निकल गया। बहुत देर हो गई अनंता नहीं लौटा। इधर गुरुजी परेशान। हारकर घाट की ओर चल पड़े। अनंता छिपकर गुरुजी की बेचैनी को देख रहा था। धीरे से वह गुरुजी के पास पहुँचा और उन्हें लोटा पकड़ा दिया। गुरुजी लोटा लेकर ज़ोर से भागे लेकिन थोड़ी देर बाद ही गुरुजी चीखते हुए लौटे। उन्होंने लोटा वहीं छोड़ दिया था। गुरुजी अधनंगी हालत में उछल रह थे।

"अरे अनंता, तेरा नाश हो। मार डाला मुझे। कहाँ है अनंता, अनंता!"

लेकिन अनंता ग़ायब हो चुका था। इधर गुरुजी बेचैन थे। इधर-उधर कूद रह थे। पूरे शरीर में खुजली हो रही थी। वे पानी पानी चिल्ला रहे थे। चिल्ला रहे थे "अरी माँ रे, अरे बाप रे।" उनका चेहरा सूज गया था। पलकें इतनी फूल गई थीं कि उन्हें कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। गुरुजी की हालत देखने पूरा गाँव जमा हो गया था। उन्हें उठाकर पानी में डाला गया तब थोड़ी राहत मिली।

शाम को गुरुजी को सरदी लग गई। खीस के तेल से मालिश हुई। तब वे कुछ बोलने लायक़ हुए मगर उनका चेहरा मटकी जैसा फूल गया था। धीरे-धीरे गुरुजी की खुजली जाती रही।

आख़िर अनंता ने उनके साथ ऐसा क्यों किया? फिर लोग समझ गए कि जिस दिन गुरुजी ने बिच्छू-घास के सोंटे से अनंता को पीटा था, उसी दिन अनंता ने ठान लिया था कि वह बदला लेगा। आज मौक़ा मिला, तो गुरुजी के

लोटे में कँवाच से भरा पानी डाल दिया। गुरुजी ठीक हुए तो सोंटा लेकर खड़े हो गए, "आज तो मैं अनंता को देख लूँगा।"

गाँववाले समझाते रहे लेकिन गुरुजी नहीं माने। क्रोध में आदमी अपने होश खो बैठता है। गुरुजी की भी वही हालत थी। वे अनंता के घर पहुँच गए। लगे चिल्लाने–

"अरी ग्वालन, कहाँ है करमजला?"

देवकी को सब कुछ पता चल चुका था। उसने भी एक लाठी ली और चीख़ते हुए बाहर निकली

"अरे करमफूटे ग़ुलाम महांति, तुझे डायन खाए। तू मरघट में रहे। मैं सिंहनी हूँ, मुझे ग्वालन कहता है? मुझे ग्वालन कहता है? मेरे लाल को करमजला कहता है तू? अभी तुझे देखती हूँ बूढ़े-खूसट!"

सिंहनी की आवाज़ सुनकर गुरुजी घबरा गए। वह देवकी की ताक़त को जानते थे। एक बार वह एक सांड से भिड़ गई थी। गुरुजी फ़ौरन दुम दबाकर भाग खड़े हुए।

गुरुजी अँधेरे में कहाँ छिपे, पता ही नहीं चला। मग़र अगले दिन से गुरुजी गाँव में दुबारा नज़र नहीं आए।

पाँच-छह बरस बीत गए। गाँववाले अनंता से परेशान रहते थे। मग़र वह पेड़-पौधों के फलों को ही तोड़ता था, सोने-चांदी को हाथ नहीं लगाता था। जितना शैतान था, उतना भला इंसान भी था। लोग बहला-फुसला कर उससे अपना काम करवा लेते थे।

कहीं खुदाई हो रही और कोई कहे, "बेटा अनंता, तेरे बिना तो यह काम हो ही नहीं सकता।" बस, अनंता फावड़ा लेकर भिड़ जाता और अकेले ही चार आदमी के बराबर गड्ढ़ा खोद देता। छप्पर ठीक करवाना हो, लाश उठानी हो। प्रेम से बोलो तो अनंता हर काम कर देता।

गाँव में एक जुलाहा महाजन रहता था। बिंदियाचंद। वह बहुत पैसेवाला था। अपना घर बनवा रहा था। दस लोग मिलकर दो खंभों को खड़ा नहीं कर पा रह थे।

किसी ने हँसते हुए कहा, "यह काम तो केवल विधवा का बेटा अनंता ही कर सकता है।"

तभी वहाँ से अनंता गुज़रा तो महाजन ने आवाज़ दी, "अरे अनंता, इन खंभों को खड़ा कर दे। तुझे दो रुपये का नाश्ता दूँगा।"

अनंता भड़क गया, "क्यों रे महाजन, मैं तेरा ग़ुलाम हूँ, जो तेरी मज़दूरी करूँगा?"

इतना बोलकर अनंता उसे मारने दौड़ा। जान बचाकर महाजन भाग खड़ा हुआ। अनंता ने गुस्से में वहाँ लगे सारे खंभे गिरा दिए।

अनंता से कोई भी काम प्यार से ही करवाया जा सकता था। जुलाहे ...में इतनी बड़ी घटना हो रही थी अनंता को कोई फ़िक्र नहीं? सुबह से ही ...भींग-भींगकर गाँव के चारों ओर घूम रहा था। पानी में बहने वाले भुट्टे, ...की के पौधों को वह टोकरी में जमा कर रहा था। उसने गाँववालों की ...सुनी तो हँसते-मुस्कराते मस्ती के साथ बाँध के पास जा पहुँचा। उसने ...ा, पानी की तेज़ धार गाँव की ओर बहती चली आ रही है। वह ख़तरे को ...गया। अनंत तेज़ी से गाँव की ओर दौड़ा। विनोदबिहारी ठाकुर के घर के ...मने का दरवाज़ा पाँच हाथ ऊँचा और चार हाथ चौड़ा था। अनंता ने फ़ौरन ...े उखाड़ लिया और उसे लेकर दौड़ पड़ा। रास्ते में माँ-पार्वती के आँगन में ...ुली देखी तो उसे भी बग़ल में दबा लिया।

गाँव के मुहाने पर दरवाज़े को तिरछा रखकर अनंता ने एक ढेकी की ...क लगा दी, फिर पीठ के सहारे दरवाज़े को खड़ा कर दिया, और ज़ोर-ज़ोर से ...ना, "मिट्टी डालो... मिट्टी डालो।"

लोग दरवाज़े के दोनों तरफ़ फटाफट मिट्टी डालने लगे।

अनंता के सीने तक मिट्टी भर गई लेकिन उसने परवाह नहीं की। बस, ...ही कहता रहा, कि "मिट्टी डालते रहो, मिट्टी डालते रहो।"

अनंता के गले तक मिट्टी भर गई। ...फिर होठों तक।

आख़िरी में बस लोगों को इतना ही सुनाई पड़ा, "हरि बोलो... मिट्टी डालो... हरि बोलो... मिट्टी डालो।"

देखते ही देखते मिट्टी की दीवार खड़ी हो गई। पानी की धार भी थम गई। तब लोगों की जान में जान आई। उसके बाद लोगों ने अनंता को खोजना शुरू किया।

"अरे, अपना अनंता कहाँ है? कहाँ है अनंता?"

लेकिन उसके सिर पर तो दो हाथ मिट्टी जम चुकी थी।

गाँव की रक्षा के लिए अनता ने बलिदान कर दिया था।

अब चारों ओर एक ही आवाज़ उठ रही थी, "धन्य है, विधवा का बेटा अनंता, धन्य है।"

बारिश थम चुकी थी। नदी का पानी घट चुका था। गाँव में बाढ़ का ख़तरा टल चुका था।

उधर अनंता की माँ अपने बरामदे में बैठी थी। शोर सुनकर वह सोचने

लगी, "चलूँ, देखूँ, क्या हुआ है। रात हो गई मगर उसका बेटा अब तक क्यों नहीं लौटा, क्या बात है? उसे बुलाकर लाती हूँ।"

अपने पति की बाँस की लाठी लेकर सिंहनी घर से निकली।

रास्ते में उसने सुना, "धन्य है अनंता!"

भीड़ सिंहनी के पैर छूकर कहने लगी, "धन्य, धन्य है तेरा बेटा! धन्य है।"

वह सब समझ गई कि क्या हुआ। उसने किसी से कुछ नहीं कहा। सीधे घाट पहुँची।

बाँध के चारों ओर घूमकर कुछ देखती रही। अचानक वह मुड़ी और नदी में कूद पड़ी।

लोगों ने छप्प की आवाज़ सुनी।

एक ने पूछा, "अरे, क्या हुआ?"

दो-चार लोग मशाल लेकर नदी की ओर दौड़े। सबने देखा, पाँच हाथ की दूरी पर भँवर के बुलबुले निकल रहे थे और दस हाथ की दूरी पर बाँस की लाठी बहती चली जा रही थी।

12.

कालिका प्रसाद गोराप

बाबू शिवप्रसाद चौधरी ने कहा, "आज दिन की दोपहर सभा होने वाली थी। कल अपराह्न से ही महाजनों को सूचित कर दिया गया था। देखिए, अभी दोपहर ढलने को है। सभी पहुँचे नहीं हैं। निहायत ज़रूरी काम में ऐसी देर करने से कैसे चलेगा?"

बाबू जगबंधु मल्ल ने कहा, "अच्छा, ठीक है, अहे मंगनी महांति जी, लिख लीजिए तो कौन-कौन पहुँचे। एक काग़ज़ में सबका नाम लिख लें।"

मुंशी मंगनी महांति ने सन से बने एक फ़र्द बालेश्वरी काग़ज़ को लकीर खींचने की तरह आठ बार तह किया। पास में मिट्टी की दवात रखी हुई थी। इसमें आधा कपड़ा भरा हुआ था और आधा स्याही। सरकंडे की एक क़लम लेकर लिखने लगे श्री श्री श्यामजू महाप्रभु के चरणों में शरण।

तुला राशि के सोलहवें दिन शुक्ल पक्ष द्वितीया गुरुवार को बाबू रघुनाथ दे के घर सभा लगी। ये बाबूगण सभा में पधारे–

1. श्री श्रीबाबू रघुनाथ दे
2. एजन शिवप्रसाद चौधरी
3. एजन जगबंधु मल्ल
4. एजन रामदास महापात्र
5. एजन नाकफोड़ी नायक
6. एजन बाबू नवघन श्यामसुंदर प्रसाद राउत
7. एजन परम परिजा
8. एजन चरम दास

मुंशी जी नाम लिखते वक़्त जिन अक्षरों पर ज़्यादा स्याही लग गई थी और जो अक्षर सूख न पाए थे उन पर साफ़ महीन कपड़े में बारीक रेत से बनी पोटली रख देते थे। ख़ैर, मुंशी जी ने नाम सुनाए।

बाबू चरण दास ने कहा, "बस, बस। जिन लोगों का आना निहायत ज़रूरी था, वे तो आ गए हैं। किसी और को आना है तो आए वह बाद में। अब बैठे रहने की ज़रूरत नहीं है।"

बाबू परम परिजा बोले, "क्यों चौधरी साहब? आज की बैठक का मुद्दा क्या है? अब और देर क्यों?"

बाबू शिवप्रसाद चौधरी ने कहा, "अब क्या कहें? हम सभी एक ही नाव के सवारी हैं। अब जो संकट मँडरा रहा है, उससे जहाज़ी कारोबार ख़त्म ही मानिए। आप सभी देख रहे हैं कि पिछले दो साल से परिजा बाबू का जहाज़ राजराजेश्वरी प्रसाद, मल्लजी का दुर्गाप्रसाद, मेरा जहाज़ कालिकाप्रसाद, लगातार पाँच जहाज़ बिना आँधी-पानी में भी ग़ायब हैं। हमारी सोच रही है कि डूबे हुए जहाज़ पहाड़ से टकरा जाते हैं। समुद्र में तमाम पहाड़ डूबे हुए होते हैं। भाटा के दौरान थोड़ी-बहुत चोटी दिख जाती है। ज्वार में छिप जाती है। जहाज़ तो घोड़े की तरह दौड़ता है। माँझी को इसका अंदाज़ा नहीं रहता। पहाड़ को जहाज़ में छू भी लिया तो उसका चकनाचूर होना ही है। अब पूरा मामला, साफ़ समझ में आ गया है। दे साहब, अपने टँडैल को बुलाइए तो ज़रा। बाबुओं के सामने पूरी बातें बताए।"

बाबू रघुनाथ दे ने पुकारा, "अरे ए हग्रू टँडैल, शुरू से अंत तक जो कुछ भी हुआ, बाबुओं के सामने बोल। ख़बरदार, एक भी शब्द न छूट पाए।"

हग्रू टँडैल ने गले में अंगोछा डाला। ज़मीन पर माथा टेका। बाबुओं को एक-एक कर प्रणाम किया। इसके बाद बोला, "हुज़ूर, पिछले साल मकर कृष्ण द्वितीया के दिन दोपहर को भाटे में हम लोगों ने चार जहाज़ बंदरगाह से रवाना किया। नदी में भाटे के साथ चलते-चलते तीसरे दिन दोपहर बाद मुहाने पार कर शाम को समुद्र में लंगर डाला। अगले दिन ख़ूब तड़के पूरब में जैसे पौ फटी, सभी ने एक साथ लंगर उठाया। दो जहाज़ों ने झंडा फहराते हुए हमें प्रणाम किया। हमारे माँझियों ने भी उसी तरह झंडा फहराया। ये दोनों जहाज़ दक्षिण की ओर रवाना हुए। एक चला लक्ष्यद्वीप की ओर, दूसरा निकला कोलंबो बंदरगाह के लिए। लक्ष्यद्वीपवाले जहाज़ में च्चिड़वा और चावल बनाने वाली हांडी लदे हुए थे।

कोलंबोवाले जहाज़ में सिर्फ़ चावल लदा था। नायक बाबू का जहाज़ दुर्गाप्रसाद स्वरूप उत्तर दिशा में गंगानदी के मुहाने सुतानटी हाट की ओर चला। हम लोग यवद्वीप-बताग़ी बंदरगाह की ओर पूर्व दिशा में निकले। तब पश्चिमी हवा चल रही थी हौले-हौले। पतवार को सीधा थाम रखा था। दिन-रात

जहाज़ भागता जा रहा था। समुद्र में दिन-रात एक-सा लगता है। रात को उत्तर दिशा में सफ़ेद तारा और रात बीतते पूरब दिशा में भोर का तारा मार्गदर्शक बनते हैं। चौथे दिन ख़ूब तड़के समुद्र में सूरज देवता की आभा दिखाई पड़ते ही उधर लगभग दस कोस की दूरी पर दूसरे जहाज़ का पाल दिखा। जहाज़ हमारी ओर भागता चला आ रहा था। फिर दिखा जहाज़ के पिछले हिस्से का झंडा फहराने वाला खंभा। जहाज़ के सामने से मस्तूल की चोटी तक बंधा हुआ रस्सा। ऊपर दो बड़े-बड़े लाल झंडे फहर रहे थे। जहाज़ के फ़र्श से लेकर मस्तूल की चोटी तक बँधी सीढ़ीनुमा रस्सी से ऊपर चढ़कर मैं मस्तूल पर बनी कुर्सी पर जा बैठा। वहाँ से मैंने दूरबीन से देखा। इसके बाद धायँ-धायँ की आवाज़ के साथ उसी जहाज़ से चार बम फ़ैर किए गए। हमारे माँझी ने सकते में आकर फ़ौरन ताक़ीद की कि जहाज़ के नीचे से छेद होकर पानी घुस सकता है। पूरब-पूरब। हमारा कालिकाप्रसाद रास्ता बदलकर पूरब की ओर बढ़ने लगा। उस जहाज़ ने भी हमारा पीछा किया। दिन के पहले प्रहर भेंट हुई। दोनों टकराते-टकराते बचे।

चौधरी बाबू बोले अरे, तुम लोग बिना समझे-बूझे क्यों उस जहाज़ के पास गए। हग्रू बोला, ''हुज़ूर, किसी जहाज़ पर ख़तरे का झंडा फहरे या किसी और तरह की मुसीबत आए तो दूसरे जहाज़ उसके पास पहुँचेंगे। दरिया ठकुराइन का ऐसा हुक्म है।

इसके बाद हुआ यह कि उस जहाज़ में रोयेंदार काले कपड़े पहने आठ-दस तुर्क खड़े थे। उन्होंने घबराहट में फ़ौरन आवाज़ दी, ''जहाज़ बाँधने की रस्सी रस्सी-सी लाओ।'' खलासियों ने चार रस्सियाँ फेंक दीं। तुर्कों ने दोनों जहाज़ कस कर बाँध दिए। हमारे ख़लासी भी दोनों जहाज़ों की दीवारों को जहाज़ में रखी पतली रस्सी से बाँधने लगे। दोनों जहाज़ बाँध दिए जाने के बाद उस जहाज़ के गोदाम से और यात्रियों के कमरों से निकलकर लगभग चालीस से ज़्यादा आदमी झटपट हमारे जहाज़ पर कूद पड़े। उन लोगों की शक्ल-सूरत देखकर हम भौचक हो गए। किसी के भी हाथ-पैर न चल रहे थे। लकड़ी की तरह खड़े के खड़े रह गए हम। वे सभी पाँच-पाँच हाथ के मरद। मोटे-ताज़े। राक्षसों की तरह बलवान। फ़िरंगियों की तरह लाल-लाल चेहरे। मुँह से शराब की तेज़ गंध निकल रही थी। सभी तगड़े मतवाले बंदरों की तरह हमारे जहाज़ के इधर से उधर दौड़ रहे थे। हाथों में नंगी तलवारें, कमर पट्टी की एक ओर म्यान और दूसरी ओर तमंचा झूल रहा था। वे हिप हिप करते चिल्ला रहे थे। हम सब भौचक्के खड़े थे। हम लोगों को जोड़ियों में बाँधा गया। हमारा मांझी नाराज़गी में कुछ कहना चाह रहा था! एक

राक्षस ने ऐसी तलवार चलाई कि उसका सिर पाँच हाथ की दूरी पर जा गिरा। नीचे गिरा हुआ माँझी का शरीर छटपटा रहा था। उस राक्षस ने माँझी का सिर हमें दिखाकर बड़बड़ाते हुए कुछ कहा। हमारी समझ में कुछ न आया। एक-दूसरे राक्षस ने ठहाका मारते हुए माँझी का एक पैर पकड़कर समुद्र में उसकी धड़ फेंक दी। अब हमें काटो तो खून नहीं। हमें ले जाकर उनके जहाज़ के एक कमरे में बंद करके बाहर से ताला लटका दिया। रोज़ सुबह आधा-आधा सेर चिउड़ा और एक-एक लोटा पानी मिलता था। किसी ने खाया, किसी ने नहीं खाया। जहाज़ के खलासियों के सरदार और गोदाम रक्षक शंकर बेहेरा के पेट पर एक राक्षस ने जूते से ऐसी लात जमाई कि वह दो दिन में पड़े-पड़े चल बसा। हमने उसे समुद्र में फेंक दिया। उन चमारों को छूने न दिया। तीसरे दिन शाम ढलने को थी। जहाज़ ने किसी मुल्क में लंगर डाला। बाद में पता चला कि वह कोई मुल्क न था। एक टापू था। समुद्र के बीचोबीच। नाम है उसका छणद्वीप। हमें वहाँ ले जाया गया। जेलख़ाना में ठूँसा गया। वहाँ और भी लोग बंदी थे। एक महीने बाद हमें वहाँ से निकाल कर दूसरे स्थान पहुँचाया गया। कोई किसी का चेहरा तक नहीं देख पाता था। एक तुर्क ने चेतावनी दी कि हुक्म न मानने से या भागने की कोशिश करने से माँझी की हालत भुगतनी पड़ेगी। उस मुल्क का एक राजा है। वह बुरा राजा है। डकैतों का राजा है। नाम है उसका गंजेइनिश (Ganjalish)। उस राजा के कई और सरदार हैं। बाद में उनके नाम भी हम जान सके। कप्तान मालफीका (captain Malpica), जोकरता (Jucarte), हग्री बुस (hagery Buse), मेस्तर दिकस्त (mister decsta) आदि। कई और भी सरदार हैं, उनके नाम भूल रहा हूँ। फिरंगी सेना और तुर्क सेना भी बड़ी संख्या में है।"

बाबू नाकफोड़ी नायक ने पूछा, "वह राजा किस जाति का है? क्या वह फ़िरंगी है?"

हंग्रू टंडैल, "हुजूर उनकी जाति पुर्तगाली (Portuguese) है, ये फिरंगियों की तरह है।"

बाबू नाकफोड़ी नायक, "क्या वह राजा खुद डकैती करने जाता है?"

हग्रू टंडैल, "नहीं हुज़ूर, सरदार डकैती करने जाते हैं। बड़ी-बड़ी डकैतियों में राजा खुद जाता है। तमाम जहाज़ हैं उसके पास। डाका डालकर भी जहाज़ हथिया लिए गए हैं। असुर सैनिक जहाज़ों में डकैती करने जाते हैं। हाँ, एक बात तो बताना भूल ही गया। एक दिन अपने खलासी भीम को देखा था। उस पर नज़र पड़ते ही वह भागते हुए आया और मुझसे लिपट गया। हमें चाबुक से पीटते हुए अलग कर दिया। फिर मैं उसे देख नहीं पाया।"

बाबू रघुनाथ डे ने पूछा, "तू कैसे लौट गया?"

हरू टहैल, "ढाका नाम का एक मुल्क है। उस देश में एक बहुत बड़ा धनी ज़मींदार है। ख़बर पाकर गंजेइनिश दस जहाज़ों में चार-पाँच सौ सैनिकों को लेकर डकैती करने निकला। मैं एक खलासी के रूप में था। शाम के झुटपुटे में जहाज़ ढाका पहुँचा। जैसे ही सैनिक जहाज़ से उतरे मैं भाग आया। छह महीनों तक जंगलों, मुल्कों में घूमते फिरते लोगों से पूछताछ करके आ पहुँचा।"

बाबू रामदास पात्र ने कहा, "आप लोगों ने तो सारी बातें सुनीं। अब सारी बातें खुल चुकी हैं। सारे जहाज़ समुद्र में कैसे गुम जाते हैं। कोई कुछ कह रहा था, लेकिन अब शंकाएँ मिट गईं। समुद्र में ऐसी डकैती चलती रही तो जहाज़ों का कारोबार भला कैसे होगा? ये लीजिए डे बाबू दस जहाज़ों के मालिक हैं। उन्हें नहीं अखरेगा। लेकिन छोटे-मोटे महाजनों का क्या होगा?"

बाबू रघुनाथ डे ने कहा, "आप भी, क्या जो कहते हैं? दस जहाज़? कालिका प्रसाद से मेरी कमर टूट चुकी है। एकदम नया जहाज़ था और वह भी पूरा लदा हुआ। सोचिए तो सही, कितना लुट गया?

बाबू चरणदास बोले, "डे साहब! पिछले माघ में जो जहाज़ तैयार हुआ था, यह क्या वही था? मिस्त्री अर्जुन महारणा के हाथ से बना वह जहाज़ क्या ख़ूब था, क्या लदवाया था?"

बाबू रघुनाथ डे, "सही कहा आपने, जहाज़ों में जहाज़ था वह। चाल भी वैसी। मुहाना पार होने के बाद एक ही दिन में कोलकाता पहुंच जाता था। हाँ, क्या बोले? लदा हुआ माल? छह हज़ार मन चावल, दो हज़ार मन लोहा और दो हज़ार रुपये के कपड़े। बताबी बंदरगाह के अंग्रेज ग्राहकों को सफ़ेद और साफ़ चावल चाहिए। उस समय एक मन चावल का भाव था ग्यारह आने दो पैसे। मैंने दो पैसे अधिक देकर बारह आने में पूरा साफ़ और सफ़ेद माल ख़रीदकर भेजा था। सोचिए, कितनी बड़ी हानि हुई? घर के बच्चे उस जहाज़ को बड़ा पसंद करते थे। उन्हीं के कहने पर लकड़ी के बदले इस्पात की चादरें लगवाई थीं। उन्होंने जहाज़ के बाहरी हिस्से को चित्रित करके रंग-बिरंगी पताकाओं से सजाया था। कच्चे दिमाग़वाले गोविंद की बातों में आकर मैंने बताबी बंदरगाह रवाना किया अन्यथा विशाखपत्तनम भेजता।

बाबू चरणदास बोले–तो क्या हुआ, आजकल इसी बंदरगाह में दो पैसे मिलते हैं।

बाबू परम परिजा ने कहा, "छोड़िए वे बातें, अब तो सारा मामला खुल

चुका है। मुझे लगता है कि कड़ी सुरक्षा के बिना जहाज़ को समुद्र में उतारना मुनासिब नहीं है।"

बाबू रामदास महापात्र ने कहा, "तो क्या जहाज़ समुद्र में न उतार कर गोदी (डक) में बाँधकर रखें? चाहे चोरी हो या डकैती जहाज़ तो समुद्र में रवाना करना ही होगा। मेरा मानना है कि उत्तर-पूर्व मार्ग छोड़कर सिर्फ़ दक्षिण की यात्रा करनी होगी। इस दिशा में जलदस्यु अभी आए नहीं हैं।

बाबू चरणदास बोले, "ऊँ-हूँ, यह बात नहीं है। दक्षिण दिशा में आज नहीं हैं। कल आने में कितनी देर है? उनका तो कोई दूसरा धंधा है नहीं, समुद्र में घूम-फिर कर डकैती करते रहते हैं। उत्तर दिशा में डाका डालने को नहीं मिला तो दक्षिण की ओर बढ़ेंगे।"

बाबू नवघन श्यामसुंदर रावत ने कहा, "आप लोगों ने टंडैल से सुना कि सारे डकैत फिरंगी जाति के हैं। तब चलिए फिरंगियों से कारोबार बंद कर दें। चोर-डाकू तो इनके जाति भाई हैं। कारोबार ठप्प हो गया तो देश, समुद्र या चारों ओर से भागेंगे।"

बाबू चरणदास बोले, "ना भाई, यह बात पसंद न आई। टंडैल से सुना नहीं, यह गाँजनशा छणद्वीप में जड़ जमाकर बैठ चुका है। वह क्या अब हटने वाला है। छणद्वीप समुद्र के बीचोबीच एक संकटपूर्ण स्थान है। पूरे समुद्र पर उसका अधिकार है। एक बात और है, यदि फिरंगियों को भगा देंगे तो कारोबार किसके साथ करेंगे? भले ही वे म्लेच्छ हैं, शराब पीते हैं, मांस खाते हैं, फिर भी वे लक्ष्मी पुत्र हैं। तगड़ा कारोबार है। झगड़ा-झंझट नहीं, बात ही बात में सौदा पक्का करते हैं। और भी एक बात है। देश से भगाए जाएँगे तो सभी मिलकर समुद्र में डाका डालेंगे। तब क्या चारा है?"

बाबू रामदास पात्र बोले, "नाहक बक-झक हो रही है। सुना नहीं कि डकैत फिरंगी नहीं हैं। फटवा गाय की जाति के हैं।"

बाबू परम परिजा तनिक ख़फ़ा होने के अंदाज़ में बोले, "आप लोगों को भीतरी बातें मालूम नहीं हैं। लेकिन बोले जा रहे हैं। हमें मालूम है असली बात क्या है। फिरंगी खलासियों की ज़ुबान से सुना है कि इस समुद्र की ठीक पूर्व दिशा के उस पार एक टापू है। उसका नाम विलायत है। काफ़ी दूरी पर है। बालेश्वर की नदी के मुहाने से बिलकुल पूरब की ओर जहाज़ रवाना करें तो उस देश में पहुँचने के लिए डेढ़ साल लगेंगे। हमारे देश की छत्तीस क़िस्म की जातियों की तरह वहाँ भी ओलंदाज, डिंगेमार, अंग्रेज़, फ़ारसी आदि कई जातियाँ हैं। देखते नहीं, इस बंदरगाह में भी उनके अलग-अलग मकान हैं। यह सच है

कि फतवागाय वाले भी फ़िरंगी हैं। ह्यू टंडैल ने कहा भी था कि फतवागाय वाले रविवार को कोई काम नहीं करते हैं। गिर्जा पहुँचकर प्रार्थना करते हैं। उनके पुरोहित भी नौटंकीवालों की तरह काले कपड़े का घाघरा पहनते हैं। दिन में मोमबत्ती जलाते हैं। घुटने टेककर पानी छिड़कते हैं।"

बाबू रामदास पात्र ने कहा, "सही बात, बिलकुल सही है। अलग जाति के नहीं हैं। उस दिन रात को मैंने देखा कि फ़ारसी सेंथिमी भौं साहब डिंगेमार बड़े साहब के घर में बैठकर खाना खा रहे थे। ज़रूर एक ही जाति के हैं। ये टोपीवाले एक ही जाति के हैं।"

बाबू रघुनाथ डे बोले, "नहीं जी, अलग-अलग जातियों के हैं। देखते नहीं, गोदाम घर, गद्दी, जहाज़, कारोबार सब अलग-अलग हैं। रही बात खाने की तो परदेश में कौन किसको देखता है? खैर जो हो, अंग्रेज फिरंगी होने पर भी उनकी जाति ब्राह्मण जैसी है। देख रहे हैं न सभी बंदरगाहों के पास बड़ी-बड़ी कोठियाँ बनवाकर रह रहे हैं। अँग्रेज उनके साथ शामिल नहीं होते। वे मुहाने के पास बलरामगढ़ में ठेले लगा रहे हैं। बदन लाल है इनका जबकि उनका सफ़ेद हैं।"

बाबू चरण दास ने पूछा, "क्यों डे साहब? अंग्रेज-फिरंगियों के दो बड़े-बड़े जहाज़ गवगाँव की गोदी में साल भर से बँधे पड़े हैं, विलायत रवाना क्यों नहीं होते? उन दोनों जहाज़ों के नाम क्या हैं? अरे हाँ, एक का नाम डायन मूँड (diamond) और दूसरे का है लिली (lily)।

बाबू रघुनाथ बोले हा-हा, दास जी, यह बात आपने नहीं सुनी? विलायत में सारे फ़िरंगी आपस में लड़-भिड़ रहे हैं। सभी फिरंगी एक तरफ हैं तो अंग्रेज़ फिरंगियों का तबका दूसरी तरफ़। समुद्र में अंग्रेजों के जहाज़ देखते ही छीन कर ले जाते हैं।" "और कब तक यह जहाज़ बंदरगाह में पड़ा रहेगा?"

बाबू रघुनाथ डे, "अन्य जहाज़ जा रहे हैं। लेकिन, समझ लें कि डायन मूँड यहीं पड़ा रहेगा। जहाज़ को ले जाने वाले आदमी हैं कहीं? बात यह है कि सभी देशों के खलासी छोटी जात के हैं। ख़ूब शराब पीने वाले। जहाज़ बँधा रहा। कोई काम-काज नहीं। शराब पीना शुरू कर दिया। काली मिर्च, बाखर और चावल लेकर एक प्रकार की शराब बनाई। दिन-रात उसका सेवन करते रहे। काली मिर्च और बाखर आग की तरह गर्म है। ठंडे देश के लोग इसे कैसे पचा सकते? पाँव पसार कर सो रहे हैं। ऐसे में जहाज़ कौन चलाएगा?

परम परिजा, "उनके डर से अंग्रेज घबराए हुए हैं। हमें कहाँ छोड़ेंगे? चलिए आज से सिर्फ़ अंग्रेजों के साथ बलरामगढ़ और कोलकाता की हाट में

ही कारोबार होगा। उन लोगों के साथ आज से कारोबार बंद।''

बाबू रघुनाथ डे, ''जानते हैं क्या हाल है कोलकाता की हाट का? उसका सारा हालचाल आढ़तदार से सुन रखा है। अंग्रेज फिरंगियों में एक साहब हैं; बड़ा ही धार्मिक। न शराब पीता है और न मांस खाता है। रोज़ गंगा में नहाता है। कालीघाट में प्रसाद चढ़ाता है। सिर्फ़ जौ, छतौना और चना खाता है। सारे देश में उसका बड़ा नाम हैं। लोग उसे 'जौ चनेवाला साहब' के नाम से जानते हैं। कोलकाता की हाट, पहले घना जंगल था उस 'जौ चनेवाले साहब' ने जंगल साफ़ करवाया और हाट लगाई। उसका कारोबार बहुत हद तक ठीक-ठाक है, साफ़-साफ़। देश के लोग उसे प्रभु जैसा मानते हैं। देश के कोने-कोने से महाजन-ज़मींदार आकर कोलकाता में घर बना रहे हैं। तमान ऊँचे महल खड़े हो रहे हैं। साहब के तैलंगी सैनिकों का हाट में पहरा लगा रहता है। चोरी-चकारी का डर नहीं है। उस साहब ने एक काम और किया है। हाट की उत्तर दिशा में एक खाई खुदवाई है। मराठा घुस न सकते, फिर डर किसका? हाट में माल बाहर पड़ा रहे तो भी कोई छूने वाला नहीं है।''

बाबू जगबंधु मल्ल ने कहा, ''तब तो बात बढ़ाकर क्या फ़ायदा? चलें, आज से फिरंगियों के साथ कोई कारोबार न करें सिर्फ़ अंग्रेज़ बणिकों के साथ लेन-देन होगा। सारे जहाज़ कोलकाता के लिए रवाना करेंगे।''

मल्लबाबू की बात सबको पसंद आई। सबकी एक राय बनी। हरिबोल की ध्वनि के साथ सभा समाप्त हुई। सभी अपने-अपने घर लौटे।

13.
पेटेंट मेडिसिन

मालकिन का सख़्त हुक्म है। रात तो क्या दिन में भी बाबू घर से बाहर क़दम नहीं रख सकते। "क्यों जाओगे? क्या काम है? जो कुछ करना है, घर बैठे करो। लिखो, पढ़ो। ख़बरदार जो बाहर निकले।" बाबू ख़ूब गिड़गिड़ाए तो हुक्म हुआ–सुबह पौन घंटे के लिए सदर दरवाज़े की पासवाली सड़क पर घूम-फिर सकते हैं। वह भी बहुत दूर तक नहीं जा सकते। किवाड़ की दरार से दिखाई पड़ना चाहिए।

सुबह के लगभग सात बजे बाबू चंद्रमणि पट्टनायक सदर दरवाज़े के सामनेवाली सड़क पर चहलक़दमी कर रहे थे। अचानक निगाह पड़ी तो देखा कि एक आदमी चार-पाँच क़दम की दूरी पर खड़े-खड़े उन्हें अपलक निहार रहा है। बाबू की नज़र उस पर पड़ते ही उसने इशारे से बुलाया। बाबू ने भलीभाँति निगाह डालते हुए कहा, "अरे, यह तो वही लड़का है, भद्रख का।" मन-ही-मन अत्यंत प्रसन्न हुए। हाथ के इशारे से पास आने के लिए बुलाया। खुद भी अपने दरवाज़े की ओर निहारते हुए थोड़ा- थोड़ा आगे बढ़ रहे हैं। उस लड़के के समीप होते ही, दरवाज़े की ओर चेहरा करके पीछे की तरफ़ बाएँ हाथ को बढ़ा दिया। वह लड़का बाबू के हाथ में एक चिट्ठी थमाकर झट से निकल गया है। बाबू चिट्ठी को मुट्ठी में पकड़े हुए हैं। तब न खोला। दरवाज़े के पास देखकर अच्छी तरह किवाड़ की दरार से झाँका। चिट्ठी को पढ़कर फाड़ डाला। चिंदी चिंदी बनाकर उसे हवा में उड़ा दिया।

बाबू घर के अंदर आए। बड़े प्यार से पुकारे, "ओ जी, ए जी, सुनती हो? ज़रा सुन लो न"। घर के अंदर से ऊँची आवाज़ सुनाई पड़ी, "क्यों जी, आज इतना प्रेम क्यों उमड़ रहा है? बात क्या है? अहोभाग्य है मेरा। बोलो क्या है?"

बाबू ने कहा, "जानती हो, आज चौथा दिन है। रोज़-रोज़ रात को मेरा

सिर चकरा रहा है। पेट में खिंचाव हो रहा है। बदन टीसने लगता है। बड़ी भारी तकलीफ़ होती है, बड़ी मुश्किल में हूँ।''

मालकिन ने कहा, ''बस, बस हो गया। फिर से कोई झमेला शुरू हो गया। वह जो गाँजा-शराब-अफ़ीम वगैरह जलाने-वाली नशीली पदार्थ खाए थे, उसका फ़साद है। नशीली चीज़ों की करामात कुछ कम थोड़े ही हैं। दुनिया भर की बीमारियाँ शरीर में घर कर गई। इधर तीन-तीन जगह नौकरी लगी, छूट भी गई। लोग दुत्कार रहे हैं। कितने रुपये पानी में बहा दिए? नौकरी गई, रुपये लुटे, जाने दो। जो होना था, सो हुआ। तबीयत सुधर जाए ज़रा। चार महीने की देख-भाल के चलते तबीयत कुछ सुधरी थी। नशीली चीज़ें छोड़ने से यह संभव हुआ है। अब फिर से उसका कोई पुराना फ़साद निकल रहा है।

चंद्रमणि बाबू ने कहा, ''नहीं-नहीं, बात वो नहीं है। आज सवेरे ही माधवाचार्य पंडित से मुलाक़ात हुई थी।'' उन्होंने मेरी कुंडली देखकर कहा, ''मेरी कर्कट राशि को शनि दशा का प्रकोप है। यह उसी का फिसाद है।'' पंडित जी ने कहा है, ''घबराने की कोई बात नहीं है, कुछ पुण्यकर्म करने से सारे दोष टल जाएँगे।''

बीवी जी ने पूछा, ''कैसा पुण्यकर्म करने के लिए पंडित जी ने कहा है।''

चंद्रमणि बाबू ने कहा मैं तीन दिन भुवनेश्वर, खंडगिरि, उदयगिरि में जितने शिव मंदिर हैं सभी के दर्शन करूँगा, ब्राह्मणों को दान देने के लिए कुछ रुपये साथ लेकर जाऊँगा जिससे वे सौ कुंभ नहीं हज़ार कुंभ पूजा करेंगे। सारे ग्रहदोष एक ही पूजा में टल जाएँगे। शरीर स्वस्थ रहेगा और नशा सेवन का भी मन न करेगा।

बीवी जी के मन में थोड़ा संदेह हुआ। उन्होंने कहा, ''पंडित जी आए थे? कब आए थे? मुझे तो कुछ मालूम नहीं?''

साहब ने कहा, ''नहीं-नहीं, वो नहीं आए थे, उनका बेटा आया था।''

बीवी ने कहा, ''उनका बेटा कहाँ से आया?''

साहब ने कहा, ''ओह! नहीं-नहीं, अपने नौकर को कहकर भेजा था।''

बीवी जी ने पति के चेहरे को अच्छी तरह देखा, मन-ही-मन सोचा ये सब झूठ है। तीन दिन कहीं शराबियों के साथ मिलकर गुलछर्रे उड़ाएँगे, नहीं तो तेलेंगा बाज़ार के किसी गली नें पड़े रहेंगे। कितनी मुश्किल से उन्हें सही रास्ते पर लाई हूँ। नज़रों से दूर होने पर न जाने क्या-क्या करेंगे। बीवी जी ने ज़ोर से चिल्लाते हुए कहा, ''नहीं-नहीं, आप कहीं नहीं जाएँगे। चुपचाप घर में बैठो।''

साहब ने कहा हाँ सही है। तीन दिन न जाने कहाँ घूमता फिरूँगा। अच्छा तो मैं पासवाले गाँव जाता हूँ धवलेश्वर महादेव का दर्शन करके शाम को घर लौट आऊँगा।

बीवीजी ने गुस्से से कहा, "नहीं, वहाँ भी नहीं।"

साहब ने कहा, "अच्छा, नहीं तो एक-दो रुपये दो, कटक शहर में जितने महादेव के मंदिर हैं पूजा करके लौट आऊँगा।"

बीवी ने कहा, "अगर जाना ज़रूरी है तो मकरा से कह कर एक बैलगाड़ी बुलाकर लाओ। दोनों साथ मिल कर भगवान का दर्शन कर आएँगे।

साहब गहरी साँस छोड़कर बाहर चले गए। एक जगह बैठ कर कुछ देर सोचने लगे। दिमाग़ में एक अच्छा उपाय सूझा। "अजी सुनती हो? मेरी तबीयत ख़राब है। चारों ओर घूमने पर फिर से कोई नई बीमारी शुरू हो जाएगी। पंडित जी ने यह भी कहा कि कहीं न जाकर एकांत में बैठकर भगवान का ध्यान करने से सारी विपत्ति से छुटकारा मिलेगा।"

बीवीजी ने कहा, "कैसा ध्यान?"

साहब ने कहा कैसा ध्यान! मतलब पूरे पाँचों पहर मतलब अभी से रात नौ बजे तक एक लंबा कंबल ओढ़कर सीधे लेट जाऊँगा और कोई बात मन में न लाकर जितने भी देवी-देवता हैं सभी का स्मरण करूँगा।

बीवी जी बोली ऐसे में क्या सारे ग्रहदोष टल जाएँगे।

साहब मन-ही-मन खुश होकर बोले, "हाँ-हाँ, पंडित जी ने कहा है बिलकुल सारे ग्रहदोष टल जाएँगे। उन्होंने एक बात और बार-बार कहा है कि दस रुपये भगवान के नाम पर बिस्तर के नीचे रख देना, महीने के बाद तबीयत ठीक होने पर उसी रुपये से भगवान की पूजा करना और ब्राह्मण वैष्णवों को दान-दक्षिणा देना।"

बीवी जी ने उदास मन से कहा, "तो क्या आज कुछ न खाओगे?"

साहब बोले, "राम-राम! भगवान का स्मरण करते समय क्या कुछ खाते हैं?"

बीवी जी गहरी साँस लेकर बोली, "तो ठीक है अब ध्यान शुरू करो।"

साहब बोले, "और एक बात है, भगवान का स्मरण घर के अंदर न होगा, पवित्र स्थान होना चाहिए। घर में आमिष बनता है। और कोई देवी-देवता की बात होती तो चलता लेकिन साक्षात् महादेव। घर के बाहर कोने में जो कमरा है वहाँ अच्छी तरह भगवान का नाम लिया जा सकता है। घर में ख़ामोशी होनी चाहिए। सावधान, उस घर में किसी औरत की परछाई भी न

पड़नी चाहिए। ज़रा सी आवाज़ होने पर ध्यान का कोई सुफल न होगा।"

साहब की तकलीफ़ों की बात सुनकर बीवी जी उदास भरे मन से घर के अंदर चली गई। उसी समय खाना बनाने वाले पुरोहित जी आकर पूछने लगे।, "ठकुराइन, आज खाने में क्या बनेगा?"

बीवीजी ने जवाब दिया, "आज साहब का उपवास है, और मैं अकेली क्या खाऊँगी। आज खाना न बनेगा।

रसोइया पुरोहित मुस्कराकर चला गया। मन-ही-मन कहा, हमारे मालकिन थोड़ी अजीब क़िस्म की औरत हैं। पति के लिए दिल में असीम भक्ति, पति को ज़रा भी तकलीफ़ होने पर बिना खाए-पिए दिन भर पास बैठी सेवा करती रहेंगी, साहब की बुराई सुनने पर रो पड़ेंगी और जब उन पर गुस्सा करती हैं तो हाथ में जो भी चीज़ आए मारने को दौड़ती हैं, जो मुँह में आए गाली देती हैं। लेकिन जो भी हो बीवी जो बहुत अच्छी हैं, बडे घर की बेटी, बड़े घर की बहू, दिल भी वैसा ही बड़ा। बस ज़रा-सी गुस्सेवाली हैं ज़बान से कड़वी।

साहब अपने नौकर मकरा को घर के बाहर बुलाकर धीरे-धीरे प्यार से बोले, "सुन मकरू, मेरा एक काम करना। तू ये कंबल ओढ़कर वो कोनेवाले कमरे के अंदर दरवाज़े से सटकर सोता रह। देर रात मैं तेरे पास लौट आऊँगा। ख़बरदार! जो घर से बाहर निकला तो?"

मकरा ने डरते हुए कहा, "नहीं साहब, मैं नहीं कर सकता। ठकुराइन गुस्सा करेंगी।"

साहब गुस्से में बोले, "दुष्ट, बदमाश, तू मेरी बात न सुनेगा? दो लात मारूँगा तो अक्ल ठिकाने आ जाएगी।" थोड़ी देर शांत होने के बाद बोले "मैं बेकार में तेरे ऊपर चिल्ला रहा हूँ। देख मकरा तू अपने मामा के यहाँ जाना चाहता था न, कल चले जाना। मैं तुझे चार दिन की छुट्टी देता हूँ और ये ले चार रुपया। मैं लौटते वक़्त तेरे लिए एक अच्छा-सा तोहफ़ा लाऊँगा।

मकरा कुछ न कहकर ख़ुशी से चुपचाप अँधेरे कमरे में लेट गया।

इधर बीवीजी का मन उदास है। सुबह नहाकर आने के बाद कमरे के अंदर एक चटाई डालकर बैठ गई। बिना कुछ खाए-पिये जितने देवी-देवता स्मरण है सभी की अपने के ग्रहों की शांति के लिए पूजा की। धवलेश्वर मंदिर में सहस्र कुंभ पंचामृत चढ़ाने की मन्नत की–हे माँ कटकचंडी। कालीगली की कालीमाता दो-दो काली साड़ी चढ़ाऊँगी साथ ही बली चढ़ाऊँगी। ऐसे ही भगवान का स्मरण करते-करते दिन के तीन पहर बीत गए। ध्यान से उठते ही बीवीजी को साहब के खाने के बारे में चिंता होने लगी। अन्न तो न छुएँगे, फलाहार

करेंगे। इसीलिए आम, केला, नारियल आदि तरह-तरह के फल सजाकर रखे। बार-बार घर से बाहर झाँकती थी। दिन ढलने को आया है। अब धूप भी नहीं है।

धीरे-धीरे घर से बाहर कोनेवाले कमरे में गई जहाँ साहब ध्यान में बैठे हैं। साहब ने तो कहा है किसी की भी परछाई न पड़नी चाहिए। अपने चारों ओर अच्छी तरह देख-परख लिया। देखा तो परछाई नहीं पड़ रही है। कहीं मुँह से कुछ शब्द न निकले इसीलिए अपना पल्लू मुँह में रख लिया। फिर दरवाज़े को धीरे-से खोला। घर के अंदर झाँका, लेकिन अँधेरे के कारण साफ़-साफ़ कुछ दिखाई न दिया। देखा तो साहब शांतमुद्रा में लेटे हैं। "हाय! हाय! उन्हें कितनी तकलीफ़ होती होगी! हे प्रभु, मेरे पति की तबीयत ठीक कर दो। सच में देवता ग़रीबों की, दुखी लोगों की पुकार सुनते हैं। मैंने इनके नशा छुड़ाने के लिए भगवान से कितनी प्रार्थना की। हे माँ काली! मेरे पति को चंगा कर दे।" ऐसा पुकारते हुए नीचे झुककर अनेक बार भगवान को प्रणाम किया।

उसके बाद दरवाज़ा खोलकर जैसे ही घर के अंदर पैर रखा तो अँधेरे के कारण काला कंबल अच्छी तरह दिखाई न दिया और उनका पैर साहब के सर के ऊपर जा पड़ा। दो क़दम पीछे आकर रो पड़ी, "हाय! मुझसे कितना बड़ा पाप हुआ। हाथ जोड़कर अपने पति के उद्देश्य से भगवान से क्षमा याचना की। उसके बाद धीरे-धीरे घर के अंदर गई। साहब के पैर छूकर अपनी ग़लती के लिए क्षमा माँगी। पैर छूते ही देखा पूरा कंबल काँप रहा है। साहब के हाथ-पैर से पसीने छूट रहे हैं। हाय! हाय! पसीने से पूरे भीगे हुए हैं। उन्होंने अपने आंचल से साहब के हाथ-पैर अच्छी तरह पोंछ दिए। जैसे ही मुँह की ओर हाथ बढ़ाया तो देखा साहब की मूँछों का पता नहीं चल रहा है। दो बार हाथ फेरा, चार बार हाथ फेरा देखा मूँछें नहीं हैं। अब संदेह हुआ। दरवाज़ा अच्छी तरह खोलकर कंबल हटा दिया। गुस्से से तमतमाकर पीछे दो क़दम हट गई। ज़ोर से चिल्लाई, "क्यों रे मकरा, तू यहाँ क्या कर रहा है?" मकरा भला क्या कहता? चोर की तरह हाथ जोड़कर दीवार से सटकर खड़ा है। बीवी जी घंटों मकरा के ऊपर चिल्लाती रही। उसके बाद थोड़ा शांत होकर मन-ही-मन सोचा, "नहीं, चिल्लाने से कोई फ़ायदा नहीं। सच्चाई क्या है ये जानना होगा। मकरा को अपने वश में रखना होगा।" धीरे-से प्यार से बोलीं, "अरे मकरू! तू अपने मामा के यहाँ जाना चाहता था न तो ठीक है कल चले जाना। ये ले चार रुपये, रास्ते में मिठाई खाना। अब आवाज़ मत कर और चुपचाप जाकर रसोईघर के कोने में छिप जा।"

मकरा ने सोचा था कि बीवी जी आज गुस्से में उसे मार डालेंगी। लेकिन ये तो ग़ज़ब हुआ। उसके हाथों मालकिन की मार के बजाय नक़द चार रुपये। मकरा के तो दोनों हाथ में लड्डू। साहब के चार रुपये और बीवी जी के चार रुपये। अच्छी तरह से दो-चार बार गिनकर गमछे में बाँध लिया और खुशी से रसोईघर के कोने में बैठ गया। मकरा की जगह बीवी जी कंबल ओढ़कर लेट गई।

देर रात चंद्रमणि साहब धीरे से आकर दरवाज़े पर खड़े हो गए। एकदम नशे में चूर, चलते हुए पैर लड़खड़ाते थे। धड़ से दरवाज़ा खोला। मकरा चुपचाप लेटा है। साहब बहुत खुश होकर नाचने-गाने लगे।

''वाह वाह मज़ेदार शराब, गाँजा का नशा जिसे हो वही है समझदार।''

उठ भाई मकरू। मकरू, मेरा दोस्त मकरू अब उठ जा। तुझे क्या बताऊँ मकरू आज कितना मज़ा आया। तेरी मालकिन बेकार है जो दो महीनों से जैसे मेरे पैरों में बेड़ियाँ बाँध रखी थीं। दो महीने की कमी एक दिन में पूरी हो गई। आज से तीन साल पुरानी है उससे मेरी दोस्ती! वही जो गोपाल साहब के यहाँ नाचने आई थी, उसी दिन से है हमारी दोस्ती। उसका नाम क्या है, तुझे पता है? तेरी मालकिन का क्या नाम सुलोचना। छि! ये भी कोई नाम है? उसका नाम है उसमानतारा। नाम जैसा गुण भी वैसा। सुन तो मकरा वो कितनी अच्छी है, कितनी मेहरबान है जो पुरानी दोस्ती आज तक न भूली। आज जैसे ही मैं कटक में पहुँचा उसने मिलने की ख़बर दी। उससे मिलकर ऐसा लगा जैसे साक्षात् देवी के दर्शन हुए हों। मेरी ख़ातिरदारी के लिए उसने पहले से ही सारे इंतज़ाम कर रखे थे। पहले शराब की बोतल लाई, देशी नहीं असली विलायती माल। तू अगर एक गिलास पियेगा तो जानेगा नशे का स्वाद। हम दोनों ने मिलकर मिनटों में बोतल ख़ाली कर दी। तेरी मालकिन रोज़ अपने हाथों से तरह-तरह के व्यंजन बनाकर खिलाती है वो सब क्या खाने की चीज़ है। वो सब तो कुत्ते के खाने के भी लायक़ नहीं। उसमानतारा ने तो मेरे अपने हाथों से चन्ने, मसालेदार सूखी मछली और उसके साथ शराब परोसी। तेरी मालकिन को झाँसा देकर कैसे दस रुपये ठगकर ले गया था। उन जगहों में क्या ख़ाली हाथ जाना शोभा देता है? उसके सामने मैंने जैसे ही रुपये रख दिए, उसने तिरछी नज़रों से देखकर मुँह मोड़ लिया। मैं चालाक हूँ, तेरी मालकिन जैसा थोड़ी न बेवकूफ़? समझ गया उसे पंसद नहीं आई मेरी भेंट। एक रात मुज़रा करने पर सौ-सौ रुपये कमाने वाली को भला कैसे पसंद आता? मैं कहकर आया हूँ कल सौ रुपया दूँगा। वो हँसकर बोली, ''रुपये से क्या होगा?

आप आ जाइए उतना ही काफ़ी है।" सच बात उसके पास क्या रुपये की कमी है। उसे तो मौज़-मस्ती पसंद है। उसे रुपये नहीं चाहिए। लेकिन मैं क्या झूठा हूँ? ज़बान दी है तो रुपये ज़रूर दूँगा। मर्द की बात हाथी का दाँत। कल तो रुपये कहाँ से लाऊँगा। इसका बंदोबस्त मैंने कर लिया है। हाऽहाऽ, बहुत मज़े की बात है। तेरी मालकिन के पास ढेर सारे पैसे हैं जिसे उसने संदूक़ में छिपाकर रखे हैं। एक लोहे के कील से संदूक़ का ताला खोलकर सारे रुपये ले आऊँगा। उसे क्या पता मौज़-मस्ती क्या होती है? मस्ती की समझ तो उसमानतारा को है। तेरे मालकिन के बाप साले ने भी सात जन्म में न देखे होंगे।

बीवी जी कंबल को चार-पाँच हाथ दूर फेंककर खड़ी हो गई। ज़ोर से चिल्ला कर बोली, "क्या कहा शराबी, जुआरी, हरामख़ोर मेरा बाप तेरा साला है। दिन भर कहाँ था? हाँ कौन उसमानतारा?

साहब डर के मारे बोल पड़े, "नहीं-नहीं, मैं कहीं नहीं गया, बाहर ज़रा पेशाब करने गया था। तुम्हारी क़सम, तुम्हारे सर पे हाथ रखकर कहता हूँ।"

बीवी तो जैसे क्रोध में अंधी हो गई थी, "हाँ! मेरी क़सम खाकर, मरने का इंतज़ार कर रहा है?"

घर के कोने में एक झाड़ू पड़ी थी। उसे उठाकर सर पर, पीठ पर, हाथ-पैर पूरे बदन पर आँधी की तरह बरसाने लगी। साहब सँभाल न सके, दौड़कर बाहर आ गए। नशे में पैर लड़खड़ाते थे। धम से नीचे गिरते थे उठकर फिर से भागते थे। उसके ऊपर बरसात के पानी जैसी झाड़ू की बारिश।

बीवी जी थककर घर के अंदर जाकर नीचे लेट गई। आँखों से आँसुओं की झड़ी बहती जा रही थी। रो-रोकर जितने भी देवी-देवता हैं सबसे क्षमा-याचना करती रही, "मुझे क्षमा करो प्रभु! मैंने अपने पति पर हाथ उठाया, बहुत बड़ा अपराध किया है, मेरा दोष क्षमा करो और मेरे पति को सद्‌बुद्धि दो।" सुबह हुई। बीवी जी का गुस्सा भी शांत हो गया था। धीरे से जाकर देखा साहब नीचे धरती पर पड़े हैं। दर्द के मारे मुँह से आवाज़ निकल रही थी। पूरा शरीर दर्द के मारे सूज गया था। एक-एक जगह खून निकलकर जम गया था। उन्हें साहब की हालत देखकर रोना आया, "हाय! मैंने ये क्या किया? अपने पति को झाड़ू से मारा। हाय-हाय मुझ जैसी पापिन की कैसी दुर्गति होगी।" उन्होंने तेल गरम करके साहब के बदन में अच्छी तरह मालिश की। दोपहर में साहब की नींद टूटी। देखा तो बीवीजी पास बैठी है। रात का भय अभी भी मन में बसा था। उन्हें डर था कि कहीं फिर से झाड़ू की बारिश न हो। आँखों में अब नींद तो न थी बस डर के मारे आँख मूँदकर लेटा था। एक बार बीवी जी के

चेहरे को देखा तो मालूम हुआ डर का कोई निशान नहीं। आँखों के आँसुओं की धारा बहती जा रही थी। बीवीजी ने देखा साहब जग चुके हैं। मटके में पानी भर कर लाई। उनका हाथ पकड़कर बैठा दिया। उनके सर पर, पूरे बदन पर पानी डालकर अच्छी तरह स्नान कराया। शराब का नशा और झाड़ू की मार से पूरा बदन जल रहा था जिससे कि पानी के पड़ते ही ठंडक महसूस हुई। आँख मूँदकर भगवान की प्रतिमा की तरह चुपचाप बैठा था। बीवी जी ने अच्छे साफ़ कपड़े पहना दिए। अपने हाथों से बनाकर साहब को खाना परोसा। उसके बाद उन्हें अपने बिस्तर में लेटा दिया। कल से बीवी जी ने जलस्पर्श नहीं किया। पति के पास बैठी पैर सहलाती रही। दिन भर रोती रही। मन-ही-मन भगवान से अपनी ग़लती की क्षमा-याचना करती रही। घर में ख़ामोशी छाई थी। लाज के मारे पति-पत्नी किसी के मुख से एक शब्द न निकला। साहब ने मन-ही-मन क़सम खाई कि आज से नशा बंद।

दो महीने बीत गए, चार महीने बीत गए, छह महीने बीत चुके हैं। आस-पड़ोस नाते-रिश्तेदार सभी हैरान थे कि चंद्रमणि साहब के यहाँ पहले जो सुबह-सुबह खट-पट सुनाई देती थी आजकल बंद है। दोनों पति-पत्नी साथ बैठे बातें करते हैं, किताबें पढ़ते हैं। साहब ने जो उधारी की थी साल भर में आधे ज़्यादा चुका दिया है। साहब कभी घर से बाहर न निकलते थे। नाटक, तमाशा देखने के ले कहीं से बुलावा आने पर मना कर देते थे। यहाँ तक कि बीवी जी की ज़िद करने पर भी नहीं जाते थे। कभी-कभी शाम को दोनों साथ मिल कर बाहर घूम आते थे।

साहब के सभी दोस्त ये देखकर हैरान थे कि ऐसा चमत्कार कैसे हुआ? साहब के पिता ज़मींदार श्याम पटनायक अपने बेटे की पढ़ाई के लिए घर में मास्टरजी को रखे हुए थे, अच्छे स्कूल में पढ़ाते थे, इतनी पढ़ाई पर भी क्या होगा? खराब संगतों के चक्कर में पड़कर उन्हें नशे की बुरी आदत लगी। दिन-रात बुरे ख़्याल। पूरी रात शराबी दोस्तों के साथ आवारागर्दी करते फिरते थे। सभी शुभचिंतकों ने कहा शादी हो जाने के बाद लड़का रास्ते पर आ जाएगा। रामकृष्ण महांति की इकलौती लड़की, बहुत ही सुंदर साथ ही गुणवती। ज़मींदार साहब उन्हें अपनी बहू बनाकर घर ले आए। फिर भी लड़का न सुधरा। घर में रुपये-पैसे चोरी करके शराब पीकर मस्ती में चूर रहता था। इधर घर, जायदाद सँभालने को कोई न था। ज़मींदार साहब ने देखा ये अब सुधरेगा नहीं। यह सारा घर डुबा देगा। बहू के नाम सारी संपत्ति कर दी। पिता, ससुर, नाते-रिश्तेदार सभी ने समझाया किसी का भी कोई असर न

आ। सहसा रातों-रात ये बदलाव कैसे? गोपी साहब एक हँसोड़ आदमी हैं। हँसी-हँसी में कहा, "उस रात ठकुराइन ने जो दनादन झाड़ू की बूँदें बरसाई थीं यह उसी का नतीजा है। नशा जैसे भयानक बीमारी का निदान झाड़ू के प्रहार की दवा के सेवन से संभव है।"

पास बैठे श्याम साहब ने भी हँसकर कहा, "किसी वैद्यशास्त्र, किसी डॉक्टरी किताब कहीं पर भी इस बीमारी की कोई दवा नहीं।"

गोपी साहब बोले, "अजी आप समझे नहीं। ये है बीवी जी का अधिकार, पेटेंट मेडिसिन।"

पुरानी दुष्कृति हेतु यदि किसी सुंदरी के पति ऐसे बीमारग्रस्त हैं तो लेखक महोदय का निवेदन है कि इस पेटेंट मेडिसिन का एक बार प्रयोग कर देखें।

14.
वीरेई विशाल

मुकुंदपुर के करू विशाल और उसकी बूढ़ी पत्नी सन्निपात की बीमारी में महीने भर के अंतराल में गुज़र गए। उनका इकलौता बेटा वीरेई तब पाँच साल का था। नंग-धड़ंग बच्चा कुछ समझता न था। माँ-बाप को अर्थी में ले जाते समय सड़क की धूल पर लोटते हुए 'ओ बापू' 'मैया री' की रट लगाकर रोने लगा था। घर में कोई है भी नहीं कि बच्चे को सम्हाले। सच है कि तीन-मज़दूर थे बारह महीनों काम करने वाले। लेकिन वे जानते क्या हैं? करते भी क्या? तो क्या वीरेई अनाथ रहेगा? नहीं, नहीं, तीन पुरखों से अलग खिचड़ी पकाने वाला भाई, रिश्ते में वीरेई के चाचा-ताऊ, मौसा-फूफा यह हादसा सुनकर दौड़े चले आए। वे दयार्द्र हैं। वीरेई का विकल क्रंदन सुन रह न सके। बच्चे की धूल झाड़ते हुए सभी उसे गोद में भर लेने के लिए खींचतान करने लगे। खींचातानी से बच्चे को चोट पहुँचती है। इससे वह अधिक ऊँची आवाज़ में रोने लगता है। लेकिन रिश्तेदारों को इसका ख़्याल कहाँ है? चाचा, फूफा और मौसा में बहस छिड़ गई। सभी कह रहे हैं, "मेरे होते बच्चे को पालने का हक़ भला और किसको हो सकता है? झमेला देखकर गाँव वाले भी जुट गए हैं। बच्चा सभी को ताके जा रहा है। इतने लोग हैं, लेकिन माँ-बाप कहाँ? इस बीच पहुँच गए पीतई पात्र यानी मामा। हाँफते-दौड़ते आ पहुँचे हैं। दूर से ही बोले, "छोड़ो, हटो, बिन माँ-बाप के बच्चे को कौन पालता है? पालती है तो पिता की माँ, दादी अथवा माता की माँ, नानी। नानी नहीं रही तो क्या मामी तो है न? उसकी मामी ने तीन दिन हो गए मुँह में पानी तक नहीं डाला। बच्चे को देखे बिना जीवन त्याग देगी। दूती जीजी दुनिया छोड़ते वक़्त बोल गई थी वीरेई को उसकी मामी पालेगी। किसी काम से मैं दूसरे गाँव चला गया था। इधर इतना कुछ हो गया, मुझे पता ही नहीं। पंचों की बैठकी लगाई गई। सभी ने निबटारा किया कि बच्चे को पालने का अधिकार मामा को है। अभी लोगों की ज़बान

ह बात पूरी भी न हुई थी कि मामा चील की भाँति झपट्टा मारते हुए बच्चे को गोद में उठाए घर भागे। वीरेई ने इसके पहले मामा को कभी देखा न था। उसे एक अनजान आदमी लिए जा रहा है। इसलिए वह 'माँ, ओ माँ' की रट लगाकर ज़ोर-शोर से रो रहा था। वीरेई को ले जाकर मामा ने मामी गुरुवारी को सुपुर्द कर दिया। उन्होंने चुपके-चुपके मामी को बहुत सारी बातें बताईं कि मामी ने मुस्कराते हुए कहा, "आ रे वीरेई, आ जा। चंडी के साथ खेल।" हलवा का एक पीठा और चुटकी भर गुड़ वीरेई के हाथ रख दिया। काफ़ी देर से वीरेई ने कुछ खाया न था, यह खाकर उसने खूब पानी पी लिया।

मामा पितेई पात्र का गाँव माकलपुर है। मुकुंदपुर से क़रीब आधा कोस का रास्ता। बिन माँ-बाप का बच्चा यहाँ बड़ी खुशी से रहने लगा। उसके मालमत्ता की हिफ़ाज़त कौन करे? पितेई पात्र घर-गृहस्थी वाले हैं। अपने काम-काज उन्हें भारी थे। आधा कोश दूर जाकर बच्चे के मालमत्ते और घर-बार कैसे सँभालते? पात्र जी बेचैन होकर अक्सर गाँववालों से कहा करते, "इन्हीं कुछ दिनों में गाँववाले लड़के सामान चुराकर ले गए हैं। सारा सामान घर ले जाकर हिफ़ाज़त से न रखूँ तो सब बरबाद हो जाएगा। संपत्ति में कुछ मन धान और दो-चार बूढ़े गाय-बैल हैं। इनकी देखभाल करनी है। कहा भी गया है, "जोरू-गोरू धन-दौलत, नज़र में रहें तो सहूलियत।"

पात्रजी को दिन में फ़ुरसत नहीं। आधी रात को गाँववाले खा-पीकर सो जाते हैं। तब उन्हें फ़ुरसत मिलती है। बच्चे का सामान अपने लद्दू बैल पर लादकर घर ले आते हैं। गाँव का चौकीदार कहता है, "पात्र जी दस बैलों से बीस दिनों तक धान-चावल, कपड़े-लत्ते, बरतन भाँडे वगैरह ढोते रहे।" गाँववालों ने चौकीदार की बातें सच मान लीं। बड़ा-सा एक अच्छा-खासा घर था। उसके चार कमरों में डेढ़ सौ मन धान मौजूद था। यह सभी जानते हैं। इसके अलावा मकरू विशाल ने कर्ज़दारों को अस्सी-सौ मन के क़रीब धान कर्ज़ में दिया था। पात्र जी ने सूद सहित वसूल लिया है। छटांक भर धान भी नहीं छोड़ा है। वे बोलते, "बिन माँ-बाप के बेटे का माल कैसे छोड़ दूँ। अपना होता तो दस पसेरी छोड़ देता।"

और भी पात्र जी गाँववालों से अक्सर कहते-फिरते, "विशाल बड़ा शाहखर्च था। खाने-पीने में सब लुटा दिया, अनाथ के लिए कुछ छोड़ा नहीं। घर का जो भी थोड़ा बहुत सामान बचा था, उसे मैं अपने साथ लेता आया हूँ। जब वो काबिल हो जाएगा उसके हवाले कर दूँगा। मैं कहाँ उन चीज़ों का इस्तेमाल करूँगा? राम-राम।" मामी कई स्त्रियों से कहती-फिरती, "मेरे लिए तो पहले

बीरेई है, बाद में चंडी। उसके पिता कुछ छोड़ न गए तो क्या? मेरे पास क्या कम है? बैठे-बैठे बीस बरस तक खाए।"

समय बड़ी तेज़ी के साथ गुज़रता है पानी की तेज़ धारा की तरह। देखते ही देखते चार साल बीत गए। आगामी तुला राशि के छठवें दिन बीरेई का जन्मदिन है। आठवाँ साल पूरा होकर नौवाँ साल शुरू होगा। बीरेई और ममेरा भाई चंडी को गुरुजी के पास पाठशाला में पहुँचा दिया गया। बीरेई शांत प्रकृति का है। पढ़ाई में भी उसका मन लगा रहता है। वर्णमाला, जोड़-घटाव, गुणा-भाग आदि पूरा करके किताब पढ़ने लगा है। चंडी तेरह पूरा कर चुका है। लेकिन, आज तक वर्णमाला और पहाड़ा भी पूरा नहीं कर सका है। मामी का अकेला नयनतारा है। खूब प्यार करती हैं। माँ की शह पाकर बेटा खूब ऊधम मचाता है। घर से निकलते ही बेकार की बातों में टाँग अड़ाता है। चलती गाड़ी में हाथ डालना, व्यर्थ की परेशानियाँ मोल लेना उसकी आदत है। उसके नाम कोई शिकायत लेकर माँ के पास आता तो बेटे को डाँटना तो दूर उल्टा शिकायत करने वालों के साथ झगड़ा करती हैं। माँ का मानना है कि चंडी देखने में काफ़ी सुंदर है, इसलिए, गाँव की औरतें जलती हैं, सहन नहीं कर पाती हैं। चंडी पाठशाला में भी बड़ा झमेला करता है। खुद तो लिखता-पढ़ता नहीं, बच्चों के साथ भी बेकार में लड़ता-भिड़ता है। मार-पीट करता है। एक दिन गुरुजी से रहा न गया। उन्होंने सोटे से बड़ी पिटाई की। पीठ पर लंबे-लंबे निशान उभर आए। उसे देखकर माँ खूब ज़ोर से चीख़-चीख़ कर रोईं। गुरुजी के चौदह पुरखों का श्राद्ध किया। वे बोलीं, "मेरे पास किसकी कमी है कि मेरा लाल पढ़ने जाएगा? अरे, मेरे पास जो है, बेटा तीन पुश्तों तक बैठकर खाए।" चंडी की पढ़ाई बंद हो गई। वह तो उसकी इच्छा भी थी। गाँव के पासी और धोबी लौंडों के साथ चंडी दिन-रात घूमता-फिरता। पिता उसे किसी काम में लगाना चाहते तो माँ शेरनी की भाँति दहाड़ते हुए कहतीं, "मेरा दुधमुँहा बच्चा मेहनतवाला काम कैसे करेगा? छह या नौ तो नहीं, मेरा इकलौता बेटा है। भला वह कैसे भारी काम कर सकता है? घूमने-फिरने दीजिए।" बीरेई की भी पढ़ाई रोक दी गई। मामी ने गुस्से में कहा, "यह गुरुजी किसी काम का नहीं है। क्या जो पढ़ाता है? महीना पूरा होने से पहले दो आने भरो। फिर क्या कि आज पहाड़ा लिखेगा, पूजा चाहिए एक सेर चावल, एक सुपारी। पंद्रह दिन भी नहीं बीते होंगे जोड़-बाकी लिखेगा। फिर पूजा। नहीं, ऐसा नहीं होगा।" दो चार दिनों के बाद मामी ने मामा से कहा, "देखिए तो जवान लौंड़ा दिन में तीन बार, जीमेगा, गाँव में फ़ालतू क्यों घूमेगा? चरवाहा लौंड़े को भगाइए,

वीरेई को वह काम सुपुर्द कीजिए।'' मामा कुछ झिझक रहे थे, डर के मारे ज़ुबान न खुल सके। उन्होंने वीरेई को बुलाया और फुसलाते हुए कहा, ''अरे बेटा वीरेई, यह जो गायों का रेवड़ देख रहा है, यह तेरा ही है। पराया आदमी ढंग से चराता नहीं। गाय-बैल सभी कमज़ोर होते जा रहे हैं। पराए लोगों का कहाँ लगाव होता है? तू जा, पेड़ की ठंडी-ठंडी छाँह में बैठकर उन पर ज़रा नज़र रखना। कोई मेहनत नहीं है, सिर्फ़ खोलकर ले जाएगा, शाम को लाकर गुहाल में बाँध देना।'' वीरेई ने लाठी उठाई और गाय चराने निकला। गाँववाले कुछ टोकते तो मामा का जवाब होता, ''वाह, लंडूरे लड़के के थोड़े-से मवेशी पराए हाथ में पड़कर डूबने को हैं। उसकी अपनी चीज़ें तो वह ख़ुद सँभालेगा न?'' असल में गायों का रेवड़ अकेले वीरेई का है। उसके पिता के निधन के बाद गाय-बैल, बछड़ा-बछिया लगभग बीस के आसपास गाँव की बीच सड़क पर हाँककर मामा लेते आए थे। गाँववालों ने देखा था। और भी आठ-नौ साल गुज़रे। वीरेई अब अट्ठारह का हो गया। बच्चा ही है। लेकिन, काम-काज में ख़ूब माहिर। सैकड़ों बीघों की खेती है मामा की। दो हलवाहों को साथ लेकर वीरेई सब कुछ सम्हाल रहा है। अब मामा खेती की ख़ास देखभाल नहीं कर पाते हैं। वीरेई देखने में सुंदर तो है ही, बातें भी मीठी करता है। शरीर में शेर की ताक़त। एक दिन की बात है। पाँडेई पात्र की छोटी बेटी कमली को एक दुष्ट बैल मारने दौड़ा। वीरेई ने उसकी पूँछ पकड़कर रोक रखा। गाँववाले सभी वीरेई को पसंद करते हैं। उसकी प्रशंसा सुनकर मामी कुढ़ती रहती हैं। लोगों से बे-वजह झगड़ती हैं। कोई चंडी की तारीफ़ करे तो वह बड़ी प्रसन्न हो जाती हैं।

चंडी का क्या कहना। वह सुबह से शाम तक घर में मिलता ही नहीं। पाँच-सात आवारा लड़कों के साथ दिन-रात घूमता-फिरता है। इनका काम है पेड़ पर चढ़ना, चौसर खेलना, गाँजा पीना। हाल ही में अफ़ीम का एक अड्डा खोल रखा है। कभी झगड़कर कभी रोना-धोना मचाकर तो कभी विनती कर माँ से रुपये-पैसे लेता है। अपने गुहाल से बीस-पच्चीस के बछड़ों को दो-चार रुपयों में ग्वालों को बेच डालता। माँ जानती तो हैं लेकिन बेटे की ग़लतियाँ छिपाए रखतीं। माँ के डर से पिता भी कुछ न कहते। पहले-पहल माँ छिपाकर चंडी को कुछ रुपये दे दिया करती थीं। अब तो उनका हाथ ख़ाली रहता है। रुपये पैसे न पाकर चंडी कई बार अपनी माँ को पीट चुका है। लेकिन, माँ मार खाकर भी चुप रहती हैं, पिता को कुछ नहीं बतातीं।

गाँव के कुछ लोगों ने वीरेई से कहा, ''अरे वीरेई, तू क्या मामा के यहाँ

हमेशा पेट भर खाने के लिए पड़ा रहेगा, अपना घर नहीं बसाएगा? बाप-दादा के नाम डुबाएगा?" बातें वीरेई को पसंद आईं। अब वह बातों का मतलब समझने लगा है। मामा और मामी के लिए उसकी ज़रूरत सिर्फ़ काम के वास्ते है। खिलाने-पिलाने या अन्य बातों में मामा-मामी को अपने बेटे से काफ़ी लगाव है। उससे रत्तीभर भी नहीं है। बेटे की शादी में डेढ़ हज़ार रुपये उड़ाए गए। उसके विवाह का ज़िक्र तक नहीं हुआ। दिन-रात मेहनत करता है। जो भी कमाता है उसे चंडी गाँजा और शराब में उड़ा देता है। मामा-मामी कुछ बोलते ही नहीं। घर-बार उजाड़ने में अब कोई देर नहीं।

शाम को मामा-मामी बरामदे में बैठे हुए हैं। वीरेई काम पूरा कर उनके पास बैठा। मामा-मामी ने दिन भर किए गए काम के बारे में जानकारी ली। काम-काज के अलावा वीरेई से उनकी कोई दूसरी बातचीत नहीं होती है। थोड़ी देर के लिए गुमसुम बैठने के बाद जम्हाई भरते हुए वीरेई ने कहा, "मामा, मैं अब अपने घर जाऊँगा।" मामा-मामी सुनकर सन्न रह गए। उनके सिर पर मानो वज्र गिरा। पिछले दो साल से वे दमा से पीड़ित हैं। शाम को चार आने की अफ़ीम खाने के बाद थोड़ा चल-फिर लेते हैं। मामा तो बरामदे से उतर भी नहीं पाते हैं। ऊपर से चंडी का जो हाल है वह उन्हें पता है। वीरेई के बिना घर गृहस्थी का क्या होगा? मामा दो-चार उसाँसें छोड़ने के बाद भाँजे को फुसलाते हुए बोले, "हाँ बेटे, घर क्यों न जाएगा? ठहरो मैं एक बहू ढूँढ़ लूँ। शादी करा दूँगा। दो-मंज़िला घर बनवा दूँगा। अभी तू बच्चा है। हमसे अलग होकर अकेले कैसे रह सकता है? तू इन गाँववालों को नहीं जानता। इन्हें पहचानने में मेरी उम्र ढल गई। तुझे लूट लेंगे। मूर्ख बने बैठा रहेगा। क्या कहता है बेटा? ठीक, बिलकुल सही, दो साल और ठहर जा। क्या कहता है बेटा?" वीरेई ने कहा, "नहीं, मैं घर जाऊँगा।" मामी बड़ी ग़ुस्सैल हैं। चंडी हज़ारों ग़लतियाँ करे, कुछ न बोलेंगी। कोई और उनकी बात अनसुनी कर दे तो देर तक गरजती रहेंगी। थोड़ा ग़ुस्से में आकर बोलीं, "क्यों रे वीरेई! ये मामा हैं, मालिक भी। इनकी बात नहीं मान रहा है। गाँववालों के बहकावे में आ गया? अरे, बोलने वाले बहुत हैं, है कोई कर दिखाने वाला? घर बिगाड़ने वालों को डायन खाए। ऐसे लोगों के बहकावे में मत आना। पाँच साल का अनाथ था तू। सड़क पर पड़ा था किसी ने, मेरी ननद मरते समय मेरा हाथ पकड़कर बार-बार बोल गई थी, "ख़बरदार मेरे वीरेई को कहीं छोड़ मत देना, अपने पास रखना। पाल-पोस कर बड़ा करना। निगोड़े गाँववालों के बहकावों से उसे बचाना।" तू मेरी बात, पिता समान मामा की बात यदि नहीं मानेगा

आप ही जलकर ख़ाक हो जाएगा। किसका क्या बिगाड़ेगा?" मामा ने कहा, "ठीक है, रहने दो। ये सारी बातें बाद में होंगी। बातें कहीं भागी नहीं जा रही हैं। सुनो, बहू को बुलाओ, बच्चा काम-धंधा करके लौटा है। पहले उसे खाना परोसो, चंडी अभी न आया तो रहने दो उसे।" वीरेई ने मन-ही-मन हँसते हुए सोचा, "अहा! आज तो मामा की बड़ी कृपा है।" रोज़ की बात है कि चंडी न लौटे तो खाना-पीना शुरू भी नहीं होता। चंडी गाँव की परिक्रमा कर लौटता है तो देर रात हो जाती है। मामा-मामी दमे के मरीज हैं। ऊपर से अफ़ीम का नशा है। रातभर नींद नहीं आती। खाँव-खाँव खाँसते रहते हैं। भोर में ठंडी हवा बहती है तो तनिक नींद आती है। चिंता और तनाव के कारण आज वह नींद भी नहीं है।

अगले दिन सुबह वीरेई बरामदे में उकड़ूँ बैठा हुआ है। धूप घर की छप्पर से उतर बाहर फैल चुकी है। मामा ने वीरेई को बाहर देखकर कहा, "बेटा क्यों बैठा है चुपचाप? चल, उठ, खलिहान में फ़सल बिखरी पड़ी है। दाने का काम भी अधूरा पड़ा है।" वीरेई की एक ही रट है, "ना, मैं घर जाऊँगा।" मामा ने आज भी बहुत समझाया। वीरेई को सराहा। वीरेई का एक ही जवाब, "घर जाऊँगा।" मामी बिस्तर छोड़ कर आँखें मलते हुए आ पहुँचीं। मामा-भानजे की बातचीत सुन चुकी थीं। एकाएक गुस्से में बोली, "जाना है तो चला जा। जाने का जाप क्यों कर रहा है?" वीरेई ने कहा, "मेरे बापू के लाए गए माल-असबाब लौटाओ। मामी ने उसी कड़क के साथ कहा, "माल-असबाब क्या? एक-आध गठरी-मुटरी ले आए थे। जा, लेता जा, दीमक लग चुकी है। जो बचा है उठा ले जा। एक नहीं, दो-तीन साल नहीं, बीस बरसों तक खिला-पिलाकर जवान बना दिया। अब क़ाबिल हो बड़े गए? मैंने उन्हें तब बार-बार चेताया था–पराया बेटा, सिक्का खोटा। भारी ज़िम्मेदारी मत लो। नहीं माने, अब भुगतो।" वीरेई ने चुपचाप हाथ में लाठी उठाई और वह सीधा चला आया।

मकरू विशाल की कुल मिलाकर पंद्रह बीघा ज़मीन थी। बड़ी उपजाऊ, एक ही चक्रवाली और ठोस-मटियार। पीतेई पात्र ने बड़ी चालाकी से इसे अपने नाम करा लेने की कोशिश की थी। ज़मींदार श्याम स्वाईं को रिश्वत देना चाहा था। लेकिन वे थे बड़े विचारवान। गाँववालों का भय तो था ही। इसलिए ज़मीन मकरू विशाल के नाम बनी रही। वीरेई गाँव में मज़दूरी करने लगा। खेती के सामान हैं नहीं। उसने साझे में खेत लगा दिया।

वीरेई बड़ा मेहनती है। दूसरों के झंझट-झमेले में नहीं पड़ता है। अपने काम-काज में लगा रहता है। शाम को काम से लौटकर थोड़ा-सा भुजा हुआ

चावल (मुरई) खा लेता। कंधे पर फावड़ा लिये निकल पड़ता। अब वह अपनी ज़गह पर रहने लायक़ एक छोटा-सा मकान बना रहा है। दीवारें बनते ही, वीरेई के बिना बुलाए मौसा, फूफा, गाँव के कुछ और लोग दौड़ते हुए आ पहुँचे। अपने-अपने घरों से लकड़ी, बाँस, फूस वगैरह ले आकर मकान खड़ा कर दिए। वीरेई की ज़मीन अव्वल दर्ज़े की बड़ी उपजाऊ है। फ़सल कटने के बाद उसे अपने हिस्से का धान लगभग सौ मन मिला। साल भर के लिए अनाज रख कर बाक़ी बेच देता। उन्हीं रुपयों से हलवाह, बैल, खेती के सामान ख़रीदकर अपनी खेती में जुट गया। चार साल में ही वीरेई ने अपने बापू के ज़माने जैसा मकान बना लिया। उसी तरह का तीन कमरेवाला। गाय-बैल तीस के क़रीब हैं। पाँच-छह कमरों में धान भरा हुआ है।

नाते-रिश्तेदार और गाँव के कुछ हमदर्द लोग कह चुके हैं, "अरे वीरेई, तू क्या हमेशा कुँवारा बना रहेगा? अब पितरों को पानी चढ़ाने का उपाय सोचो।" वीरेई भी समझने लगा है कि अब विवाह ज़रूरी है। काम-काज से लौटने के बाद आजकल रसोई बनाने में बड़ी मुश्किल होती है। बीमार पड़े तो पानी पिलाने या हाथ-पाँव सहलाने वाला कोई नहीं। शादी की इच्छा तो है लेकिन इतने रुपये कहाँ से मिलें? दूसरी जातियों में इच्छा होने पर शादी हो जाती है। लेकिन यहाँ तो बलराम गोत्री परिवारों में लड़कियों का बड़ा अभाव है। ऊँची बोली लगती है। पाँच सौ से लेकर हज़ार-दो हज़ार तक में लड़कियाँ बेची जाती हैं। लेखक को पता है। अनजान पाठक पूछ सकते हैं 'कन्या की क़ीमत में इतना बड़ा फ़र्क़? कपड़े-लत्ते फूट या तो गज़ में नापे जाते हैं या तराज़ू से तौला जाता है। नाप का वज़न कम-ज़्यादा हो तो क़ीमत भी कम-ज़्यादा होती है।' नहीं, नहीं, वैसा नहीं होता है। हम अच्छी तरह अंदरूनी बातें जानते हैं। उसका असली हाल संक्षेप में दो-चार शब्दों में बताते हैं। बलराम गोत्री संप्रदाय में अक्सर ग़रीब नहीं होते। बड़े मेहनती और अति कृपण। इसलिए उनके पास थोड़े-बहुत रुपये होते ही हैं। कन्या की उम्र, रूप और गुण की कोई चिंता नहीं। दूल्हे की उम्र के हिसाब से लड़की का मोल-तोल होता है। लड़का विवाहयोग्य हो गया लेकिन घर में विवाह के लिए ज़रूरत रुपये नहीं हैं। ख़ूब मेहनत करता है और पाई-पाई जोड़ता है। रुपयों का इंतज़ाम करते-करते दूल्हा पचास का हो जाता है। अमीर व्यक्ति दूसरी या तीसरी शादी करता है तो साठ का हो जाता है। इधर कन्या दस-ग्यारह के अंदर। ऐसी स्थिति में लड़की की क़ीमत बढ़ना लाजिमी है। वीरेई विवाह के लिए अठन्नी-रुपया जोड़ता गया। घर के अँधेरे कोने में गगरी गाड़ कर उसमें डालता गया।

पाँच साल बीते। वीरेई अब तीस के आसपास। उसे लगा कि विवाह के लिए आवश्यक रुपये जमा हो गए। शादी के लिए पहल की उसने। अकेले तो कन्या देखने नहीं जा सकता। पुरोहित भीम मिश्र को मध्यस्थ बनाया। मिश्रजी ने चारों ओर नज़र दौड़ाई। वीरेई ने उन्हें कमली के बारे में संकेत किया। राघव पात्र की छोटी बेटी है कमली। वह ख़ूबसूरत और शर्मीली है। दिनभर घरेलू कामों में जुटी रहती है। पिता की बड़ी सेवा करती है। गाँव की औरतें उसकी ख़ूब तारीफ़ करती हैं। वीरेई बचपन से कमली से प्रेम करता है। रोज़ दोनों जून खेत जाने-आने के दौरान उसे ताक-झाँक करते हुए जाता। वीरेई खेत से लौटते समय कमली गगरी लिये पानी लाने जाती दिखाई पड़ती। कमली का वही पनघट जाने का समय है। घर में पानी हो तो भी वह पानी नाले में गिराकर बग़ल में गगरी लिये निकल पड़ती। चारों ओर निहार लेती, कहीं कोई न होता तो कनखियों से वीरेई को देखती।

पंजिका से एक शुभ दिन देखकर मिश्र जी राघव पात्र के पास पहुंचे। पात्र को शायद कुछ आभास मिल चुका था। एक बोरा बिछाकर मिश्रजी को बड़े आदर के साथ बैठाया। पान-सुपारी खाने-खिलाने के बाद सुख-दुख की चार बातें हुईं। फिर दोनों असली मुद्दे पर आए।

मिश्र जी ने कहा–"पात्र जी! तुम्हारी कमली का रिश्ता वीरेई से हो जाए तो कितना अच्छा होगा?"

पात्री जी–"ठीक है, ठीक है, मुझे आपत्ति नहीं है।"

मिश्रजी–"लड़का बड़ा अच्छा है, सुख-दुख का साथी है।"

पात्र जी–"ठीक है, ठीक है, मुझे आपत्ति नहीं है।"

मिश्र जी–"लड़की बड़े आराम से रहेगी।"

पात्र जी ठीक, ठीक है, मुझे आपत्ति नहीं है।"

मिश्र जी–"ख़र्च-वर्च?"

पात्र जी–"हाँ, हाँ, असली बात पहले होनी चाहिए। मैं साफ़ कह देता हूँ कि 'कन्यासोना' में एक हज़ार रुपये नक़द। उससे एक पैसा भी कम नहीं लूँगा, न ज़्यादा। समझे मिश्र जी! मुझे झमेला-झंझट पसंद नहीं'। जो कहना था साफ़ बता दिया। क्यों, क्या कहते हैं मिश्र जी?"

मिश्र जी थोड़ी देर गुमसुम बैठे रहे। फिर बोले, "तनिक सोच-समझकर कहिए पात्र जी! बेचारे वीरेई की औक़ात है भी? वह पाँच सौ तक दे सकता है।"

पात्र जी ने थोड़ा ज़ोर देते हुए कहा, "मेरी अन्य दो बेटियों के विवाह में

पूरे दो हज़ार रुपये मिले हैं। तुम्हारे सामने की बात है। फिर ऐसी अन्याय बातें क्यों?"

मिश्र जी बोले, "तब और अब में बड़ा फ़र्क़ है। वे दोनों दूल्हे साठ साल के थे। दोनों दोहाजू। देखते नहीं, दोनों बेटियाँ विधवा बनकर क्या दुख भुगत रही हैं? इधर देखिए, वीरेई जवान है।"

पात्र जी ने गुस्से में कहा, "क्या पंडित जी! पढ़े-लिखे होकर अनुचित बात कर रहे हैं? अरे, उनका दुर्भाग्य था। वे विधवा हुईं। मैंने कहाँ उन्हें विधवा होने के लिए भेजा था। बाप जन्म देता है। इसका मतलब यह नहीं कि वह कर्म देता है।"

मिश्र जी–"छोड़िए, उस बात को। आपसे क्या बहस करूँ? आप उस अनाथ पर दया कीजिए। पाँच सौ में मान जाइए।"

पात्र जी–"पंडित जी, व्यावहारिक बातों मे दया-माया कैसी? हाँ, एक बात और समझ लें, मेरी दो और बेटियाँ नौ साल की थीं। यह लड़की चौदह की है। जैसे ही जाएगी रसोई में घुसेगी। हमारे संप्रदाय में इतनी बड़ी लड़की मिलेगी नहीं। इसके पीछे रोटी-कपड़ों में कितना लुटा चुका हूँ? पाँच सौ कहते हो शिवपुर के दीनू परिड़ा और गोविंदपुर के श्याम महापात्र रुपयों की थैली साथ लिए महीना पहले द्वार पर बैठे रहे। तब पाँच सौ में नहीं माना तो अब कैसे? ज़्यादा बकवास मत कीजिए मिश्र जी। हज़ार हैं तो बैठें नहीं तो रास्ता नापें।"

कमली दरवाज़े के कोने में बैठकर सारी बातें सुन रही थी। अब से सब कुछ समझ में आने लगा है। दीदियों की हालत से वह अपरिचित नहीं है। उसे यह भी लगता है कि वह वीरेई को बहुत चाहती है। मोल-भाव न हो पाने के कारण मिश्र जी खड़े हो गए। कमली ख़ूब रोई। दो-तीन दिनों से खाना-पीना बंद है, सिर्फ़ रोए जा रही है। माँ नहीं रही। उसके मन की बात कौन समझे। अंत में उसने एक ज़बर्दस्त हिम्मत दिखाई। गाँव की दूर के रिश्ते की अपी नानी के पास पहुँची। मन की बात खुलकर उनके सामने रखी, "नानी, मेरे बाबूजी रुपये के लालच में आकर यदि किसी बूढ़े से मेरी शादी करवाई तो मैं तालाब में डूब मरूँगी।" अपी नानी ने आकर राघव पात्र से कमली की इच्छा बताई। पात्र जी बड़े नाराज़ हुए। उन्होंने कमली को गालियाँ सुनाईं, "मैंने तुझे खिला-पिला कर बड़ा किया, आज कहती है कि पानी में कूद मरेगी। मर, देखता हूँ तू कैसे मरती है? चौदह साल तक खाती-पीती रही। रोटी-कपड़े की क़ीमत पाँच सौ रुपये गिनकर रख दे, उसके बाद मरना है तो मर। मैं मना नहीं करूँगा।"

गुस्से के मारे पात्र जी ने भले ही गालियाँ सुनाई थीं। लेकिन रात वे ख़ूब सोचते रहे। लड़की ने खाना-पीना छोड़ दिया है। मुर्दे की तरह पड़ी हुई है। सचमुच डूब मरती है तो मूल भी डूब जाएगा। ख़ूब निग़ाह दौड़ाई लेकिन अपनी जाति-बिरादरी में कोई दोहाज या कौंरा न था। अब तो लड़की को पालने का ख़र्च भी बढ़ेगा। अगले दिन सुबह पुरोहित जी को बुलावा भेजा। आज पात्र जी की आवाज़ में नरमी ही नहीं चिकनाई भी है। दोनों ने मिलकर मोल-भाव किया। सात सौ रुपये में बात तय हुई। अब गाँव के पाँच सज्जनों के समक्ष वीरेई दो सौ रुपये देगा, बाक़ी के पाँच सौ विवाह मंडप पर।

वीरेई ने हिसाब जोड़कर देखा, 'कन्यासोना' सात सौ, विवाह ख़र्च कम-से-कम तीन सौ। इन दोनों मदों में ही हज़ार रुपये का ख़र्च है। घर में जो कुछ गाड़ा हुआ था, उसे खोद-खादकर निकाला। रुपये पैसे मिलाकर कुछ छह सौ रुपये नौ आने दो सौ हुए। क्या करे, चार सौ रुपये कहाँ से लावे?" दो सौ रुपये घर से वह दे चुका है। शादी रुकी तो दो सौ भी गए। अच्छा, बाद में देख लिया जाएगा। घर में बीज भर के लिए अनाज छोड़कर बाक़ी बेच डाला। सिर्फ़ हलवाह और बैलों की जोड़ी छोड़कर सारे ढोर-बछड़े बेच दिए।

आज विवाह का दिन है। बाजे-गाजे के साथ पालकी में सवार हो वीरेई शाम को ससुर के द्वार पर हाज़िर हुआ। दूल्हा पालकी में बैठा है। पात्र बरामदे में बैठकर तंबाखू सूँघ रहे थे। घड़ी भर बीता। पुरोहित तीन-चार बार बुला चुके हैं। "आइए पात्र जी! दूल्हे की अगवानी कीजिए। पात्र जी कुछ बोल नहीं रहे हैं। बुधिया मिश्र को मामला समझ में आ गया। बोले, "पात्र जी, वीरेई रुपये लेकर आया है, अगवानी करके घर लेते जाइए, रुपये दे देगा।" पात्र जी झटपट उठे और दूल्हे की अगवानी कर ले गए। रुपये गिनने और परखने में घड़ी भर लगा। अरे वाह! छह सिक्के खोंटे हैं। गाँववालों ने ख़ूब समझाया-बुझाया, ज़िम्मा लिया। आज शुभ-कार्य संपन्न हो जाने दीजिए, कल सिक्के बदल देंगे। पात्र जी लोगों के बीच बैठे ही नहीं। वीरेई के पास कोई दूसरा चारा न था। वहीं दूल्हे के वेश में बैठकर घर के असबाब और खेती के सामान मधु महांति को छह रुपये में बेच डाले। पौ फटने से पहले हस्तबंधन खुला। पात्र जी दूल्हा और दुलहिन को विदा करने के लिए द्वार तक आए बिलकुल लथर-पथर हो रहे हैं। देर हुई तो बाजेवाले और कहार नाश्ता माँगेंगे।

वीरेई घर का अकेला ठूँठ है। दूल्हा-दुलहिन को स्वागत करके कौन ले जाए? इसलिए वीरेई पहले से चाची, मौसी, दीदी और पाँच सुहागिन स्त्रियों को बोल आया था। बिना बुलावे गाँव की स्त्रियाँ भी आकर वीरेई के घर जमा हो

गई हैं। दुलहिन सिर पर मुकुट पहने कजरौटा लेकर झुकती हुई आगे चल रही है। दूल्हा हाथ में सरौता और नारियल लिये पीछे चल रहा है। नाइन ने पहले ही देख लिया कि दुलहिन का पेट निकल आया है। लथर-पथर हो बढ़ रही है। ढंग से चल नहीं पा रही है। नाइन ने और पाँच औरतों को चिकोटी काटकर दाहिनी उँगली से इशारा करके कुछ दिखाया। सभी सधवा स्त्रियाँ दुलहिन को छोड़कर अलग हो गईं। युवा स्त्रियाँ हँसते हुए और कुछ हाय-हाय करते हुए अपने-अपने घर लौट गईं। कोई कह रही थी कि पाँचवाँ महीना होगा। औरतों ने निश्चित किया कि सातवें महीने से कम नहीं है। हमदर्द मौसी, फूफी आदि अपने-अपने घर लौटकर रोने लगीं। हाय, हाय। लड़का कुवाँरा रहता तो इससे अच्छा होता। सब कुछ बेच-बाच कर सात पुरखों को नरक में डाल दिया। सूना घर। वीरेई गाल पर हाथ रखे दीवाल से पीठ टिकाकर बैठा हुआ है। कमली ने दरवाज़े की आड़ से, जीभ से चु-चु की आवाज़ निकाल कर वीरेई को इशारा करके पास बुलाया। पेट पर रुपयों की थैली, उस पर दो धोतियाँ कसकर लपेट ली थीं। धोतियाँ खोलकर खनकती थैली को नीचे डाल दिया। वीरेई जैसे सपना देख रहा हो। स्वर्ग से एक देवी उतर आई हो। पूछा, "क्या है?" कमली ने कहा, "ये तुम्हारे रुपये हैं। गाय, बैल और साज़ो-सामान जो कुछ बेचा था, रुपये देकर सब वापस लेते आओ, तभी मैं इस घर का पानी पीऊँगी।" वीरेई ने गिनकर देखा पूरे हज़ार हैं। उसने पूछा, "अरे ये तीन सौ ज़्यादा क्यों?" कमली ने कहा, "दोनों दीदियों को बेचकर बाबूजी ने जो रुपये लिये थे, उससे दस एकड़ ज़मीन ख़रीदी है। तीन सौ बचे थे। दीदियाँ बड़ी मुश्किल में हैं, ये रुपये अब उनके पास भिजवा दो।"

दोपहर गाँव की बीच सड़क पर राघव पात्र हाँक मारते हुए पागलों की तरह दौड़ रहे हैं। वीरेई के द्वार पर हाँक लगाते हुए लुढ़क पड़े। सिर्फ़ बोले जा रहे हैं, "कमली ने मेरे गले में छुरी घोंप दी। मेरे रुपये दे दे।" गाँववाले सुनकर दौड़ते हुए आए। वे तो पहले से राघव पात्र पर नाराज़ थे। तीन लड़कियों को तीन हज़ार में बेचा। उनके मुँह में अन्न का दाना तक नहीं डालता। विवाह के दौरान नांदीमुख और तिलकंचन में दक्षिणा को लेकर कुछ नोंक-झोंक हुई थी। वे तो पहले से ही आग-बबूला थे ही। पहुँचते ही हुकम दिया, "मारो चांडाल कसाई को।" पात्र ने देखा, गाँववाले सभी मारने को उतावले हो रहे हैं। उनकी हिमायत करने वाला कोई नहीं। दो-तीन धक्के-मुक्के लग चुके हैं। रुपये क्या माँगते? घर की तरफ़ सरपट भागे। उनके पीछे-पीछे बच्चे तालियाँ बजाते हुए दौड़ रहे हैं। पात्र जी पर ढेले और धूल फेंक रहे हैं।

तीन बार गिर चुके हैं। कुहनी और घुटने छिल चुके हैं। पात्र जी को कभी किसी ने गाँव की सड़क पर नहीं देखा। कमली की ख़ूब वाह-वाही हुई।

वीरेई के चले आने के बाद मामा-मामी की बड़ी हालत ख़राब हो चुकी है। वीरेई का थोड़ा डर चंडी को था। इसलिए गौशाला से गाय या बछड़ा चोरी-छिपे बेचा करता था। अब खुले-आम दिन-दहाड़े बेचने लगा है। माँ-बाप कुछ कहते तो मारने दौड़ता है। अपना ही बेटा है। उसकी करतूतें किसके सामने सुनाते? ख़ामोश रह जाते हैं। दो ही बरसों में पचास ढोरों के रेवड़ में एक भी नहीं बची। पेट की तरह तीन बड़े-बड़े बखरे सफ़ाचट। खेती का भी वही हाल है। पात्र जी पर दमे की बीमारी हावी हो रही है। बरामदे से उतरने की ताक़त भी नहीं बची। खेत-खलिहान में भला क्या जाते? चंडी तो मौज में है। खेत में क्यों जाए? खेत मज़दूरों के ज़िम्मे है। मज़दूर एक मन बीज ले जाएगा बोने के लिए तो आधा मन डालेगा खेत में और बाक़ी मज़दूरिन की ढेंकुली में। पात्र जी से मज़दूरी लेंगे और अपना खेत निराने चले जाएँगे। ऐसी हालत में जो खेती है वह सबको मालूम है। कहा भी गया है :

"अपनी खेती पूरी खेती
छाता जूता आधी खेती
मज़दूर भरोसे टाँय टाँय फिस।"

फ़सल के जो गट्ठे खलिहान में आते वह लगान के लिए कम पड़ते।

इधर क्या हुआ कि गाँव से बड़ी भारी संख्या में गाय-बैलों की चोरी हुई। आज सुनने में आया कि सामल के बैल चुरा लिए गए तो कल परिड़ा के बथान से दो गाएँ ग़ायब। छह महीने में क़रीब चालीस-पचास मवेशियों की चोरी हो चुकी है। सारे गाँव में हलचल मच चुकी है। चोर को रंगे हाथ पकड़ने के लिए गाँववाले सलाह-मशविरा करके ताक में बैठे रहे।

एक दिन आधी रात को पांडिया पात्र का बेटा, चंडी और पासी टोले के चार लड़के दो बैलों के साथ खेतों से गुज़र रहे थे। एक आदमी ने आवाज़ दी। बीस-तीस लोग चारों ओर से घिर गए। अब चोर भागें तो कैसे? हल जोतने वाली रस्सी से हाथों को कसकर बाँध डाले। ऐसी मार पड़ी कि चोर बेहोश हो गए। चौकीदार बैलों के साथ चोरों को भी थाने में ले गया। "चोर की माँ, शर्म के मारे रो न पाए"। बूढ़े पात्र और उनकी बुढ़िया दरवाज़े बंद करके सिसक-सिसक कर रोते रहे। पूरा गाँव एक तरफ़ हो गया। वीरेई मामा-मामी की बेचैनी देख ख़ामोश बैठा न रहा। सदर कचहरी पहुँचा। दो दमदार वकील और मुख़्तार की सेवा ली। बड़ी लड़ाई लड़ी। माल के साथ गिरफ़्तार हुआ है

बचने का चारा नहीं। चंडी को कठिन परिश्रम के साथ डेढ़ साल की सज़ा हुई।

साँझ के अँधेरे की तरह मुसीबत चारों ओर घिर जाती है। चंडी की शादी में पात्र जी ने महाजन मधु साहू से रुक्का लिखकर पाँच सौ रुपये का कर्ज़ा लिया था। पात्र जी के बखारों में भारी मात्रा में अनाज था। उसे बेचकर कर्ज़ा चुकाने जा रहे थे। उनकी पत्नी ने वैसा न होने दिया। कहा कि वीरेई के खेत से जो धान आएगा उसे खलिहान में ही बेचकर कर्ज़ा चुकता किया जाए। वीरेई तो अपनी ज़मीन के साथ अलग हो गया, अपनी खेती से कोई अनाज न मिला। इसलिए कर्ज़ा बढ़ गया। ब्याज के आगे दौड़ नहीं सकता। महाजन ने मूल और सूद सहित ख़र्च मिलाकर बारह सौ रुपये की डिक्री कर रखी थी। ठीक इसी समय पात्र के घर-बार के साथ ज़मीन-जायदाद की नीलामी करके पात्र और उनकी पत्नी को घर से बाहर कर दिया। मैले-कुचैले कपड़े, शरीर पर आधा अंगुल मैल ऐसा जमा था कि खड़िया से रेखा खिंच जाए। बंदर और बंदरिया की तरह दोनों सड़क पर बरगद के पेड़ के नीचे पड़े हुए हैं।

वीरेई को पता-चला तो तत्काल दौड़ता आया। देखा कि मामी बेहोश हैं। मामा सिर झुकाए उकड़ू बैठे हैं। वीरेई ने किसी से कुछ न कहा। उसने मामी को पीठ पर लादा। मामा का हाथ पकड़कर धीरे-धीरे अपने घर ले गया। वीरेई और कमली ने दोनों को दो कटोरे तेल लगाकर नहलाया-धुलाया। फिर साफ़ कपड़े पहनाए। मामी के गले से चावल उतर न रहा है। कमली ने लगभग आधा-सेर दूध में मुट्ठीभर भात घोलकर पिला दिया।

मामा-मामी तो घर में हैं। वीरेई ने दोनों के लिए ज़्यादा से ज़्यादा चार आने का अफ़ीम और सेर भर दूध का इंतज़ाम कर दिया। कमली दूध डालते हुए कभी-कभी डेढ़ सेर के लगभग दूध डाल देती है। वीरेई की गोशाला में कई दुधारू गाएँ बँधी हैं। मामा हमेशा रास्ते वाले बरामदे में चुपचाप बैठे रहते हैं। मामी चटाई बिछाकर लेटी रहती हैं। कमली तेल लगाकर नहला लाती है। शाम को आधा कटोरा तेल निकाल कर मामी की पदसेवा करती है। कमली घड़ी भर पैर दबाती रहती है। मामी ने कभी भी यह नहीं कहा, "रहने दे बहू या कमली तू थक जाएगी।" गाँव की औरतें कुछ कहें तो कमली जवाब देती है, "अच्छा, अच्छा, रहने दीजिए। उम्र हो गई है, मन से दुखी हैं।"

15.
सभ्य ज़मींदार

बाबू बलराम बल कलकत्ता बड़ाबाज़ार के गद्दीदार महाजन हैं। उत्कल के सभी व्यापारियों के दलाल हैं। पूरे माल का उन्हीं के हाथ से होते हुए आयात तथा निर्यात होता है। लाखों का कारोबार होता है। बरसों पुरानी बात है। रेल का नाम तो लोगों ने सुना न था। स्टीमर भी नहीं चला था। बालेश्वर के जहाज़ों से माल का आयात और निर्यात जारी था। कलकत्ता से आयात होने वाले माल में तंबाकू मुख्य था। कलकत्ता से जहाज़ से माल लाया जाता और बालेश्वर बंदरगाह पर उतारा जाता तो भीड़ लग जाती है। यहाँ से बैलगाड़ियों में सारे उत्कल में भेजा जाता। इसलिए सारे उत्कल में तंबाकू का नाम बालेश्वरी तंबाकू है। सच यह है कि बालेश्वर को लोगों ने तंबाकू का पौधा कभी देखा ही नहीं है।

तंबाकू का कारोबार बहुत मुश्किल का होता है। घोड़ा चढ़ने वाला महाजन एक ही दाँव में घास छीलने लगता है। घास छीलने वाला घोड़ा चढ़ने लगता है। महाजन कहते हैं इस कारोबार को सँभालना और नाग साँप पालना बराबर है।" खुशबू और रंग एक समान हैं जो माल बीस रुपये प्रति मन बिकता है वही चालीस में भी बिकता है। किसी पारखी या बिचौलिए की सहायता के बिना लोग तंबाकू ख़रीदने की हिम्मत नहीं करते। बलराम बल एक अच्छे पारखी हैं, इसलिए उड़ीसा में बड़े मशहूर हैं।

महाजन मूलतया याजपुर इलाके से हैं। गाँव का नाम मालूम नहीं है। एक बार महाजन गाँव आए थे। दस-बारह साल का अनाथ बच्चा गोपाल गाँव में भटकता फिरता था। जाति-बिरादरी का लड़का बेसहारा भटक रहा है। इसलिए मेहरबान होकर उसे साथ लेते गए। गोपाल दफ़्तर में रहता। खा-पी रहा है। है तो है। उसे देखता कौन है? पूछताछ कौन करे? एक रात महाजन ने किसी सौदागर से पाँच अकबरी मुहरें ख़रीदीं। बाबू बड़े प्रसन्नचित्त। ऐसी मुहरें दुर्लभ

हैं। बक्से में रखकर पूजेंगे। मुहरों की पोटली लिये बैठे हुए हैं। जाने कब उसे नीचे रख दी। थोकदार, महाजन, कुली और मज़दूरों का हिसाब ख़त्म करते रात का दूसरा पहर आ गया। बाबू को ख़्याल न रहा। गद्दी बंद करके चले गए। अगले दिन सुबह गोपाल के जाते ही गद्दी पर रखी मुहरों पर उसकी नज़र पड़ी। हाथ में पोटली लिए बाबू के पास दौड़ा। मुर्गा बांग भरने के पहले कलकत्ता में ज़्यों ही तोप की आवाज़ आती, गद्दी वाले धार्मिक हिंदू महाजन गंगा नहाने निकल पड़ते। ढेर सारी जगहों पर देवी-देवताओं के दर्शन करके गद्दी की ओर लौटते सुबह का पहला पहर बीत जाता है। पुण्य कार्य का यही असली समय है। वैसे भी फुरसत कहाँ है? बाबू से भेंट न हो पाने के कारण गोपाल ने उनके पलंग के तकिये के नीचे वह पोटली रख दी। फिर उसे भी उस बात की याद न रही। बाबू स्नान-ध्यान के पश्चात जब लौटे, बिंदिया बारिक गद्दी साफ़ करके, गंगाजल छिड़क कर धूप-दीप लगा चुका था। बाबू बड़े आराम से मसनद से पीठ टिकाए चाँदी जड़ा हुक्का गुड़गुड़ाते हुए तंबाकू पीने लगे। उनके सामने चंद कानी कौड़ियों से जड़े ब्राह्मण-हुक्का, कायस्थ हुक्का, नवशाख हुक्का काँसे के बरतन में रखे हुए हैं। यह है कलकत्ते की तमाम गद्दियों का दस्तूर।

पहले पहर के बाद बाबू को मुहरों की याद आई। मुहरें हैं कहाँ? बाबू खड़े हो गए। हाथ से हुक्का छूटकर आग व पानी पूरी गद्दी में फैल चुके हैं। लेकिन उधर नज़र किसकी है? यूँ पाँच मुहरें होतीं तो कोई बात न थी। लेकिन ये थीं अकबरी मुहरें। नसीबवालों को तब लक्ष्मी आलिंगन में लेती हैं जब अकबरी मुहरें मिलती हैं। ये मुहरें गुम जाएँ तो वह रूठ जाती हैं। बाबू सिर पकड़कर गुमसुम बैठ गए। गोपाल रसोईघर में बैठा हुआ था। मुहरों की बात सुनते ही हाँफता हुआ आया। बाबू से मुस्कराते हुए बोला, "जी, हुजूर! मुहरें हैं। बाबू ने उसे गले लगा लिया। गोपाल ने मुहरें थमाईं और सारा विवरण दिया। बाबू काफ़ी देर तक उसे निहारते रहे फिर उन्होंने एक लंबी साँस ली।

तब से यूँ ही बाबू दस बार 'अरे गोपाल' 'गोपाल रे' की रट लगाते रहते हैं। भोजन के वक़्त गोपाल थाली के पास लोटे में पानी न रखे तो बाबू को पानी अच्छा नहीं लगता। बाबू का पान गोपाल बनाएगा। बिछौने की ज़िम्मेदारी गोपाल की है। उसके प्रति बाबू का प्यार देखकर गद्दी के और पाँच आदमी उसे मानने लगे हैं। बाबू की इच्छा है कि उसे किसी बड़े काम में लगा दें। लेकिन ओड़ियाभाषी लड़का-देहाती भी है। इधर कलकत्ता ठगों की खान है। कुछ का कुछ हो जाएगा। ठीक है थोड़ा और क़ाबिल हो जाए।

सुबह का पहला पहर बीतने वाला है। अब तक चूल्हा नहीं जला। रसोइया बाभन कहाँ चला गया? हाँ, देखो, देखो, संदूक का ताला टूटा पड़ा है। पाँच सौ की थैली कहाँ ग़ायब हो गई? खूब खोज हुई। तलाशी हुई। थाने में इत्तला दी गई। रसोइया छू मंतर। शोरगुल का वक़्त न रह गया है। बाबू भूखे-प्यासे बैठे हैं। बंगाली बाभन के हाथ खाएँगे नहीं। इतनी जल्दी उड़िया बाभन मिले तब न? गोपाल ने हाथ जोड़कर कहा, "हुज़ूर, मैं कुछ बना लूँ?" बाबू ने वहीं पीढ़े पर बैठे-बैठे देखा कि कितनी जल्दी पाँच सब्जियाँ बन गईं। स्वादिष्ट भी। पूछा, "अरे गोपाल, तू ने रसोई कहाँ से सीख ली?" गोपाल बोला, "हुज़ूर, रसोइया का खाना बनाना देखकर सीखा है। वह जब खाना बनाता था, तब बैठकर देखा करता था।"

अब गोपाल के हाथ का बना खाना ही बाबू को पसंद आता है। किसी और के हाथ से पानी तक नहीं छूते थे। फिर देखा यह गया कि पहले की तुलना में ख़र्च भी आधा से कम होने लगा। सब्जियाँ जबकि दोगुनी आने लगी है। रसोई भी लज़ीज़। बाबू के मन मुताबिक़ वक़्त पर भोजन तैयार। हाट-बाज़ार करते रसोइया घी, तेल आदि सभी चीज़ों से आढ़त निकाल लेता था। हमेशा अपने रोज़गार में लगा रहता था। उसे इसकी बिलकुल परवाह न थी कि बाबू ने ढंग से खाया या नहीं।

बाबू, गाँव में गए और गोपाल के लिए मकान बनवाया। उसकी शादी करवाई। दुलहिन देखने में जितनी ख़ूबसूरत है उतनी गुणवती भी। जब से वह गोपाल के घर आई है तब से गोपाल की श्रीवृद्धि होती जा रही है। गोपाल रसोई का काम ख़त्म करने के बाद हमेशा बाबू के साथ गद्दी के पास बैठा रहता था। यूँ ही बैठा नहीं रहता। कभी तराजू पकड़ता तो कभी माल सहेजता है।

माल की ख़रीद फ़रोख़्त के दौरान चौकसी बरतना गोपाल को ख़ूब आने लगा है। बाबू ने कई बार परखा है। खुद इतने बड़े खिलाड़ी होते हुए भी गोपाल के सामने हार जाते हैं। गोपाल की बात मानें तो ठगे जाने का सवाल नहीं उठता। दो पैसे का अच्छा नफ़ा होता है। गोपाल अब रसोइया नहीं, कारोबार में बाबू का दायाँ हाथ है। बाबू उम्रदराज़ हैं। इधर-उधर जाने-आने में परेशानी होती है। भाग-दौड़ वाला काम गोपाल के ज़िम्मे है। अब वह गोपाल के नाम से नहीं', छोटे बाबू के नाम से जाना जाता है। काग़ज़ात में मुंशी लिखता है 'बाबू गोपालचंद्र महापात्र।'

बाबू गोपालचंद्र महापात्र ने खोजबीन कर देखा कि यशोर, मोतीहार, पावना

इलाके से जो हल्दी, तंबाकू, सौदा आदि मँगवाए जाते हैं उन्हें किसानों से फेरीवाले ख़रीदते हैं। फिर फेरीवाला थोकदार को बेचता है। थोकदार से गोदामवाला ख़रीदता है। दलाल उससे माल ख़रीदकर चालान करता है। कलकत्ता माल पहुँचता है तो तीन बार मुनाफ़ा बँट चुका होता है। एक दिन महापात्र ने मौक़ा तलाश कर महाजन से कहा, "हुज़ूर, व्यापार का मुनाफ़ा बेचने की जगह नहीं, ख़रीदने की है। यह जो तंबाकू, हल्दी, सौदा मँगवाए जाते हैं, मैं एक बार मूल जगह से पता लगाकर आता हूँ।"

महाजन की अनुमति से छोटे बाबू सीधा मूल स्थान पर जा पहुँचे। बीच में किसी से बिना संपर्क साधे खलिहानों में ही किसानों से सौदा ख़रीदा। दो साल तक यह ख़रीददारी जारी रखने के बाद हिसाब लगाया गया तो पहले से दुगुना मुनाफ़ा मिला। महापात्र अब बल बाबू के नौकर नहीं, मुनाफ़े में एक चौथाई के हिस्सेदार हैं।

पाँच-सात साल तक इसी तरीक़े से कारोबार चलता रहा। महापात्र अब लखपति हैं। उनके मना करने पर भी महाजन ने दस-बारह हज़ार का ख़र्च करके एक बड़ा-सा दो मंज़िला मकान गाँव में बनवाया। एक ताल्लुक़ा भी ख़रीदवा दिया। महाजन चाहते हैं कि गोपाल बहुत बड़ा आदमी बने। लेकिन उसमें रईसी ठाट-बाट नहीं है। दिन-रात काम करते रहें तो आनंद है। गद्दी के सारे मामले, धन, चाभी महापात्र के ज़िम्मे हैं। बल महोदय अब ख़ामोश रहकर गद्दी पर बैठे माला फेरते रहते हैं।

बाबू गोपालचंद्र महापात्र का इकलौता बेटा है। उसका नाम है राजीवलोचन। बेटा समर्थ होने लगा है। चौदह पूरा करके पंद्रह का हो गया है। गोपालबाबू गाँव गए हुए थे। मास्टरजी देवी ओझा ने बताया, "छोटेबाबू बहुत होशियार हैं। ख़ूब पढ़ रहे हैं। वर्णमाला और पोथी बाँचना पूरा कर चुके हैं। अब उन्हें पढ़ाने लायक़ कुछ बचा नहीं।" असल बात तो यह है कि राजीवलोचन बड़ा शैतान है। पाठशाला में बड़ा ऊधम मचाता है। गुरूजी के साथ भी तर्क करने लगा है। बड़े घर का लड़का। ज़मींदार का बेटा है। गुरुजी झिझकते हैं। कुछ बोल नहीं पाते। बाबू अपने बेटे की प्रशंसा सुन परम प्रसन्न हुए। गुरुजी इनाम के तौर पर एक जोड़ी धोती और पाँच रुपये लेकर प्रणाम करते हुए विदा हो गए। मालकिन (राजीव की माँ) ने मालिक से कहा, "राजीव मेरी सुनता ही नहीं। सारा दिन गाँव के लड़कों के साथ घूमता-फिरता है। उसे अपने साथ लेते जाओ।" बाबू की भी इच्छा थी कि राजीव को कलकत्ता साथ ले चलें और काम सिखाएँ।

कलकत्ता में बलबाबू महाजन की गद्दी के साथ बड़े-बड़े अंग्रेज सौदागरों का घरेलू कारोबार था। महापात्र बाबू बड़े-बड़े साहबों की कोठियों में जाते तो दुभाषिए की मदद लेते बीच में दुभाषिया कुछ झटक लेता है। राजीव जब अंग्रेज़ी सीख लेगा तो कोई ठग न सकेगा। गद्दी के मालिक ने 'केलकाटा एंड्रूज एकाडेमी' में उनका दाख़िला करवा दिया। पढ़ाई चल रही है तो बस जारी है। महीने में एक बार स्कूल की फ़ीस और किताबों के पैसे लेते वक़्त बाप बेटे की भेंट होती। पिता पढ़ाना तो दूर उन्हें यह पूछने की फ़ुरसत नहीं कि पढ़ाई चल कैसे रही है। तीन-चार साल बीत चुके हैं। हर महीने की स्कूल फ़ीस और किताब के वास्ते पचास रुपये से भी ज़्यादा ख़र्च आने लगा। एक दिन पिता ने पूछा, "अरे राजीव, इतना ख़र्च क्यों हो रहा है?" राजीवबाबू ने कहा, "...चार-पाँच बरसों में बाबू की अंग्रेज़ी शिक्षा कहाँ तक हुई, यह नहीं पता। लेकिन, तमाम सभा समितियों में मौजूदगी, थिएटर और अच्छी-बुरी जगहों पर आना-जाना ख़ूब था। स्वदेश की उन्नति हेतु कुछ मित्रों ने मिलकर एक साथ दो समितियाँ बनाई थीं। मंगलवार को 'कुसंस्कार विमर्दिनी', शनिवार 'नारी स्वाधीनता विवर्द्धनी' सभा का आयोजन होता है। दोनों सभाओं के सचिव बाबू हैं। सभा का सारा ख़र्च उठाना सचिव के ज़िम्मे, ऐसा कलकत्ते में परंपरा है। सभा में भारी भाषण होता है। संपादक ख़ूब भाषणबाजी कर चुके हैं। जब भी उनके भाषण पर ज़्यादा तालियाँ बजती हैं। उस दिन होटलवाले की अच्छी आय होती है। अचानक कहीं से सन्निपात की बीमारी आई। तीन ही दिनों में बाबू गोपालचंद्र महापात्र को स्वर्गवास मिला। पिता की मृत्यु पर ज़ोर-ज़ोर से रोना कुसंस्कार है। शोक प्रकट करने हेतु सभा में तीन दिन वक़्तव्य हो चुके हैं। बाबू ने बाँह में एक काली पट्टी बाँध ली। तय किया गया कि ब्राह्मण को बुलाकर श्राद्ध करना कुसंस्कार है। इसलिए केवल सभाकक्ष में भोज दिया जाएगा। दरिद्रों में धन बाँटा जाएगा। अस्पतालों में चंदा जमा किया जाएगा। लेकिन बल बाबू के भय से ये सारे प्रस्ताव क्रियान्वित नहीं हो सके।

महाजन बल बाबू ने लड़के को अपने पास ज़तन से रखा। उनकी इच्छा थी कि वह पिता के काम का उत्तराधिकारी बने। सच है कि उसने अंग्रेज़ी पढ़ी है, लेकिन कारोबार का काम अभी उसे कुछ भी नहीं मालूम। उम्मीद है वह बाप से बढ़कर काम करेगा। गोपाल को अक्षर ज्ञान भी न था। राजीव ने तो बरसों स्कूल में पढ़ा है। महाजन उसे अपने पास बिठाकर खुद काम सिखाने लगे। कर्मचारियों को भी कहा कि काम सिखावें। राजीव बाबू की कोई इच्छा नहीं कि गद्दी सँभाले। महाजन ज़बरदस्ती बिठाते भी तो काम में उनका मन ही

नहीं लगता। बैठे-बैठे कुछ और सोचते रहते हैं। मंगल और शनि की रात कहीं गायब हो जाते हैं। बल बाबू ने सोचा कि काम का दबाव रहेगा तो ठिकाने पर आ जाएगा। जो भी काम सौंपा गया लाभ की बात तो दूर शुरू से गड़बड़ा देते।

लगभग दो सभाओं में सचिव की ग़ैर मौजूदगी से सभी सदस्य ख़फ़ा हुए। अनुपस्थित रहने की वजह का पता करते हुए एक सदस्य ने आज़ादी के बारे में एक लंबा भाषण दिया। उसका, तात्पर्य था, "शिक्षित ज़मींदार की संतान को दूसरे के अधीन नौकरी नहीं करनी चाहिए।" भाषण के साथ-साथ कविता की पंक्तियाँ सुनाई–

"पास हैं जिनके धन-ज्ञान अधिक
करे नौकरी तो उसका जीवन है धिक"

सभा में ख़ूब तालियाँ बजीं। राजीव बाबू ने इस बात को दिल से ले लिया। अगले दिन भर राजीव बाबू की खोज-तलाश हुई। कहीं न मिले। महाजन तो पहले से ही बहुत नाराज़ थे। सिर्फ़ गोपाल का ध्यान रखकर कुछ कह नहीं पाते थे। शाम को भेंट हुई तो उसे कारोबार से छुट्टी दे दी। राजीव बाबू चाहते यही थे। उनकी दिली इच्छा थी कि दूसरी जगह मकान लेकर सभा-समितियाँ चलाएँगे। लेकिन हो न सका। महाजन बल बाबू ने उसे ज़बर्दस्ती गाँव भेज दिया।

मुंशी, गुमाश्ता और प्रजा खुश हैं। बीच रास्ते से ही नए ज़मींदार का स्वागत-सत्कार कर ले गए। सुना था कि नए ज़मींदार ने सरकारी स्कूल में ख़ूब पढ़ाई की है। उनसे मिलने के लिए अगले दिन एक सभा के आयोजन का फ़ैसला किया गया। सभा का नाम सुनते ही ज़मींदार का मन खुशी से उछला। नियत समय पर पुराने बुज़ुर्ग मुंशी गंगाधर महांति ने ज़मींदार को गद्दी पर बिठाया। तल्लुक़ा ख़रीदने के बाद से ही महांति सेठ मुंशी का काम कर रहे हैं। अत्यंत वफ़ादार और काम के आदमी हैं। मालकिन के दाएँ हाथ हैं। उनकी देख-रेख में ज़मींदारी में आमदनी बहुत अधिक हुई है। ज़मींदार तो हमेशा कलकत्ता में रहे। इन्हें लेकर ही मालकिन सभी मामलों का फ़ैसला करती रहीं।

पूरे तालुक़ा में रामपुर गाँव सबसे बड़ा है। तमाम अमीर लोग भी रहते हैं यहाँ। गाँव के कई लोगों को कलकत्ता में कई कामों में लगवाकर गोपालबाबू ने उन्हें कमाने लायक़ बना दिया था। बाबू की मदद और देखभाल में ढेर सारे बच्चे कटक से पढ़-लिखकर लौटे हैं। बड़े-बड़े किसानों, सरकारी नौकरी पेशेवालों

तथा छोटे महाजनों की गिनती चालीस-पचास के करीब होगी। नए ज़मींदार ने ढूँढ़ना शुरू किया कि गाँव में पढ़े-लिखे कुसंस्कारविहीन लोग हैं या नहीं। प्राइमरी, अपर प्राइमरी पास, छात्रवृत्ति में अनुत्तीर्ण तमाम शिक्षित स्वतंत्रचेता लोग गाँव में घूम-फिर रहे थे। ज़मींदार के बुलावे पर तत्काल हाज़िर हुए। ज़मींदार के कचहरीवाले कमरे में शाम को पहली सभा हुई। स्वयं ज़मींदारबाबू ने लंबा भाषण किया। उसका सारांश है–सभ्य महोदयो! इस देश की दीन दशा का कारण ढूँढ़ने से दिवालोक की तरह पता लग जाएगा कि मूर्खता, कुसंस्कार, अबला बहनों को घर में छिपाकर रखना ही सब की जड़ है। सबसे पहले इन सबको दूर करना होगा। लोगों के पल्ले कुछ न पड़ा तो वे एक-दूसरे को ताकने लगे। बाबू हरिबोल पट्टनायक ने तुरंत खड़े होकर कहा, "सुशिक्षित ज़मींदार महोदय के प्रस्ताव का मैं समर्थन करता हूँ। उचित है, ख़ूब उचित है, बिलकुल उचित है। शीघ्र उचित है।" ज़मींदार बाबू ने बेहद खुश होकर उनका परिचय पूछा। हरिबोल बाबू का घर इसी गाँव में है। अंग्रेज़ी माइनर पास हैं। विदूपुर डाकघर के सब-पोस्टमास्टर रह चुके हैं। दूसरे कर्मचारी यानी पीऊन वगैरह बड़े चोर और अयोग्य व्यक्ति हैं। बाबू ने उन पर शासन किया तो उन्होंने सरकारी ख़ज़ाने के 162 रुपये 10 पैसे की चोरी का इल्ज़ाम बाबू के सिर पर मढ़ दिया। मजिस्ट्रेट साहब ने उन्हें छह महीने तक कटक शहर में रोके रखा लेकिन बाद में हकीकत का पता चला तो बेकसूर समझकर छोड़ दिया। बाबू न गुस्से में आकर नौकरी छोड़ दी है। ज़मींदार बाबू बड़े प्रसन्न हुए। गाँव में उन्हें योग्य व्यक्ति ठहराया। फ़िलहाल 'ज्ञानवर्धनी' और 'स्त्री स्वाधीनता विवर्धनी' दो सभाओं का होना तय हुआ। दोनों सभाओं के सचिव हरिबोल बाबू बने। प्रतिदिन नियमित रूप से सभा का कार्य चलता रहा। यह काम देर रात ख़त्म होता। सदस्य घर लौट नहीं पाते। कचहरी-घर में उनके भोजन-पानी का इंतज़ाम होता। एक बालिका विद्यालय और जनाना स्कूल खोलने का इंतज़ाम भी हुआ।

रोज़-रोज़ पैसे देकर बूढ़े पट्टनायक परेशान हैं। थोड़ी भी देर हुई तो बाबू नाराज़ हो जाते। इतने सारे रुपये जाते कहाँ है, क्या कारोबार होता है, यह किसी को पता नहीं। एक दिन शाम को माँ-मालकिन और पट्टनायक के बीच गुफ़्तगू हुई। पट्टनायक, "हुज़ूर, सब कुछ लुटने को है।"

माँ-मालकिन, "रहना है न, खुद बेवकूफ़ हो, कुछ समझते तो नहीं। मुल्क के सारे चोर जुटे हैं। थोड़ा-सा भी धर्म-भाव होता तो...इस घर में मदिरा और मांस। राधेकृष्ण! राधेकृष्ण! पट्टनायक, तुम अलग हो जाओ।"

पट्टनायक ने गहरी साँस ली।

पट्टनायक को कुछ कहने की ज़रूरत न पड़ी। रात को सभा में तय हो गया, 'बूढ़ा अयोग्य, कुसंस्कारी, सभा के लिए बाधा पहुँचाता है। उसे बरख़ास्त कर दिया जाए। हरिबोल बाबू अत्यंत योग्य व्यक्ति हैं। सभा और ज़मींदारी दोनों काम सम्हाल सकते हैं। अब कारोबार बढ़िया चल रहा है। रुपये की कमी नहीं है। बाधा डालने वाला भी नहीं है। अमला और प्रधानों को साफ़ हुक्म कि रुपये जमा करें। पहले-पहले इन्हें अटपटा लगा। अब साफ़ समझ चुके हैं। दस कोठार धान, गाय-भैंसों के छह-सात रेबड़। खुद की ज़मीन सौ एकड़। जहाँ भी नज़र पड़े रुपये ही रुपये दिखते हैं। रोज़गार का दाँव कौन छोड़े?

बाबू गोपालचंद महापात्र ने हवेली के सामने एक पक्का मंदिर बनवाकर राधाकृष्ण की युगल मूर्ति स्थापित की थी। माँ मालकिन घर छोड़कर अब मंदिर में रह रही हैं। रोज़ शाम को भोजन में ठाकुर का प्रसाद पा लेती हैं। बूढ़े मुंशी भी वहीं रहते हैं। प्रतिदिन शाम से आधी रात तक भागवत का पाठ होता है। माँ-मालकिन सारा दिन ठाकुर के सामने बैठे आँखें मूँदकर माला फेरती रहती हैं। एक दिन पट्टनायक ने मालकिन से कहा, "हुजूर ने सुना है क्या, बाबू के विवाह की बात सभा में तय हो गई है। मैं कहता हूँ कि हो जाए, बाबू मालकिन आएँगी तो घर-बार सँभाल लेंगी।" माँ मालकिन भौंचक होकर पट्टनायक के चेहरे को काफ़ी देर तक देखती रहीं। फिर उन्होंने पूछा "कन्या?" पट्टनायक ने कहा, "हुजूर, मैं खुद यही बात पूछने गया था। बाबू ने जवाब दिया कि देशी कन्याएँ अनपढ़ हैं। कुसंस्कार, असभ्यता से ग्रसित है। कपड़ा पहनना नहीं जानतीं। अधनंगी रहती हैं। घूँघट डालकर चुहिया की तरह बिल में छिपी रहती हैं। लगता है कलकत्ता में लड़की से रिश्ता तय हुआ है।" माँ मालकिन ने 'हरेकृष्ण, हरेकृष्ण' बोलकर चुप हो गईं। ठाकुर को हाथ जोड़े निहारती रहीं। दोनों आँखों से आँसू बहाती रहीं। पट्टनायक ने फिर से कहा, "मैंने पूछा कि बारात में कलकत्ता कौन लोग जाएँगे? कौन-कौन सी रोशनाई कितनी तैयार होगी?" बाबू ने ठहाके लगाए और कहा, "असभ्यता, असभ्यता, कुसंस्कार! तुम तो अंग्रेज़ी जानते नहीं, देखा भी नहीं। सभ्य विवाह की बात जानोगे भी कैसे? रोशनाई और ख़र्चे की बात जो बताई, तुम जैसे अशिक्षित लोगों ने कितने ज़मींदारों के घर बरबाद किए हैं। बिहार की विवाह ख़र्च कमी वाली सभा में अंग्रेज़ी में ऑफीसियल चिट्ठी भेजी गई है। वहाँ से जैसी व्यवस्था के बारे में कहा जाएगा उसी तरह व्यवस्था होगी। मैंने और कुछ न कहा।

हमेशा मिज़ाज चढ़ा रहता है, तमाम शीशे की बोतलें ओलती के नीचे पड़ी ही हैं।"

सभा के सदस्यों को साथ लेकर बाबू कलकत्ता जा पहुँचे। एक अजीब शहर है कलकत्ता। आपके झोले में रुपये हैं तो माँ-बाप के अलावा सब कुछ मिल जाएगा। खिदिरपुर गार्डन रीच के एक बड़े दो मंज़िला मकान में दिन के उजाले की तरह सैकड़ों लालटेनें जगमगा रही हैं। ग़लीचा बिछा हुआ है। शतरंजी और बिछौने लगाए गए हैं। रात को दो तरफ़ा खेमटा नाच चल रहा है। पीना और पिलाना जारी है। आसपास के बाज़ार के लोगों को पता चला कि ओड़िशा के किसी राजकुमार का विवाह-उत्सव मनाया जा रहा है।

कन्या का नाम है नयनतारा-दुख बिसारा। बाबू ने सुना था। अब देखा कि कन्या ख़ूबसूरत, सभ्य, स्वतंत्रचेता, शिक्षित। ज़मींदार बाबू बिलकुल मोहित। उन्हें लगा, स्वर्ग से अप्सरा उतर कर आई है। दिन-रात हाथ में ग्लास लगा रहता है। पिछले चार दिनों से वर-वधू के बीच पूर्वालाप यानी कोर्टशिप है। बग्घी पर सवार हो जगह-जगह घूम आए हैं। लड़की के माता-पिता को यह पसंद नहीं है। कहीं ज़मींदार का बेटा हाथ से खिसक न जाए, इसी आशंका से कुछ बोल नहीं पाते। कन्या की जाति-बिरादरी, घर-बार के बारे में खोज-तलाश करने के बाद भी किसी को कुछ पता न चला।

कहानीकारों को सारे मामले खोजकर निहायत सच्चाई को लिखना होता है। हमने भी बहुत अनुसंधान करने के बाद यह परिचय हासिल किया है। असम के चाय बाग़ान के मैनेजर साहब ने किसी कुली लड़के को बावर्ची के तौर पर बहाल किया था। उसका नाम मकरा मलिक है। धीरे-धीरे उसकी पदोन्नति हुई। वह ख़ानसामा बना। उसी बाग़ान में तीस-चालीस बरसों से साहबों के साथ है। गाँव, घर, जाति, बिरादरी का पता नहीं। मकरा जाता भी कहाँ? वहीं पर उसने एक मज़दूरनी से शादी की। शादी तो हो गई लेकिन बरसों उसे संतान-सुख न मिला। दोनों ने मिलकर त्रिनाथ की कथा, सत्यनारायण की कथा, ग्रामदेवी की पूजा आदि तमाम धर्म-कर्म किए। ढलती उम्र में एक बेटी हुई। मियाँ-बीबी बहुत प्रसन्न हुए। माँ ने बेटी का नाम रखा नयनतारा-दुख बिसारा। बेटी बड़ी लगी। चाय बाग़ान के पास एक स्कॉटिश बाप्टिस्ट ऑर्फ़न बालिका स्कूल था। मिस डगलास प्रिंसिपल थीं। माँ-पिता बड़े चाव व ख़ुशी से बेटी को जूता-मोजे, समीज़, जैकिट पहनाकर स्कूल भेजते रहे। बेटी बढ़ती गई, पढ़ती गई। तेरह-चौदह की हुई। वह स्कूल से लौटकर माता-पिता के पास ख़ूब अंग्रेज़ी बोलती, मोजा बुनने की कला दिखाती, गीत गाती और नाचती। बहुत

स्वतंत्रचेता है। मर्दों की परवाह नहीं करती। इधर माँ-पिता के सिर पर बड़ा बोझ कि उसका विवाह कैसे करवाएँ। छुट्टी लेकर कलकत्ता पहुँचे। बहुत खोज-बीन की। लेकिन पिता-माता के जाति-कुल, ख़ानदान का ठिकाना न होने के कारण रिश्ता न मिला। विधि का विधान कि एक दलाल ने नाव पार करा दिया। उस दलाल ने बाबू को बताया, "आप ज़मींदार हैं। कलकत्ता शहर में आपका डंका बज रहा है। उसी शान-ओ-शौकत के साथ आपका विवाह होगा।" बाबू ने झूमते हुए कहा, "बिलकुल, अवश्य, निश्चित।" मैनेजर बाबू बोले, "रुपये हैं नहीं।" दलाल ने कहा, "यह भी कोई बात है? बाबू को पैसे का कैसा अभाव? बाबू का फ़रमान हो तो एक साथ दस हज़ार रुपये ला दूँगा।" रुपये की बात सुनकर बाबू कुछ आश्वस्त हुए। खुश होकर सीधे बैठे। कलकत्ता में महाजनों की कमी कहाँ हैं? बड़े ही क़ायदे-सलीक़े से ज़मींदारी लिखाकर दस हज़ार रुपये लाने को बोले। दलाल के रजिस्ट्री करने तक का इंतज़ार भी सहा नहीं जा रहा है। ज़ल्दी रुपये चाहिए। कलकत्ता में अनेक बाबू लोग यानी पूर्व सभा के सदस्य खिदिरपुर बाज़ार के छोटे-बड़े सभी दुकानदार निमंत्रित हुए। कई प्रकार की मिठाइयाँ, तरह-तरह के पानीय से लेकर आसन और खिलाल तक का सामान के साथ ठेकेदार हाज़िर हो गए। तीन दिनों तक नाच-तमाशे, खाने-पीने, मौज़-मस्ती की धूम मची रही।

दस हज़ार रुपये के कर्ज़ में से किस मद में कितना ख़र्च हुआ, उसका हिसाब हम पेश नहीं कर सकते। क्योंकि उसमें कुछ लिखा न गया है। मैनेजर हरिबोल बाबू के हाथ तहबिल है। तमाम कामों में व्यस्त और ज़मींदार के स्वास्थ्य हेतु सभ्य देशों के नियमानुसार पीने की मात्रा कुछ ज़्यादा होने के चलते हिसाब रखने की फ़ुरसत न रही।

विवाह संपन्न हुआ। ज़मींदार-ज़मींदारनी देशी सभ्यों के साथ देश लौटे। वर-वधू हवेली में प्रवेश के दौरान हवेली की दासियाँ, गाँव के कुलीन परिवारों की बहू-बेटियाँ नए सूप में अरवा चावल, दूब, बेर की पत्तियाँ लिये, उसमें घी का दीया रखकर वर-वधू की अगवानी में जुट गईं। शंखनाद हुआ। हुलहुली दी गई। इससे ज़मींदार झुँझला उठे। वे बोले, "कुसंस्कार, कुसंस्कार, असभ्यता।" वे चीख़े तो पत्नी बोलीं, "यह बहुत बड़ा कुसंस्कार है, असभ्यता है।" फिर वह ठहाके लगाने लगीं। गाँव की युवतियाँ यह सब देखकर अचकचाते हुए डर के मारे सूप को आँगन में नीचे रखकर अपने-अपने घर लौट गईं।

बेटा-बहू एक दूसरे का हाथ थामे माँ-मालकिन से मिलने गए। माँ तब ठाकुर के सामने आँखें मूँदकर हाथ में माला लिये फुसफुसाते हुए 'हरेकृष्ण' का

जप रही थीं। बहू के पैरों की नुकीली एड़ी वाली जूती की आवाज़ सुन चौंककर खड़ी हो गईं। बहू मुस्कान के साथ बोली, ''मेरी प्यारी सास, नमस्ते, नमस्ते। कैसी हैं आप?'' और हाथ बढ़ाया। बूढ़ी चीख़ उठी, ''मत छुओ, छुओ मत।'' अरे है कोई, मंदिर अपवित्र हो गया, निकालो इसे बाहर, बाहर निकालो।'' ज़मींदार बाबू मिसेज महापात्र का हाथ खींचकर ले गए। उसी क्षण माँ-मालकिन वफ़ादार दासी राधी के साथ एक पोटली लेकर घर-बार छोड़ पुरी शहर के लिए रवाना हो गईं। आठ दिनों बाद समाचार मिला कि वहाँ वे माताजी के मठ में हैं।

कहीं भी कोई बाधा डालनेवाला नहीं था कुछ कहने के लिए। आज़ादी से कुसंस्कार निवारण और देश-उद्धार के काम में जुट गए हैं। भाषण और पीने में पूरी रात कट जाती है सोने के लिए फ़ुरसत कहाँ? मिसेज़ महापात्र भी सभा में खड़ी होकर कई बार भाषण कर चुकी हैं। दिन भर सोते रहती हैं। कोई असामी, अर्ज़ीदार आता तो भेंट नहीं होती। यदि हुई भी तो सुना दिया जाता है, ''मैनेजर से मिलो।''

कोई बहू मालकिन संबोधन करता तो ज़मींदार गुस्से में आ जाते हैं। नाम पड़ा है मिसेज महापात्र। लेकिन दासियाँ और मूर्ख नौकर सही नाम से पुकारना नहीं जानते। कोई कहता किसमिस महापात्र तो कोई मिस्त्री महापात्र और कोई फिसफिस महापात्र। लेकिन इसमें कोई दोष नहीं। मिसेज़ महापात्र को हँसी आती है। वे खुश हो जाती हैं।

सुबह की चाय पीने के बाद मिसेज़ महापात्र हवेली के चारों ओर के बगीचे में और सामने की सड़क पर प्रातः भ्रमण करके लौटती हैं। एक दिन बावर्चीख़ाने की तदारख के लिए पहुँच गईं। उस समय दासी पदी एक घड़े में पानी और गोबर मिलाकर चीथड़े से चूल्हा पोत रही थी। जूती की आवाज़ सुन ज्यों ही मुँह फेर कर पीछे की ओर देखा, उसकी चीख़ निकली, ''अरी मैया, मैं तो मर गई। बाप रे बाप, जूती पहनकर रसोई में घुस आई। रसोईघर अपवित्र हो गया। चीथड़ा फेंककर सरपट भागी। फिर उसे हवेली में किसी ने न देखा। मिसेज़ महापात्र हाय-हाय करते हुए दूसरी ओर भागी। उन्होंने मुँह पर रूमाल न होता तो उल्टी हो गई होती। एक शीशी लैविंडर इत्र सारे बदन पर उड़ेलने के बाद तनिक सँभली। ज़मींदार साहब यह जानकर अति कुपित हुए कि बावर्चीख़ाना गाय के गू से पोता जा रहा है, ''मूर्खता, असभ्यता, कुसंस्कार।'' उस घर में खाना बना तो लेडी को खाना अच्छा न लगेगा। वह उल्टी कर देंगी। फ़िनायल की चार बोतलें सारे घर में उड़ेली गईं।

इस तरह आठ-दस महीने बीतने के बाद एक दिन सारे अमले एक साथ मैनेजर से कहने लगे, "सारे कोठरे ख़ाली हो गए हैं। गाय-भैंसों के रेवड़ में एक पड़िया भी नहीं रही। सौ एकड़ की अपनी खेती काश्तकारों को देने के चलते जो सलामी मिली थी, वह भी ख़त्म हो रही है। अब ख़र्चे का जुगाड़ कहाँ से करें? मैनेजर ने तत्काल जवाब दिया, "मार-पीट करके अभी से अगले साल का लगान प्रजा से वसूलो।" जो रोगी को भावे, वही वैद्य बतावे। सारे अमले ख़ुशी से 'जी हुज़ूर' कहकर दंडवत् प्रणाम करने के बाद लौट गए।

दो महीने बाद। अगहन की क़िश्त जमा न होने के कारण तालुक़े की नीलामी का फ़रमान कटक से आ पहुँचा। कलकत्ता के महाजन ने दस हज़ार रुपये के मूलधन पर ब्याज सहित बीस हज़ार रुपये की डिक्री करवा दी। कलकत्ता हाईकोर्ट से प्यादे ने आकर सारी चल-अचल जायदाद की कुर्की कर ली।

सुबह उठकर मिस्टर और मिसेज़ महापात्र बगुला-बगुली की तरह बैठे हुए हैं। उनके पास कोई भी नहीं है। सभी सदस्य पहले से ही जाति से निकाले गए थे, अब गोबर पानी पीकर जाति में शामिल हो गए हैं। अब क्यों आते? शाम के आसपास मिस्टर और मिसेज़ दोनों भूख के मारे छटपटा रहे हैं। साँझबाती के वक़्त मिसेज़ महापात्र ने बड़ी मुश्किल से एक गहना निकाल कर दिया। बेचने निकले तो वहाँ पता चला कि पीतल पर सोना मढ़वाया गया है। एक और फिर एक, इस तरह से सब पर सोना चढ़ाया गया है। अभी दोनों को होश आया। शादी में ढाई हज़ार रुपये के ज़ेवरात ख़रीदे गए थे, सभी पर सोने का पानी चढ़ाया गया है। डिक्री जारी करने वाले प्यादे के ज़ुल्म से घर में न रह सके। रात के अँधेरे में कहीं ग़ायब हो गए।

पाँच-छह साल बाद इस इलाक़े में ख़बर मिली कि ज़मींदार बाबू असम में अपने ससुर के साथ खानसामा की नौकरी कर रहे हैं।

16.

बगुला बगुली

बिदिया पात्र भूखंडपुर गाँव का चौकीदार है। इतने बड़े गाँव में पासी जाति का बिदिया अकेला है। अछूत आदमी। वह क्या ऊँची जाति की बस्ती के पास घर बना सकता है। गाँव के नुक्कड़ से दो एकड़ की ज़मीन छोड़कर खुले मैदान में एक झोपड़ी बना रखी है। जाति का पासी। बेचारा ठहरा चौकीदार। इसलिए पूँजी कहाँ से पाता? गाँववाले उसे मानते हैं। दूसरे गाँव के चौकीदारों से वह कुछ ख़ास है। माथे तक ऊँची बाँस की एक मोटी लाठी कंधे पर डाले–"हे राम जी, जागते रहो, हे नायक जी होशियार" जैसी हाँक लगाते हुए सारी रात द्वार-द्वार घूमता रहता। बिदिया पात्र ने जब से चौकीदारी सँभाली है, गाँव में किसी के छप्पर के कद्दू की डाल तक की चोरी नहीं हुई है। बात क्या है कि देहात में बिना चौकीदार से हाथ मिलाए चोर गाँव में घुस नहीं सकते। ऊपर से बिदिया पाँच हाथ लंबा मरद है। उसके हाथ में लाठी हो तो दस-दस जवान उसके पास फटकने की हिम्मत नहीं कर सकते। इसलिए तो चोर भूखंडपुर गाँव की ओर नज़र उठाने की हिम्मत नहीं कर पाते।

बिदिया के पास अब एकड़ भर ज़मीन है। इसके अलावा फ़सल काटते समय गाँव के छोटे-बड़े सभी खेत की मुँडेर पर उसे एक-एक टोकरी अनाज देते। पात्र का बेटा सदा खुशमिज़ाज रहता है। हमेशा 'हरेकृष्ण' भजता है। घर में कुछ है या नहीं, इसकी चिंता नहीं करता। घर में है तो खाया, न हो तो भूखा। उसने आजीवन किसी से कुछ माँगा नहीं। किसी के आँगन में खड़े होकर गिड़गिड़ाया नहीं है। कोई आफ़त आई तो हाथ जोड़े ऊपर की ओर ताककर कहता है–"हरि, तेरी मर्ज़ी।"

पत्नी के गुज़र जाने के बाद बिदिया पात्र शाम को ही मुट्ठीभर खाकर बेटे को लेकर निकल पड़ता। भागवत घर के ओसारे के नीचे एक फटा-पुराना टाट बिछाकर बेटे को सुला देता। भागवत घर में पुराण की पोथियाँ रखी रहतीं।

गाँव के पुरोहित विष्णु पंडा पुराण बाँचते। इसके लिए उन्हें कोई वेतन नहीं मिलता। पुराणों की पूजा के दिन गाँव के छोटे-बड़े सभी को बुलाया जाता। कोई पुराण सुने या न सुने, लेकिन अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ न कुछ देना ही पड़ता है। पैसा न हो तो सेर भर अनाज आँचल में लाकर उड़ेल देता। रोज़ पुराण बाँचा जाता। सिर्फ़ अमावस, पूनम, संक्रांति और गुरुवार के दिन बंद रहता। पंडाजी मुट्ठीभर मीठी खील या थोड़ा-सा गुड़ का भोग लगाकर चले जाते। ऐसे दिनों में गाँव के मुखिया लोग बैठकर आधी रात तक गाँव का भला-बुरा तथा गिले-शिकवों पर विचार करते।

गाँव के बुज़ुर्ग रोज़ पुराण सुनने आते। तबीयत बिगड़े या कोई ज़रूरी काम पड़ जाए तो एकाध दिन नागा करते। लेकिन अपनी जवानी के दिनों से जो आज पचास साल का हो गया, बिदिया, कभी न आया हो, यह याद नहीं। सेहत ख़राब हो तो भी काँखते-कराहते हुए समय पर आ जाता है। पुराण-पाठ के आरंभ 'श्री शुक उवाच' से लेकर अंत 'भीमस्यापि' तक हाथ जोड़े बैठा रहता और ध्यान से सुनता। पुराण बाँचते हुए कुछ समझ में न आए तो सभी बिदिया को देखते और पूछते, "बिदिया, यहाँ क्या कहा गया है?" वह हाथ जोड़कर 'जी हुज़ूर' कहते हुए बड़े सुंदर ढंग से अर्थ बता देता। सभी ख़ुश हो जाते। उसे भागवत के तमाम छंद याद हैं। एक-एक अध्याय मुँह-ज़बानी याद है। बातचीत के दौरान भागवत के पदों का हवाला देता। बड़े-बूढ़े उसकी तारीफ़ करते तो वह दोनों हाथों से धीरे-धीरे अपने गालों पर थप्पड़ मारते हुए कहता, "जी हुज़ूर, मैं अभागा पासी क्या जानूँ, मालिक लोगों की पद-रज की बदौलत, सेवा करके दो पद रट मारे हैं।"

बिदिया पात्र के बेटे सपना की शादी के लिए कई जगहों से रिश्ते आ रहे हैं। इतने बड़े गाँव का चौकीदार, उसके बेटे के लिए लड़कियों की कमी कैसे हो सकती है? बेटा सपना जितना सुंदर उतना ही गुणवान है। काम करता है तो राहु की तरह। बाप का बड़ा लिहाज़ करता है। अनसुना नहीं करता। बाप बीमार पड़ता तो दिन-रात उसकी सेवा में लगा रहता। मक्रमपुर के चौकीदार दंडिया पात्र की बेटी चेमी को देखकर बूढ़े का मन खुश हो गया। उससे रिश्ता तय हुआ। जैसे भी हो, इसी साल शादी हो जानी चाहिए। बेटा सत्रह साल का हो गया। आगे जोड़ा साल आ जाएगा। शादी नहीं हो सकती। शादी के लिए हामी भर दी तो एक ग़रीब को भी तीस रुपये चाहिए। चाहे जो भी किफ़ायत बरती जाए तीस से कम न होगा। जाति-बिरादरीवाले कहाँ छोड़ने वाले हैं? इतनी बड़ी नौकरी में है, नाम है। अगर यह कहे कि पैसे की क़िल्लत है तो

कैसे चलेगा? कम-से-कम जाति-बिरादरी वालों को दो वक़्त तो खिलाना होगा। हाथ में एक पैसा नहीं। देने और करने वाले हरि हैं। देर तक हाथ जोड़ गुहार लगाई, "प्रभु, आपकी कृपा होगी तो बेटे की शादी होगी।"

पुराण पाठ के बाद गाँव के बड़े-बड़े मालिक बैठे हुए हैं। बिदिया पात्र ने हाथ जोड़कर बताया, "हुज़ूर, मालिकों का हुक्म हो तो एक मिन्नत करूँ? हुज़ूर, आप लोगों की चरण धूलि पाकर बेटा बड़ा हो चुका है। एक लड़की देखी है, हुक्म हो तो शादी करा दूँ।"

सभी मालिक एक-दूसरे का चेहरा देखने लगे। कोई कुछ बोला नहीं। ज़मींदार बलराम नायक ने किसी काम के बहाने बिदिया पात्र को अन्यत्र भेज दिया। उसके बाद सबसे नज़र मिला कर कहा, "देखिए, गाँव के सभी प्रमुख लोग मौजूद हैं। बिदिया कम-से-कम पचास साल से गाँव की रखवाली कर रहा है। उसके भुजा-बल के कारण चोर-उचक्कों का इधर ताकने तक की हिम्मत नहीं होती। उसने आज तक कभी कुछ माँगा नहीं है। माँगने वाला भी नहीं है। वह जितना सत्यवादी है उतना ही धार्मिक है। सच है, उसके पास एक पाई भी नहीं होगी। आइए, हम सभी मिलकर उसके बेटे की शादी करवा देते हैं।"

सभी एक साथ बोले, "जी हाँ, जी हाँ। आपका हुक्म बिलकुल सही है। हम लोग ध्यान न दें तो उसका गुज़ारा कैसे होगा?"

ज़मींदार के कहने से शिक्षक गंगाधर महांति जी भागते हुए गए और कागज़-कलम लेते आए। शादी के लिए प्रयोजनीय सामग्री–उरद, चावल, तेल, गुड़, रस्मों से लेकर पत्तल तक की सूची बन गई। पुरोहित कंडरा वैष्णव हैं। उनके लिए धोती और चार आने की दक्षिणा भी सूची में शामिल कर दी गई। लोगों की सामर्थ्य के अनुसार चंदा इकट्ठा किया गया।

आज जगन्नाथ जी का अन्न प्रसाद ग्रहण करके मंगनी की रस्म अदा की गई। दो दिन बाद शादी है। पहले प्रहर में ज़मींदार के घर से शादी की सभी चीज़ें काँवर में लादकर पात्र के घर के पास रख दी गई। ज़मींदार के यहाँ पहले से सारी चीज़ें तैयार थीं। पात्र की तो मुश्किल से एक झोपड़ी है। इतनी चीज़ें कहाँ रखें? दूर-दराज़ से आने वाले अतिथि तथा आत्मीयों को ठहराने के लिए बाप-बेटे ने मिलकर खजूर की टट्टियों से कुछ कोठरियाँ बना ली थीं। उनमें से एक कोठरी में सारी चीज़ें रखी गईं। कल शादी है। मंगल की रात तक सभी अतिथि आ पहुँचे। चूल्हा जलाया गया। उन अतिथियों में से चार ने रसोई करने और परोसने का काम ले लिया। बूढ़ा पात्र छोटे से लेकर बड़े तक

विरादरी के सभी लोगों से हाथ-पाँव पकड़कर कह रहा था, "मेरा बेटा आप लोगों का है, काम चला लें।" सचमुच सभी ने काम चला लिया। ब्याह हो गया। जाति-बिरादरीवाले खुश होकर लौटे। रास्ते में बातचीत करते जा रहे थे, "हमारी बिरादरी में इतनी धूमधाम से किसी ने ब्याह नहीं किया है। बिरादरी में सब को कौन न्योता देता है? खिला-पिलाकर निहाल कर दिया। कटोरे भर-भरकर उरद की दाल। बछड़े की तरह बड़े-बड़े चार भेड़ बाँधे रखे थे। ताड़ी के चार मटके, जितना पीना है पीओ। धन्य धन्य हैं ऐसे मालिक जिनके यहाँ नौकरी करता है।"

बहू घर में आई। बड़ी खूबसूरत। कौन कहेगा कि पासी की लड़की है? कायस्थ या क्षत्रिय कन्या जैसी दिखती है। गुणवती है। उसके हाथ का पकाया हुआ करेमू का साग, चेंग मछली का रस्सा, उबाला हुआ केकड़ा जिसने भी खाया है, भुला नहीं सकता। बूढ़े पात्र की ज़ुबान से सुनकर ये बातें लिखी जा रही हैं। कंडे थापना, छोटी लकड़ियाँ चुनना, गड्ढे में से केकड़े पकड़ना इन गुणों में भी वह माहिर है। शाम को बूढ़ा घूम-फिर कर गाँव से लौटता है तो बहू गगरी भर पानी से उसके पैर धोती है। तीन पुश्तों से इस्तेमाल हो रही थाली और पत्थर की अधटूटी कटोरियों में भात, साग, भुना हुआ केकड़ा, चेंगा मछली का रस्सा इस तरह की तीन-तीन सब्जियाँ बनाकर परोस देती। बूढ़ा इतनी सारी तरकारी कब खाता था? थोड़ी इमली और नमक के साथ भात खाता था। बहू के इन गुणों पर मुग्ध होकर बूढ़ा एक दिन अकेला बैठकर काफ़ी 'हाय, हाय' करके रोता रहा। ऐसा सुख बुरे नसीबवाली बूढ़ी को कभी न मिला।

ब्याह के चार-छह महीने बाद की घटना है। दिन का पहला प्रहर बीतने को है। बूढ़ा अब भी बिस्तर पर पड़ा है। सपना ने पूछा, "अरे बापू, अब तक सोया हुआ है?" बूढ़े ने बेटे-बहू को पास बिठाकर कहा, "अरे सपना, बचपन से मेरे साथ चलकर तूने पुराण सुना है। कई बातें मैंने भी सिखाई हैं। याद रखना–

"चोरी, पराई नारी, ख़ून
रहना इनसे सदा दूर
लोभ न करना पराया धन
कभी न कहना मिथ्या वचन।"

हाँ, बहू, यह सपना तेरा ख़ाविंद है, तेरा ठाकुर है, देवता है। इसकी बातें कभी अनसुनी न करना। मेरी तबीयत कुछ गड़बड़ा रही है। अब मैं न बचूँगा।

बेटा-बहू दोनों बहुत रोये। चार-पाँच दिनों तक खाना-पीना छोड़ बूढ़े की सेवा करते रहे। बड़ा बूढ़ा हो चला था। बुखार के छठवें दिन 'हरि हरि' कहते हुए ईश्वर को प्यारा हो गया। बेटा-बहू का रोना थमने का नाम न ले रहा है। गाँववालों ने गहरा शोक प्रकट करते हुए कहा कि नीच कुल में इस तरह का सत्यवान और धार्मिक व्यक्ति देखा नहीं गया है।

बूढ़े का क्रिया-कर्म ख़त्म हुआ। एक दिन सपना और चेमी ने बैठकर विचार किया सपना, "अरी बहू, मैं नौकरी से इस्तीफ़ा देता हूँ। तुझे घर में अकेली छोड़ रात को चौकीदारी करने कैसे जाऊँ?"

सपना की हर बात में चेमी की हामी होती है। लेकिन नौकरी छोड़ने वाली बात उसे सही न लगी। उसने कहा, "ए खाविंद! तुम तो नौकरी छोड़ दोगे, खाएँगे क्या हम दोनों।"

सपना, "इस इलाक़े में इतने सारे खेत हैं, गाँव में इतने अधिक ताल-तलैया हैं, क्या चावल और सब्ज़ी की कमी रहेगी?"

चेमी, "तुम्हें जो अच्छा लगे, वही करो।"

रात को मालिक लोग भागवत घर में बैठे हुए हैं। सपना ने गले में अंगोछा डालकर हाथ जोड़े कहा, "जी! मालिकों, मेरे सात पुरखों ने आपलोगों की चरण-धूल की गुलामी की, आप लोगों का नमक खाया है। लेकिन मैं अब नौकरी नहीं कर सकता। आप लोगों की चरण-धूल में इस्तीफ़ा सौंप रहा हूँ।" मुखिया लोगों ने आपस में देर तक सलाह-मशविरे किये। अंत में ज़मींदार बलराम नायक ने कहा, "ना रे, तेरा इस्तीफ़ा नहीं लिया जा सकता। चौकीदार था, चौकीदार रहेगा। जगह-ज़मीन सब कुछ मिलेगी। भले तू पहरेदारी न करे।"

सपना ने बहू को सारी बातें बताईं। चेमा बड़ी खुश हुई, "ए खाविंद, अच्छा किया, नौकरी रहे। मैं छोटी हूँ। इसलिए डर रही हूँ। बड़ी हो जाऊँगी तो डरूँगी नहीं तुम काम करने निकल जाना। मैं झोपड़ी में सोई रहूँगी। डर लगने से आवाज़ दूँगी। तुम भाग आओगे। न बाघ है, न भालू, क्यों डरूँ? माँ ने कहा है, "डर कैसा, भय कैसा। चारों दिशाओं में प्रभु भरोसा।"

हाँ खाविंद! हमारे गाँव की देवी बूढ़ी मंगला है। वह लोगों का दुख दूर करती है। तुम भी 'हरि हरि' कहा करो जो बूढ़े ससुर हमेशा कहा करते थे। हरि कहाँ हैं? अच्छा, गाँव में अगर हैजा फैले, उसकी पूजा हो तो डायन भाग जाएगी न?"

सपना 'ना प्यारी, हरि सबसे बड़ा ठाकुर है। वही खाना-पीना सब देता है। हमारा हर काम देखता है। मन की बात जानता है। हम अच्छा काम

करेंगे, उसका भजन करेंगे तो हमें सुख देगा। बुरा काम करेंगे, उसे न मानेंगे तो दुख देगा।"

"चेमी हर चीज़ हरि सँभालेगा। ग़लत काम करने से वह दुख देता है। बाप रे! मैं तो वैसा काम न करूँगी। हमेशा तुम्हारी तरह उसका नाम लेती रहूँगी। ए खाविंद! मुझे अच्छा काम बताते रहो। माँ के कहने के अनुसार मैं तुम्हारी हर बात मानूँगी तुम जो कहोगे, सब सुनूँगी।"

पति-पत्नी दोनों हमेशा एक साथ रहते। कोई किसी से अलग नहीं होता। एक से बिना पूछे दूसरा कोई काम नहीं करता। एक को दुख होता तो दूसरा रो पड़ता। सपना मालिक के घर का काम काज करने जाता तो चेमी बग़ल में टोकरी लिए पीछे-पीछे चलती। सपना खेत में काम करता तो चेमी कंडे बटोरती, मेड़ की बग़ल से चौलाई और नोनिया का साग चुनती, गड्ढों से केकड़ा पकड़ती।

सपना अकेला अलग से काम-काज करता। दूसरे मज़दूरों के साथ काम नहीं करता। कोई नटखट आदमी हँसी-मज़ाक में कुछ कह न दे। फिर चेमी और वह जी खोलकर बातचीत न कर पाएँगे।

सपना को मज़दूरी में पाँच सेर धान मिलता। बूढ़े के ज़माने से घर में एक फटा-टूटा सेर है। पहले एक सेर नाप कर बूढ़े के ज़माने के टूटे मुँहवाले मटके में डाल देती। कहती, "ए खाविंद! हारी-बीमारी में घर में बैठकर खाएँगे।" सेर भर अनाज देकर तेल, नमक एक-एक पाई का, तमाकू-हल्दी आधी-आधी पाई का हिसाब करके सपना को तेली महाजन श्याम साहू की दुकान में भेजती। बाक़ी तीन सेर धान मूसल से कूट डालती। भूसी एक टूटी टोकरी में रखती। दो-चार दिन बाद उस भूसी को कूटकर उसमें से महीन भूसी निकाल कर रखती। मुट्ठीभर चावल उस महीन भूसी में मिलाकर पीस डालती। इससे वह चीलें बनाती और बचे हुए मोटे भूसे में गोबर मिलाकर उपलें थापती। सपना कहता, "चेमी सभी गुणों में माहिर है। उस जैसा चावल कौन कूट सकती है?"

सपना के दुकान से लौटने के पहले चेमी चावल पका लेती। दुकान का सौदा अच्छी तरह परखने के बाद सहेजकर रखती। फिर एक बूँद तेल डालकर रस्सा बना लेती। पुरानी, अधटूटे पत्थर की थाली में सपना को खाना परोसकर उसके पास बैठती। सौगंध दिलाकर ज़बरदस्ती दो कौर अधिक खिलाती। चेमी अच्छी गृहिणी है। पटसन की उगाही के दौरान मालिक के आँगन से पटसन के डंठल लाकर गट्ठा बाँधकर रखे हुए है। रात को खाविंद को खाना खिलाते समय उसको रोशनी दिखाती। उसके खा चुकने के बाद उसी जूठी थाल में

खुद खाती। घर में कोई अच्छी चीज़ बने तो जब तक सपना को नहीं खिलाती तब तक खुद न खाती। दोनों के खाने के बाद बचे हुए भात में पानी डालकर अगले दिन के लिए रख लेती। रसोई एक जून बनती। दो जून के लिए जलावन कहाँ? एक बात और है, सुबह से काम के लिए निकले तो लौटने में दोपहर हो जाती। भूख में रसोई बनाने की फ़ुरसत कहाँ? बरसात के दिनों में जलावन कहाँ मिलती है? इसलिए, गर्मी के दिनों में उपले बनाकर ओलती के पास लटकाकर रख लेती।

सपना और चेमी दोनों परम प्रसन्न हैं। न उन पर साहूकार का कर्ज़ा है और न ही राजा का लगान। घर में कभी अन्न की कमी न रही। मन में कोई परेशानी नहीं। खाने की बात आती है तो दोनों का मानना है कि इलाक़े में खेत और तालाबों के होते दो जन का पेट भर ही जाएगा। चेमी कहती है–''ए ख़ाविंद! तुम दूसरे की मजूरी क्यों करोगे? तिन्नी झाड़कर ले आएँ तो छह महीने तक चल सकते हैं।'' सही वक़्त पर चेमी सूप में एक डंडी बाँधकर ढेर सारी तिन्नी झाड़कर घर ले आती खाविंद को तकलीफ़ न हो, इसलिए उसे रोज़ काम पर नहीं भेजती। तिन्नी के चावल से काम चला लेती। जिस दिन सपना मालिक का काम करने नहीं जाता, उस दिन दोनों मिलकर तालाबों से कछुआ, मछली पकड़ लाते। उस दिन चेमी क़िस्म-क़िस्म की सब्ज़ियाँ बनाती। दोनों काफ़ी खुश रहते।

रात को चेमी रसोई बना रही होती तो सपना हिरनी-स्तुति, गज-स्तुति गाया करता। भागवत के तमाम छंद याद हैं उसे। जहाँ-तहाँ से सुनाता रहता है। चेमी ध्यान से सुनती। भजन पूरा होने पर 'हे ठाकुर-हरि कृपा कीजिए' कहकर हाथ जोड़ती। ज़मीन पर तीन बार माथा टेकती। इसके बाद सपना के पैरों के पास तीन बार जुहार करते हुए उसकी पद-धूल माथे में लगाती। रोज़ शाम ऐसा होता। जिस दिन कोई काम न होता, दोनों एक-दूसरे को निहारते हुए बरामदे में बैठे रहते।

राम परिडा बुज़ुर्ग व्यक्ति हैं। सपना उन्हें नानाजी बुलाता है। अधिकांश दिन उनके यहाँ काम करता है। परिडा जी कभी-कभार सपना को बुलाने आते देखते हैं कि मियाँ-बीवी दोनों एक साथ बैठे हुए हैं। मज़ाक़ में कहते–''क्यों भाई सपना, तुम दोनों तो बगुला-बगुली की तरह बैठे हो।'' उन्हें बगुला-बगुली कहना उनकी आदत पड़ गई है। हाँक भी लगाते–''ओ बगुला, अरी बगुली।'' इधर गाँववाले भी सपना को बगुला पात्र और औरतें चेमी को ठिठोली करते हुए कहतीं–''अरी बगुली, अपने बगुले के लिए क्या बनाया है? सचमुच सभी

देखते हैं कि रोज़, हमेशा दोनों बगुला-बगुली की तरह साथ-साथ रहते हैं। अंत में दोनों बगुला-बगुली के नाम से जाने गए।

बरसात में बगुला-बगुली काफ़ी खुश रहते हैं। खेतों की निराई के दौरान दोनों को काम मिलता है। सपना की मज़दूरी पाँच सेर, चेमी की चार सेर। खाने-पीने के बाद पाँच सेर धान बचा ही लेते।

यह साल काफ़ी अच्छा है। चारों ओर अच्छी कमाई हो रही है। बरसात देर में आई। खेतों की निराई एक साथ हो रही है। मज़दूरों की कमी है। मजूरी बढ़ गई है। सपना की मजूरी छह सेर तो चेमी की पाँच सेर हो गई। घर में धान का एक घड़ा और दो मटके भर चुके हैं। पुआल से बने पोटले में भी धान भर गया है। लक्ष्मी का आलिंगन हो तो चारों ओर से कमाई होती ही है। खेतों की निराई के दौरान चेंग मछली और केकड़े भी ख़ूब मिलते हैं। मेंढ़ की बग़ल से चौलाई और नोनिया के साग भी लहलहाते हैं। काम से लौटते समय तनिक हाथ लगा तो दिन भर की सब्ज़ी मिल जाती है। इसके अलावा चेमी खेत की बॉबी की बग़ल से काँस काटकर ले आती है। उससे मछली पकड़ने का एक झाबा बनाया गया है। चेमी भाँति-भाँति के काम जानती है। काँस की खँचिया बनाती है। गाँव की बहू-बेटियों को यह देकर बदले में धान-चावल लाती है। खेत में काम करते समय झाबे को पानी की धारा में मेंड से सटाकर रख देते हैं। लौटते समय झाबे में क़िस्म-क़िस्म की छोटी मछलियाँ भरी हुई मिलती हैं। कभी-कभी दो-तीन बार झाबे से मछलियाँ निकालना पड़ता है।

आजकल शाम को दुकानदार के पास धान लेकर जाने की ज़रूरत नहीं है। अंजुरी भर मछलियाँ लेते जाएँ तो तेल-नून, तमाखू सब कुछ मिल जाएगा। चेमी लगभग आधा मन मछली सूखाकर चार महीने तक की तरकारी के लिए सहेज कर रखी हुई है। सूखी मछलियाँ और भी अच्छी तरह सूखने के बाद टोकरी में भरकर छीके में रख दी गई हैं। सचमुच दंपती बेहद खुश हैं।

अगहन का महीना। रात होते ही दोनों खा-पी लेते हैं। चेमी ने खेत की मछलियाँ बूढ़ी परिडाइन को देकर कुल्हड़ भर तेल ख़रीद लिया। देहाती इलाक़े में खेती करने वाले लोग गरमी के दिनों में ही तेली के यहाँ अरंड का तेल पेराकर बरसात के दिनों के लिए सँभाल कर रखते हैं। सारा दिन पानी और कीचड़ में काम करते-करते दोनों पैर सफ़ेद पड़ जाते हैं। दो उँगलियों के बीच में घाव उभर आता है। रात को यह तेल लगा दिया जाए तो सुबह तक घाव ग़ायब। एक फटी चटाई बिछाए सपना लेटा हुआ है। चेमी उसके पैरों की

उँगलियों के बीच तेल लगा रही है। चेमी ने कहा–"ए खाविंद! तुम देख रहे हो न घर में सोने की जगह तक नहीं बची। तिन्नी पक चुकी है। मैं कल सुबह झाड़ने जाऊँगी। और कहाँ रखें? क्या करें?"

सपना बोला–"हाँ बहू, मैं भी अभी यही सोच रहा था। अच्छा धान बेचकर रुपये पैसे घर में रखेंगे।"

चेमी–"नहीं खाविंद, यह बड़ा झमेला है। धान और पैसे का हिसाब हम समझ न पाएँगे। रुपये-पैसे की बात का पता चोर-उचक्कों को चल जाए तो घर में घुसेंगे। कहीं गाड़ दिया और भूल गए तो सर्वनाश हो जाएगा। मेरी माँ ने भी कभी चार पैसे कहीं गाड़ दिए थे। उसे वे पैसे न मिले। वह ख़ूब रोई थी।"

सपना–"तो फिर सारा धान राम जुलाहे को दे देते हैं। वह तेरे लिए लाल रंग की एक साड़ी बुनकर देगा।"

चेमी–"नहीं खाविंद, मुझे पहनना न आएगा। फट जाएगी। मैं कहती हूँ कि परिड़ा नाना जाड़े के दिनों में एक काला अंगा पहनते हैं, तुम वैसा ही एक अंगा बालिसर की हाट से ख़रीद लाओ। जाड़े में उसे पहनकर ख़ूबसूरत लगोगे।"

सपना–"तू लाल रंग की साड़ी पहनने से ख़ूबसूरत लगेगी।"

चेमी–"तुम अंगा पहनने से ख़ूबसूरत लगोगे।"

दोनों की देर तक बातचीत होती रही। अंत में सपना के प्रस्ताव मुताबिक़ तय हुआ कि काबुली पठान के आने पर, उसे सारा धान देकर लाल रंग का एक कंबल ख़रीदेंगे। जाड़े में सींक की चटाई नहीं ओढ़ेंगे, कंबल ओढ़ेंगे। बातचीत करते-करते दोनों को नींद आ गई।

दिन निकले घड़ी भर बीत चुका है। दोनों सोए हुए हैं। रोज़ चेमी पहले जागती थी, आज उठी नहीं। सपना बोला–"अरी बहू, लगता है कि तेरा बदन तप रहा है। बुखार है क्या?"

चेमी–"हाँ, तबीयत कुछ कसमसा रही है। ए खाविंद, तुम्हारा बदन तप रहा है। बुखार तो नहीं? अरी मैया, अरे बाप, क्या करूँ? ठाकुर हरि! मेरे मैके की मंगला माता। मेरे खाविंद को ठीक करा दे।"

सपना–"नहीं बहू, घबरा मत, ठाकुर भला करेंगे। तू जाकर पथ्य बना। मुझे सेर भर धान दे। साहूकार के यहाँ से लहसुन लेता आऊँ।"

गर्म-गर्म माँड़ मिले भात में पानी डालकर लहसुन के साथ दोनों ने पथ्य किया।

चार दिन गुज़रे। पाँचवें दिन सपना का बुखार तेज हो गया। पथ्य भी

बंद हो गया। चेमी का बुख़ार कुछ कम हुआ। चेमी न खा रही है, न सो रही है। सपना को तो यूँ नींद नहीं है। चेमी उसके पायताने बैठकर दिन-रात सिर्फ़ ठाकुर हरि और मैके की मंगला माता की गुहार लगाती रही। चेमी का सब्र जवाब देने लगता है। ख़ाविंद को बताकर गाँव के वैद्यराज नकुल नायक के घर दौड़ी। वह कभी घर से अकेली न निकली थी। आज गाँव की बीच सड़क से गुज़र रही है। पाँव धँसते चले जा रहे हैं। आँखें सजल। रास्ता सूझ न रहा है फिर भी वह भागती चली जा रही है वैद्य के घर। चेमी को ससुराल आए पाँच-छह साल हो गए, अब तक किसी का चेहरा देखा न था। नज़र उठाकर किसी से मिली न थी। खाविंद के अलावा किसी और से बात तक न की थी। ठाकुर देवता को मन-ही-मन पुकारते हुए काफ़ी हिम्मत बाँधकर पहुँचती है। साहसपूर्वक उसने सपना के बुखार के बारे में वैद्यजी को बताया। वैद्य नकुल नायक ने बटुआ खोलकर रेशम की थैली से ज्वरराघव की चार गोलियाँ निकाल कर दीं। वे बोले–"तुझे तो शहद मिलेगा नहीं, तुलसी रस और गुड़ुच के रस में मिलाकर चार पहर में चार खुराक देना। बुखार न उतरे तो पानी लेकर आना।" छठवें दिन बुखार काफ़ी तेज़ हुआ। चेमी के साथ बातचीत नहीं। घड़ी-घड़ी गाना गा रहा है। भागवत के छंद गा रहा है। खेत की बात कर रहा है। दोनों आँखें घोंघे के खून की तरह लाल हो गई हैं। चेमी अरबी की पत्तियों में पेशाब लेकर खाविंद को कुछ बताए बिना वैद्य के यहाँ भागी। वैद्यराज ने दूब के एक रेशे से पानी में एक बूँद तेल डाला। तेल की बूँद जमी रही। फैली नहीं। मरीज का पूरा हाल सुनकर कहा–"घोर सन्निपात, कस्तूरी-भैरव की गोली चाहिए। क़ीमत चार रुपये लाओ।" चेमी की बोलती बंद हो गई। बड़ी मुश्किल से बोली–"मेरे पास रुपये कहाँ हैं। घर में धान है। सारा लेती आऊँगी।" चेमी दौड़ते हुए घर पहुँची। खाविंद की ओर देखा। कोई बात नहीं की। क्या करती? खाविंद न कुछ सुन रहा है, न बोल रहा है। बार-बार खड़ा हो रहा है, बैठ रहा है। चिल्ला रहा है। चेमी बिना नापे ही खँचिया में धान भरकर वैद्य के पास भागी। वैद्यजी के सामने धान उड़ेल दिया। चेमी की माँ ने ब्याह के दिन तीन माशा चाँदी की एक अंगूठी दी थी। घिस जाएगी। इसलिए रोज़ पहनती न थी। वह अंगूठी भी वैद्य को निकाल कर दे दी। उनसे दवाई लेकर भागते हुए लौट रही है। चेमी ने चार दिनों से मुँह में एक बूँद पानी न डाला है। बुखार भी पूरी तरह नहीं उतरा। अंदर ही अंदर बुखार है। सुबह से दोपहर तक दौड़ रही है। चेमी घर पहुँची। देखती है कि सपना मुँह खोलकर पड़ा हुआ है। चेमी 'हे ठाकुर मंगला' कहते हुए सपना के पैरों पर धड़ाम से गिरी। सपना

को थोड़ा-थोड़ा होश था। चेमी के मुँह की ओर एकटक निहार रहा है। दोनों एक दूसरे को अपलक नयनों से निहारे जा रहे हैं।

अगले दिन गाँव में ख़बर फैल गई कि बगुला-बगुली को बुखार हुआ था। दो दिनों से टाट नहीं खुली है। गाँव के लोग बेतहाशा दौड़े चले आए। सभी हाय-हाय करने लगे। ज़मींदार बाबू ने एक प्यादे को सपना के ससुराल भेजा।

गाँव की सभी स्त्रियाँ चेमी के लिए हाय-हाय करती रहीं। उसे ले जाते समय मंगल ध्वनि की। पूरा गाँव एक ही बात कर रहा है–"धन्य है पति-पत्नी का प्रेम। निम्न कुल में भी ऐसा धर्म, ऐसा प्रेम होता है!"

17.

नाना और नाती की कथा

(सत्य घटना पर आधारित)

नाना राम द्विवेदी–"अरे गणपति। अपनी ज़मीन के रोड सेस की रक़म जमा करने कचहरी गया था। कल शाम घर लौटा। हमारे मुख़्तार राम मिश्र और दो-चार वकीलों से भी पूछा। कहाँ उस मुक़दमे के बारे में किसी ने कुछ सुना नहीं है। पुरी शहर में भी कुछ लोगों से बातचीत हुई। जिस किसी से पूछा, सभी ने बताया कि पुरी में ऐसी कोई बात पता नहीं। यह कैसी बात है?"

नाती गणपति–"किस मुक़दमे की बात नानाजी?"

नाना–"उस दिन तुम गजट पढ़कर सुना रहे थे न। एक औरत, एक मर्द, दो चोर-चोरनी, मौनी बाबा और माता बनकर खंडगिरी की गुफा में झूठी तपस्या कर रहे थे। पुलिस ने उन पर मामला दर्ज़ किया। मजिस्ट्रेट साहब ने दो-दो साल की क़ैद की सज़ा सुनाई।"

गणपति–"हा, हा, हा। यही बात। नहीं, नहीं नानाजी, वह गजट नहीं, 'साहित्य' मासिक पत्रिका है। उसमें 'मौना-मौनी' नामक एक कहानी लिखी गई थी। उसे पढ़कर सुना रहा था।"

नाना–"अरे, गजट में क्या झूठी बातें लिखी जाती हैं? उन्हें तू पढ़ता क्यों है? चल हट। मैं तो समझता था कि सरकार की ओर से जितने गजट छपते हैं, उसमें सच्ची बातें ही लिखी जाती हैं। यह पता न था कि ऐसी झूठी बातें भी होती हैं। उन्हें तू क्यों पढ़ता है? क्या तुम्हारे स्कूल में ऐसी झूठी बातें पढ़ाई जाती हैं? कैसे न पढ़ाई जाए? म्लेच्छों की शिक्षा जो ठहरी।"

गणपति–"नहीं, नानाजी, वे बातें झूठी न थीं। आदमी कितने प्रक़ार के काम कर सकता है उसे बताने के लिए कथा का सहारा लिया गया है।"

नाना–"क्यों? झूठी बातों के सहारे क्यों बताया जाए? पढ़ लो, हमारे

यहाँ जो पुराण है, उनमें एक भी झूठ नहीं मिलेगा।"

गणपति–"अच्छा, उस पर बाद में बात होगी। पहले कुछ और बातें कर लें। नानाजी, उस दीवार पर किसकी तस्वीर है? क्या लिखा हुआ है?"

नाना–"अरे, इतना भी नहीं समझ पा रहा है? तेरी नानी ने गेरुवे, हरताल और काले रंग को नारियल के खोपड़े में घोलकर कपड़े की कूची से सारे चित्र बनाए हैं। वह बढ़िया चित्र बनाती है। ये देखो, यह है कदंब का पेड़। फूल खिले हैं। उसके नीचे श्रीकृष्ण और राधा की युगल मूर्ति खड़ी है। श्रीकृष्ण बाँसुरी बजा रहे हैं।

गणपति–"कहाँ नानाजी, बाँसुरी तो सुनाई नहीं पड़ रही है।"

नाना–"हा-हा-हा!" तू भी कैसा भोंदू है! क्यों भी न हो? म्लेच्छों का पाठ पढ़कर तुम लोगों की मति मारी गई है। अरे, ये क्या सचमुच बाँसुरी बजा रहे हैं। यह तो तस्वीर है।"

गणपति–"तो नानाजी, सुनिए। बात यह है कि चित्र विद्या एक ललित कला है। इसके दो भेद हैं एक है चित्र, बाहर से निर्जीव और दूसरा मानसिक क्रिया का। अच्छा, आपको समझाने के लिए मैं एक बात बताता हूँ। एक है आधि-भौतिक चित्र और दूसरा आध्यात्मिक चित्र। जो चित्रकार होता है, वह एक कूची लेकर मनुष्य के शरीर का चित्र बनाता है। जो कवि होता है वह मनुष्य के मन की गति, कार्य-पद्धति, क्रिया आदि को क़लम से लिखता है। इसे मानसिक चित्र कह सकते हैं। लोक शिक्षा के लिए अथवा लोकरंजन के लिए कवि और चित्रकार ऐसे चित्र आँकते हैं।

नाना–"अच्छा, हमारे महर्षियों ने लोक शिक्षा के लिए इतने पौराणिक ग्रंथों की रचना की लेकिन उन्होंने एक भी झूठ नहीं लिखा। ज्ञान के लिए वे सब पढ़ो। यूँ झूठी बातों का क्या करना है?"

गणपति–"अच्छा नानाजी, मैं जो कह रहा हूँ, धीरे-धीरे सुनिए। गुसिया तो न जाएँगे? आपने महाभारत का वन पर्व पढ़ा होगा, अजगर साँप ने भीमसेन को निगल जाने के लिए ख़ूब ज़ोर से जकड़ लिया। भीम बड़ा ताक़तवर है न, भागने की ख़ूब पहल की, खींचातानी हुई। साँप छोड़ न रहा। फिर भीम ने ख़ूब चिरौरी की। अजगर के लिए दाता राम हैं। इतने दिनों से भूखा पड़ा था। आज एक मोटा इंसान मिला है। क्यों छोड़े? इतने में युधिष्ठिर आ पहुँचे। अजगर के साथ तमाम बातें हुईं उनकी। अच्छा नानाजी, अजगर साँप कौन-सी बातें करता था?"

नाना–"हा-हा-हा! अरे तुम बच्चे लोग तो धर्मग्रंथ, पुराण आदि पढ़ते

नहीं हो। बेकार के झूठे गजट पढ़ते हो। असली ज्ञान कहाँ से पाओगे? अरे जानता है तू, यह द्वापर युग के पुराण की बात है। आजकल की नहीं। तूने ज्ञान शास्त्र तो पढ़े नहीं हैं, जानेगा कैसे? तू जिसे अजगर साँप कह रहा है वह साँप नहीं, सूर्यवंश के राजा नहुष हैं। ब्राह्मणों को कहार बनाकर उनके कंधों पर सवार हुए थे। ब्राह्मणों ने भी कुपित होकर श्राप दिया। राजा फ़ौरन अजगर में तब्दील हो गया। देखा, पहले ब्राह्मणों का कैसा प्रताप था?''

गणपति–''आजकल तेज नहीं है क्या? यजमानों और यात्रियों को आतंकित कर डालते हैं?''

नाना–(तनिक गुस्सा करते हुए) ''क्या? ब्राह्मणों की निंदा करता है?''

गणपति–''नहीं, नहीं नानाजी, मैं तो मज़ाक़ कर रहा था। अच्छा महाभारत का एक दूसरा प्रसंग सुनिए। एक तोता ने जंगल में घोंसला बनाया था। शाम के वक़्त कोई अतिथि उनके दरवाज़े के पास पहुँचा। तोता अतिथियों की काफ़ी सेवा करता था। उसने तत्काल अतिथि को पैर धोने के लिए पानी दिया। आसन बिछा दिया। भोजन के लिए कुछ चावल दिया। अतिथि ने चावल पकाया। कैसे खाएँ? सब्ज़ी तो है नहीं। अतिथि ने चुपके से जाकर तोते की गर्दन मरोड़ दी। उसका मांस पकाकर बढ़िया भोजन किया। अच्छा नाना जी, तोता जो चावल लाया था उसे उसके घर में कूटा किसने था? तोती ने कूटा था न?''

नाना जी परेशान हुए। नसदानी निकालकर लगातार तीन-चार चुटकी नास सूँघने लगे। फिर हकलाते हुए बोले–''अच्छा गणपति, मैं अब ठीक से समझा न पा रहा हूँ। मैं कल तुम्हें अच्छी तरह बताऊँगा। ख़ूब समझ जाओगे। मैंने टीका नहीं पढ़ी है। राम मिश्र संस्कृत के पंडित हैं। उन्होंने पढ़ी है। वे समझा देंगे।''

गणपति–''अच्छा नाना जी, बचपन में श्रीकृष्ण गोकुल में थे। उन्हें मारने के लिए कंस ने पूतना राक्षसी को भेजा था। उस पूतना ने क्या किया कि नारी वेश धारण कर स्तनों में विष भरकर गोकुल आ गई। श्रीकृष्ण ने विष भरे उसके स्तन चर्र से चूस लिया। पूतना दहाड़ मारते हुए मर गई। यह महाभारत में भी लिखा हुआ है। श्रीकृष्ण ने जन्म के समय एक शकुनि आकर गाँव में बैठा रहा। शकुनि का अर्थ है पूतना। महाभारत में पूतना का प्रसंग इस प्रकार आता है। एक और पुराण में लिखा है कि बचपन में श्रीकृष्ण को ऐंठन की बीमारी हुई थी। ऐंठन की बीमारी पूतना है। कहिए तो, कौन-सा पुराण सच है? अच्छा नाना जी! एक और बात बताइए तो सही, पूतना तो उन्नीस योजन

तक पसरते हुए गिरी, फिर गोकुल में जितने आदमी, गाय, पशु, पक्षी थे सब दबकर मर गए होंगे। गोकुल के सभी ग्वाले मर गए होंगे? क्यों यह बात तो किसी भी पुराण में लिखी नहीं गई है।"

नाना बड़ी उलझन में फँसे। कुछ भी जवाब न दे पाने की हालत में सिर्फ नाक सूँघ रहे हैं। अंत में बोले–"अरे गणपति! मैं तो वृंदावन गया था। सच, गोपपुर तो इतना बड़ा है नहीं। पूतना का मृत शरीर उन्नीस योजनों तक पसरते हुए कैसे गिरा? फिर पुराण में इसका भी उल्लेख है कि वह गोकुल में गिरी। बात क्या है?"

गणपति–"जानते हो न नाना जी, पुराण हो या उपन्यास या कहानी–लोक शिक्षा के लिए कवियों ने ऐसा लिखा है। पुराण का अर्थ क्या है? पुरानी बातें। आजकल तमाम उपन्यास मिलते हैं। उन्हें हज़ारों साल बाद लोग पढ़ेंगे और कुछ लोग उन्हें सच मान बैठेंगे तो आश्चर्य की बात न होगी।"

नाना–"नहीं, नहीं गणपति। मेरा मन नहीं मानता। अच्छा मैं पंडित राम मिश्र से पूछकर इस बारे में बताऊँगा।"

18.
पढ़ी-लिखी बहू

बहुत पुरानी बात है। बालेश्वर शहर के दक्षिणी छोर के सरगड़िया पाड़ा के उत्तर-दक्षिण में फैली लंबी सड़क के दोनों ओर दो क़तारों में घर बने हुए हैं। यहाँ अमला, मुख़्तार और वकील रहते हैं। गृहस्थ कोई नहीं। कटक, पुरी, याजपुर के निवासी बाहर के अमले इस पाड़ा में किराए पर रहते हैं।

मुख़्तारबाबू गोपालचरण पट्टनायक का डेरा पश्चिमी क़तार के बीचोबीच है। कुटुंब के नाम पर केवल बूढ़ी माँ है। कोई और नहीं पडोस में पेशकार राजकिशोर बाबू हैं। उनके साथ बुज़ुर्ग माँ, स्त्री और आठ साल की बेटी राधा है। पेशकार और मुख़्तारबाबू की माताओं का बड़ा अच्छा मेल है। दोनों हमउम्र हैं। मन का ख़ूब मेल है। ऊपर से दोनों उम्रदराज़ परदेश (बाहर) में कोई संगी-साथी नहीं। दोनों बूढ़ी माताएँ एक-दूसरे के घर दिन में दो-तीन बार आती-जाती हैं। पेशकार की माँ मुख़्तार के डेरे में दिनभर में कई बार आती हैं। बहू उसे कोई काम करने नहीं देती, डेरे में ख़ाली बैठे-बैठे करतीं भी क्या? घर का पिछवाड़ा इतना लंबा है कि आधा दिन लग जाए, उधर लोग-बाग भी नहीं रहते। जब मन हो पिछवाड़े घूम आतीं। दूसरे वक़्त चाहे जो हो लेकिन शाम को दोनों बूढ़ियाँ दो जोड़ी झुर्रियों से भरी सूखी टाँगें फैलाकर बैठे-बैठे सुख-दुख की ढेर सारी बातें करती हैं। शुरुआत में एक दिन की बातचीत में एक-दूसरे के नाम पूछे। मुख़्तार की माँ ने कहा–"मैं पद्मा हूँ।" पेशकार की माँ ने कहा, "अरे वाह, मेरी जीजी का नाम भी पद्मावती है। तब तो तुम मेरी दीदी हो। अब मैं तुम्हें दीदी कहा करूँगी। मैं सीता हूँ। तुम मुझे इसी नाम से बुलाना। क्यों, बात पक्की हो गई न?" पद्मा दीदी ने मुस्कराते हुए कहा–"अच्छा, ऐसा ही होगा।"

मुख़्तार बाबू पाँच साल की उम्र से पिता-स्नेह से वंचित हैं। उनके पिता कमललोचन पट्टनायक सालाना चालीस रुपये, दो जोड़ी मोटी धोतियाँ और दो अंगोछे के वेतन पर कपड़े की दुकान में गुमाश्ता थे। जो वेतन मिलता वह पेट

...ने के लिए नाकाफ़ी था। विधवा के लिए भला क्या सहेज कर रख जाते। विधवा पद्मादेवी ने गाँव में लोगों के घर में अनाज-दाने आदि कूट-पीस कर, तरह-तरह के काम करके बड़ी मुश्किल से बेटे को लायक़ बनाया। बचपन से गोपाल बड़ा होशियार था। ध्यान लगाकर पढ़ाई करता था। तभी तो वह आदमी बन पाया। उन्हें अपनी असलियत का बचपन से ही पता चल गई थी। तभी तो वह आदमी बन सका। माँ के कष्ट के बारे में सोचकर वह छिप-छिपकर रोता था। मन-ही-मन सोचा करता था–"कमाऊँगा तो माँ का बड़े आनंद में ... के लिए उसे गाँव से लेते आए। किराए के कमरे में रखा। माँ को आराम देने के मामले में नाक़ामयाब रहे। गोपाल बाबू चाहते थे कि माँ बढ़िया ...पहनकर घर में चुपचाप बैठी रहे। माँ भला ऐसी हिदायत क्यों मानें? घर का सारा काम-काज खुद करती, पहनती हैं। वही मोटा-सोटा कपड़ा। अच्छा कपड़ा लाने पर कहतीं–"अरे गोपाल, इतना महीन कपड़ा क्यों लेता आया? ...एक महीने में फटकर तार-तार हो जाएगा। शरीर पर लत्ता जैसे लगेगा। महसूस न होगा कि कपड़ा पहने हूँ। अरे वाह, कितना चौड़ा है रे, पाँवों में ... जाएगा। चलूँगी कैसे?" बूढ़ी माँ सोचती है कि बेटे ने बचपन में खूब दुख झेला है। न उसे अच्छा खाने को मिला और न पहनने को। मेरा तो यूँ ही ... जाता है। उसकी कमाई से इतना ख़र्च क्यों करूँ? हाथ-पाँव पकड़कर बड़ी ...री करने के बाद भी वह मानने को तैयार नहीं हुआ। घिस-घिसकर जितना ही चमकाओ, वही कोयले का कोयला। गोपाल बाबू कचहरी से लौटकर शाम को माँ के पास घड़ीभर सुख-दुख की बातें करते। पूरे दिन की कमाई माँ के हाथ में रख देते। रुपये देख बूढ़ी माँ फूला न समाती। भलीभाँति उलट-पुलटकर देखती। ठाकुर देवताओं के नाम पर रुपये छह बार माथे लगाती। गिनती कर ...व से लपेटकर संदूक़ में रखती। अपने लिए एक पैसा ख़र्च नहीं करती। बेटे के लिए तरह-तरह की चीजें मँगवाकर पाँच क़िस्म की सब्ज़ियाँ बनाती। बेटा भी ज़िद करता "नहीं माँ, तू नहीं खाएगी तो मैं भी नहीं खाऊँगा।"

गोपाल बाबू ने एक दिन शाम को बहुत फुसलाते हुए कहा–"माँ, तू तो ...ई बना नहीं पाएगी, एक ब्राह्मण रसोइया रख लेते हैं।"

माँ–"कैसा ब्राह्मण रसोइया? न जाने कैसा ब्राह्मण होगा? धागों का गुच्छा ... पर डाल लें तो बाभन हो जाते हैं क्या? वह मेरे पूजा-घर में घुसेगा, खाना बनाएगा और मैं उसके हाथ का खाऊँगी? सारी ज़िंदगी गुज़र गई। अब इस उम्र में बिदेश में जाति-पाँति गँवाऊँ?"

गोपाल बाबू मौन रहे। एक दिन एक औरत मकान में हाज़िर हुई।

माँ–"यह कौन है गोपाल?"

गोपाल–"माँ, यह एक दासी है। बाहर का काम-काज करने आई है।"

माँ–"बाहर का काम क्या है रे गोपाल? एकाध, जूठे बर्तन माँजकर धो लेने से हो गया। घर के बाहर थोड़ा झाड़ू लगाकर लिपाई कर दी तो काम पूरा हो गया। दासी क्यों? चल, उसे विदा कर दे।"

सच भी यह है कि बूढ़ी काम-काज को कष्ट नहीं मानती। उसकी आदत-सी हो गई है। काम किए बिना उससे रहा नहीं जाता।

गोपाल बाबू बाईस-तेईस के होंगे। यही शादी की उम्र है। माँ कई बार यह प्रसंग छेड़ चुकी हैं। माँ की कोई बात अनसुनी नहीं होती। लेकिन शादी की बात आते ही गोपालबाबू सुनकर भी अनसुनी कर देते हैं। अंत में भतीजा पेशकार बाबू के पास पहुँचीं तो उन्होंने भी कुछ पेशकश की। लेकिन गोपाल बाबू ने पेशकार की बात भी न सुनी। गोपालबाबू ने मन में तय कर लिया है कि माँ की उम्र हो चुकी है, उसके साथ डेरे में रहने वाला कोई नहीं है। कचहरी से लौटकर किसके साथ थोड़ी देर बातचीत करेंगे? अगर कोई पढ़ी-लिखी कन्या घर के हिसाब-ख़र्च आदि समझने वाली चिट्ठी-पत्री लिख सकने वाली मिल जाए तो उससे विवाह कर लेंगे। अनपढ़ लड़की से विवाह का क्या मतलब?

बूढ़ी माँ ने अभी एक नया तरीक़ा अपनाया है। बेटे को सुना-सुना कर झूठ-मूठ ही कहती–"उफ़! चल नहीं पा रही हूँ। पानी नहीं ला पा रही हूँ। आज रात को दो मुट्ठी चावल कैसे पकाऊँगी?"

गोपाल–"माँ, मैं भी वही बात कह रहा हूँ। अब एक रसोइया रख लेते हैं।"

माँ–"क्या इस ढलती उम्र में धर्मभ्रष्ट करूँ?"

अब गोपाल बाबू की बेचैनी बढ़ने लगी। कन्या की खोज शुरू हो गई। इस मामले में पेशकार बाबू को बड़ी हड़बड़ी है। काफ़ी ढूँढ़ने के बाद एक कन्या से बात पक्की हुई। नीलगिरि इलाक़े में मयूरभंज की सीमा पर भालूकपोषी गाँव जंगल के बीच, पहाड़ की तलहटी में है आसपास के तीन कोस तक दूसरा गाँव भी नहीं है। संथाली जंगली जाति के चालीस-पचास घर, व्यापारी, तेली, महाजन के दो मकान हैं। राजा के गढ़ से गाँव काफ़ी दूर है। लगान वसूलने के लिए बाघ-भालू के डर से प्यादे अकेले जाने को तैयार नहीं होते। वहाँ से दो-तीन संथाल मिलकर जंगल में घुस जाते तो उनसे प्यादों की भेंट नहीं हो पातीं। देने और मरने के लिए आसानी से कौन राज़ी होता है? जंगली

लगान देने को तैयार नहीं। थोड़ी सख़्ती बरती जाए तो गाँव छोड़कर भाग जाएँगे अथवा बेफ़िक्र होकर सारे बंधन तोड़ डालेंगे। उन्हें क़ाबू में रखने के लिए राजा साहब ने दस एकड़ की बिना मालगुज़ारी वाली ज़मीन देकर उस गाँव में हमेशा के लिए एक मुखिया को नियुक्त करना चाहा। उस ज़मीन के लोभ में आकर अभी के मुखिया घनश्याम महांति के पिता राम महांति दो-दो मकान बनाकर बस गए।

घनश्याम का परिवार यानी पति-पत्नी और उनकी पंद्रह साल की कुँवारी बेटी सरस्वती है। जंगली गाँव है। शाम ढलते ही बाघ-भालुओं के जत्थे आ धमकते। दिन रहते ही कई दफ़े बातचीत हुई। अंत में दासी जाकर देख आई। बोली–"लड़की है बड़ी निराली। नाम है तो सरस्वती लेकिन देखने में लक्ष्मी की प्रतिमूर्ति, है भी रूपवती। कोई सीमा नहीं है उसके गुणों की।"

लड़की के बारे में सुनकर बूढ़ी अधीर हो उठी। रूप और गुण की बातें सुनकर गोपाल बाबू का मन भी थोड़ा पिघलने लगा। सोचा कि पढ़ी-लिखी न हुई तो क्या? घर में पढ़ा लेंगे। अब क्या किया जा सकता है।

ब्याह हो गया। घर में चार जन हो गए। गोपाल बाबू ने बारह-चौदह साल के नाई के लड़के को हाट-बाज़ार और छोटे-मोटे काम के लिए बहाल कर लिया। नाम है अर्जुन। गोपाल बाबू की इच्छा थी कि बहू के संग जो दासी आई है, उसे अपने यहाँ रख लें। लेकिन माँ के डर से रख न सके। बूढ़ी माँ को दिखावे बिलकुल पसंद नहीं है। बोलीं–"ठीक है कि आज दो पैसे घर पहुँच रहे हैं, दासी रख लेंगे। कल रुपये न मिले तो? नहीं मेरे लाल, दो पैसे बचाकर रखेंगे तो आड़े वक़्त में काम आएगा।"

बहू के रूप और गुण पर माँ मोहित हैं। दिन-रात उसकी प्रशंसा करती हैं हमेशा माथे पर हाथ भर घूँघट, सिर झुकाकर चलती है। आज पंद्रह दिन हो गए, मुँह से बात तक न निकली। अच्छे परिवार की बेटी है। अच्छा संस्कार मिला है आदि-आदि।"

बूढ़ी माँ मानो बहू के इंतज़ार में थी। विवाह की अष्टमंगला की रस्म भी पूरी नहीं हुई थी कि बूढ़ी माँ बीमार पड़ गई। बीमार भी ऐसी कि बिस्तर ने पकड़ लिया। फिर उठ न सकी। पंद्रह दिनों के अंदर वह अपने ठाँव चली गई।

मृत्यु के दो दिन पहले बेटे को अपने पास बिठाकर माँ ने कई उपदेश दिए–"बेटा, वक़्त पर खा लिया करना। रुपये-पैसे सहेज कर रखना। बहू को पढ़ा देना। अर्से से मेरी चाह थी, इसलिए सोने का एक घूँघर बनवा देना। बहू

पहनेगी।'' सीतादेवी को बुलाकर बोलीं, ''अरी सीता, बहू का ख़्याल रखना। बच्ची है, कुछ नहीं समझती।'' फिर बूढ़ी माँ की बोलती बंद हो गई। कुछ न बोल सकी। मौसी और भतीजा उनके पैताने बैठकर ख़ूब रोए।

बूढ़ी माँ का क्रिया-कर्म संपन्न हुआ। गोपाल बाबू ने अब बहू को पढ़ाना शुरू किया। रोज़ शाम को पास बैठाकर देर रात तक पढ़ाते रहे। 'अ' अक्षर लिखने में महीना भर लग गया। 'अ' और 'आ' के लिए पूरा दो महीने। लेकिन, 'इ' आसानी से हो नहीं रही है। इसे लिखने में छह-सात दिन लग चुके हैं। लिख ही नहीं पा रही है। वह कहती है, ''इस अक्षर में बड़ा घुमाव है। लिखते ही नहीं बनता है।'' पंद्रह दिनों की मेहनत से भी सिखा न पाने के कारण गोपाल बाबू परेशान हैं। बहू भी एक ही जगह पर दो घंटे बैठकर पढ़ते-पढ़ते परेशान है। गोपाल बाबू ने सोचा कि बूढ़ी मैना को राम-राम सिखाना आसान नहीं है।

सरस्वती देवी को लगता कि इतनी कड़ी मेहनत से पढ़ाई क्यों? कई बार सोचतीं कि बाबू से पूछे। लेकिन हिम्मत साथ न देती थी। आज ख़ूब हिम्मत करके पूछती हैं, ''ए जी, तुम कचहरी-दरबार में जाते हो। इसलिए पढ़ोगे। लेकिन, मैं क्यों पढ़ाई करूँ?''

गोपाल–''कचहरी-दरबार के लिए नहीं, तुम पढ़ोगी तो अक़्ल आए।''

यह बात सुनकर देवी ठठाकर हँस पड़ी। गोपालबाबू ने सोचा कि उनकी बात बहू को पसंद न आई। इसलिए लापरवाही से हँस रही हैं। लेकिन, यह गोपालबाबू की भूल थी, सरासर भूल। असली बात यह थी कि सरस्वती देवी अच्छी तरह जानती हैं कि उनकी ख़ूब बुद्धि है। रूप और गुण में उनके समान इस मुल्क में कोई नहीं है। फिर अब पढ़ाई क्यों करें? उनमें ख़ूब बुद्धि होने की बात वे गाँव की संथाल औरतों से सुन चुकी हैं। उनकी माँ ने भी कइयों के सामने कहा है–''मेरी बेटी की बुद्धि की बराबरी कोई नहीं कर सकता। मेरी बेटी के अलावा पूरे मुल्क में कोई बेहतर नहीं है। खाना बनाने में कर सकती है कोई उसकी बराबरी? साग की छौंक लगाए तो सारा गाँव महक उठता है। सभी गुणों में मेरी बेटी अनुपम है। पिठौरी बनाने में उसके सामने कोई लड़की खड़ी नहीं हो सकती है। द्वार पर चौका पूरती है तो राह चलते लोग निहारते रहते हैं।'' बहू को लगा कि बाबू को उसके गुणों का पता नहीं है। इसलिए पढ़ने को कहते हैं। ''सभी काम-काज छोड़कर मैं दो घंटे बैठकर 'ह्रस्व ई' रट नहीं सकती।''

अब गोपाल बाबू पढ़ने के लिए कहते हैं तो वह बहुत काम होने की

बात कहकर मुँह बिदकाते हुए चली जाती हैं। इसलिए गोपाल बाबू काफ़ी परेशान हैं।

गोपाल बाबू ने सोचा कि जब यह पढ़ नहीं रही हैं ख़ामख़ाह घर में बैठे-बैठे क्या करूँ? गाँव के नुक्कड़ पर राधे बाबाजी का मठ है। सभी अमला मिलकर वहीं एक सभा करते हैं। 'भक्तिदायिनी' नाम रखते हैं। सभा में पुराण-पाठ होता है। धर्म की चर्चा होती है। अब शाम ढलते ही बाबू उसी सभा में चले जाते हैं।

सरस्वती देवी पहले से ही परेशान थीं। शाम हुई तो खा-पीकर सो जाना चाहिए। वे रात के पहर भर बाद खाना खाएँगे, यह क्या है भई? आजकल उनके मन में कई तरह की चिंताएँ हैं।

पहली चिंता गाँव में तो सभी टाट-दरवाज़े बंद करके सो जाते हैं, बाबू अकेले जाते कहाँ हैं? कोई बाघ या भालू आ जाए तो क्या होगा? हमेशा घूँघट डाले कोने में बैठी रहती है। किसी से बातचीत भी नहीं कर सकती। बाहर के लोग घर में आते नहीं हैं। इस गाँव की हालचाल जानेंगी कैसे?

दूसरी चिंता बाबू आजकल मुझसे प्रेम नहीं करते हैं। ज़रूर किसी और से प्यार करते हैं। वह है कौन?

तीसरी चिंता बाबू क्या उसी के पास जाते हैं? ज़रूर उसी के पास जाते हैं। हमेशा चिंतित रहने के चलते शरीर दुबला हो चुका है। अंत में तय किया कि बाबू से पूछेंगी कि जाते कहाँ हैं? लेकिन पूछने का साहस नहीं हो रहा है।

सास के मरने के दिन से मौसेरी सास रोज़ शाम को बहू का हालचाल पूछने आती है। आजकल रोज़ एक बार समझाती हैं, "इतना मत सोचा कर सास के वास्ते? शरीर कमज़ोर हो रहा है। सास की उम्र हो गई थी। इसलिए गुज़र गईं। इसमें तू क्या कर सकती थी। हमेशा सास-ससुर साथ कहाँ रहते हैं? चल बिटिया और सोचना छोड़।" बूढ़ी ने सोचा कि बहू सास को भुला नहीं पा रही तभी ऐसी हालत कर रही है अपनी।

आज महीने का आख़िरी शनिवार है। बाबू ज़ल्दी कचहरी से लौटे। शाम के पहले सभा के लिए निकलने वाले ही थे। सरस्वती देवी ने बड़ी हिम्मत करके पास जाकर पूछा—"क्यों जी, रोज़ रात तुम किसके पास जाते हो?"

बाबू—"भक्ति-दायिनी सभा में।"

सरस्वती—"क्या, क्या कहाँ? भगवती डाइन?"

बाबू ने मुस्कराते हुए कहा—"हाँ-हाँ भगवती डाइन।

सरस्वती—"उसकी सुंदरता कैसी है बताओ, क्या वह काफ़ी सुंदर है?"

बाबू मुस्करा कर चले गए। काफ़ी परेशान हुए। जंगली संथाल गाँव से कैसा जंगली जानवर लाया हूँ कि भक्तिदायिनी शब्द तक बोलना नहीं जानती। कहती है भगवती डाइन। क्या चाहता था, क्या मिला? तक़दीर जो न करे। सरस्वती देवी जिस जगह खड़ी थीं, ठीक उसी जगह एक खंभे की भाँति दीवार से टेक लगाए खड़ी हैं। रात हो चुकी है। अर्जुन ने पुकारा, माँ जी इस तरह खड़ी क्यों हैं? जलावन रख दिए हैं रसोईघर की ड्योढ़ी पर। उपले भी रखे हैं। पानी के दो मटके भी हैं। जाइए, खाना पकाइए, जाइए।'' अर्जुन की दो-तीन बार हाँक लगाने के बाद सरस्वती 'हूँ' के साथ रसोई की ओर बढ़ी। चूल्हे में जलावन झोंककर उस पर हाँडी चढ़ा दी। तीन जन के लिए एक सेर चावल रोज़ पकाती है। सरस्वती देवी ने बिना नाप-जोख किए पतीली भर चावल लाकर हाँडी में उड़ेल दिया। चूल्हा जलाती रही। अर्जुन देख रहा था। चावल धोया न गया था। एक लोटा पानी उड़ेला गया। अर्जुन की समझ में कुछ न आ रहा था। थोड़ी देर बाद अर्जुन ने पुकारा–''माँ जी, माँ जी, देखिए-देखिए। चावल नीचे से शायद जल चुका है। जलने की बू आ रही है।'' सरस्वती देवी ने 'हूँ' कहकर हाँडी में आधा मटका पानी और डाल दिया। थोड़ी देर बाद अंजुरी भर पिसी हुई हल्दी और मुट्ठीभर नमक हाँडी में डालकर कलछी चलाने लगीं। अर्जुन ने पूछा, ''माँ जी, माँ जी, भात में हल्दी क्यों डाली?'' अर्जुन की बात कान में पहुँचे तब न? ज़मीन-आसमान की चिंताएँ और परेशानियाँ। आँखों के सामने मानो धरती घूम रही है। भगवती डायन नाचते-कूदते उनके पास चली आ रही है।

सरस्वती ने सोच लिया, भगवती डायन के बारे में अर्जुन से पूछेंगी। पति की बात नौकर से पूछना अनुचित होगा। लड़के से पूछने में शर्म भी आ रही है। उसे दो-तीन बार देखती हैं। पूछ न पाई। लेकिन ज़्यादा सब्र भी नहीं कर पाई। पूछती हैं–''क्यों रे अर्जुन, तूने भगवती डाइन को देखा है?''

अर्जुन–''कौन डाइन माँ जी?''

सरस्वती–''अरे, वही भगवती क्या वह बहुत सुंदर है?''

सरस्वती ने सोचा कि अर्जुन को सब कुछ पता होगा। ज़रूर जानता होगा। अर्जुन थोड़ी देर चुप रहा। वह ठहरा नाई का बेटा, चालाक। वह भला अपनी अज्ञानता क्यों प्रकट करता? ख़ूब ज़ोर से बोला–''हाँ, माँजी, देखा है, देखा है।'' उसने जान-बूझकर सरासर झूठ नहीं कहा था। बात यह है कि एक बार वह बाबूजी के साथ श्यामसुंदर के मंदिर में झूलन का मेला देखने गया था। एक सुंदर स्त्री ठाकुर के सामने नाचते हुए गीत सुना रही थी। देखकर

आया था। अर्जुन का घर है धामरा झील के नज़दीक समुद्र के किनारे देहाती गाँव सुना दांडी में। औरतें नाचती हैं। ख़ूबसूरत औरतें। उसके पुरखों में किसी ने देखा न था। सोचा कि उसी के बारे में माँ जी पूछ रही हैं।

सरस्वती–"क्या बाबू उसके पास बैठे थे?"

अर्जुन–"जी, माँ जी, उसकी बग़ल में बैठे थे।" उसके बाद अपनी समझदारी ज़ाहिर करने के लिए बताने लगा–"वह भगवती डाइन बहुत सुंदर है। बहुत सुंदर साड़ी पहनी हुई थी। बदन और सिर में कितने सारे ज़ेवर पहन रखे थे।"

मालकिन चावल की हाँडी में लोहे की कलछी चला रही थी। गर्दन घुमाकर अर्जुन से पूछा "क्या बोला, उसने सोने का घूँघर पहन रखा था?"

अर्जुन–"हाँ, माँ जी, सोने का घूँघर, मैंने खुद देखा है।"

सरस्वती देवी ने मान लिया कि बात सच्ची है। उनके सिर पर किसी ने मानो टोकरी भर अंगारे उड़ेल दिए हों। चीख़ते हुए वह खड़ी हो गई–"ऐं क्या? मेरी सास कह गई थीं कि मैं सोने का घूँघर सिर में पहनूँगी। उसे डाइन पहन चुकी है। मैं ज़िंदा न रहूँगी। आज ही जान दे दूँगी।" हाथ में लोहे की कलछी थी। तड़ातड़ भात की हाँडी पर मारने लगीं कलछी। अधपके चावल, माँड़ और खपड़े से चूल्हा भर गया। आग बुझी तो सें-सें की आवाज़ आने लगी। गरम हाथ-पैरों पर माँड़ छिटकने से सुपाड़ी की तरह गोल-गोल फफोले पड़ गए। उस पर ध्यान नहीं रहा। घर के सारे पानी के मटके, सब्ज़ी की हाँडी, चावल की हाँडी, सब कलछी से फोड़ती गईं। रसोई खपड़ा, पानी, चावल और माँड़ से भर गई। "क्या हुआ, क्या हुआ", कहते हुए अर्जुन चिल्लाता रहा। बाहर आकर, अर्जुन के पकड़ने के बावजूद, ज़मीन पर सिर ठोकती रहीं। सिर फूटा, ख़ून की धारा बहने लगी। बरामदे में बैठकर विलाप करने लगीं–"मैया री! मुझे क़साई के खूँटे से बाँध दिया है, मेरी मैया, मैं तो मर गई। मरते वक़्त तेरा मुँह नहीं देख पा रही हूँ, मेरी अम्मा। तूने मुझे आग के गड्ढे में धकेल दिया, मेरी अम्मा री।"

अर्जुन दोनों हाथ से उनकी बाँह पकड़कर बैठे-बैठे चिल्ला रहा है। घड़ीभर से विलाप करते हुए मालकिन थक चुकी है। थोड़ा बेहोश होकर जैसे ही लुढ़क पड़ती है, अर्जुन धीरे-धीरे हाथ छोड़कर राधे बाबा के मठ की ओर दौड़ा। आधे रास्ते से ही चीख़ते हुए भाग रहा है–"मालिक, ज़ल्दी आइए। घर डूब गया, सब लुट गया, माँ जी अंतिम घड़ियाँ गिन रही हैं।"

सभा में पुराण-पाठ व चर्चा जारी है। अर्जुन हकला रहा है। ठीक से बोल नहीं पा रहा है। सभी ने सोचा कि मुख़्तार का घर जल गया। मालकिन जल

गई हैं। मुख़्तार को तो कुछ सूझ नहीं रहा है। दौड़े जा रहे हैं। अमले, वकील, मुख़्तार आदि सभी भागे जा रहे हैं। पुराणवाचक बूढ़े हरि मिश्र पुराण का पोथा फेंककर सबके पीछे लथर-पथर हो भाग रहे हैं। घड़ी भर में ही आने-जाने वाले और पास-पड़ोस के सौ फीसदी लोग घर के चारों ओर घिर जाते हैं। सबका एक ही सवाल, "क्या हुआ?" अंदर की बात जानता कौन है? जवाब किसी के पास नहीं है।

मुख़्तार बाबू ने घर में जाकर देखा कि सरस्वती देवी ज़मीन पर पड़े-पड़े हुंकार भर रही हैं। गरज रही हैं। रसोईघर का हाल देखा। उन्होंने अर्जुन से सारी बातें पूछीं–घर में कौन आया था, किसने क्या कहा, मालकिन ने क्या खाया आदि। उसका एक ही जवाब–"ना, मुझे कुछ नहीं पता।"

बाबू–"तुझे कुछ बताई थीं?"

अर्जुन ने थूक निगलते हुए कहा–'ना'। अर्जुन जानता तो था, पर साफ़ झूठ बोला। भगवती डाइन की बात, सोने के घूँघर की बात कहने से शायद खुद पर बट्टा लग सकता है।

गोपाल बाबू ने बाहर आकर अंदर का सारा हाल बताया। बाबुओं ने सोच-विचार कर तय किया–"यह एक किस्म की बीमारी है। जल्दी चार जने दौड़ो। जहाँ जो डॉक्टर मिले लेकर आओ। हरि मिश्र ने थोड़ा गुस्सा ज़ाहिर करते हुए कहा–"क्यों भई, हमें बिना पूछे डॉक्टर लाने दौड़ते हो। इस बीमारी को डॉक्टर तो डॉक्टर, डॉक्टर का बाप भी कुछ नहीं कर सकता। पिशाची की हवा लगी है। बुलाओ, ओझा शुक्रियामुखी को, फ़ौरन आँचल में बाँधकर ले जाएगा। दस जगह हमारी देखी-परखी बात ही चलती है। हरि मिश्र पुराने बुज़ुर्ग आदमी हैं। भाषा-भागवत का मतलब ख़ूब समझते हैं। उनकी बात कैसे अनसुनी होती? किसी से कुछ कहे बिना मुख़्तार बाबू ओझा को बुलाने खुद सीधे भागते हैं। अँधेरी रात, दस जगह ठोकर खाकर कुहनी और घुटने छिल चुके हैं। ख़ून रिस रहा है। पीछे आ रहे साथी उन्हें उठाकर थामे न होते तो पता नहीं क्या हाल हुआ होता।

शुक्रियामुखी इलाक़े का नामी ओझा है। एक ठिंगना-सा आदमी थुलथुल बदन का। दोनों हाथ देह की तुलना में काफ़ी लंबी और मोटी। कुहनी से हथेली तक का क़िस्सा कुछ छोटा लगता है। चेहरा काफ़ी चिपटा, चेचक के दाग़ हैं शायद। नाक काफ़ी चिपटी और मोटी। चलते वक़्त जाँघें एक-दूसरे से घिस जाती हैं। माथे पर अठन्नी आकार की सिंदूर की बिंदी। आँखों में अंजन। देह के काले रंग से मिल जाने के कारण पता ही नहीं चलता। सिर पर

छोटे-छोटे घुँघराले बालों में जड़ी-बूटियों से भरे अष्टधातु के पाँच ताबीज़ बँधे हुए। है न दमदार ओझा। इसलिए दूसरे बरदाश्त न कर पाने के कारण मंत्र-बाण चलाते हैं। किसी के एक बाण चलाने से एक ताबीज़ फट से फूट जाता है। शुक्रिया से ये बातें सुनी हुई हैं। एक मैला लाल कपड़ा पहन कर, कमर में मैला गमछा लपेट रखा है। बाएँ कंधे से एक झोला लटक रहा है जड़ी-बूटियों से भरा। उसमें एक कुँवारी लड़की की हड्डी रखी हुई है, किसी तगड़े भूत, प्रेत, डायन, चुड़ैल से पाला पड़े तो इसे निकालता है। हाथ में बाँस का एक मोटा डंडा है।

शुक्रिया ने लोगों को सुनाने के लिए ऊँची आवाज़ में कहा, "चिंता मत कीजिए। देखिए, इसी क्षण डायन-चुड़ैल जो भी होगी, बाँध कर ले जाऊँगा।" मुट्ठी भर मंत्रित उड़द घर के चारों ओर छिटका कर घर के चार कोने में चार लोहे की कीलें गाड़ दीं। इससे और कोई भूत-प्रेत घर में घुस न सकेगा। चलिए अब मरीज को दिखाइए।"

घर के अंदर वाले बरामदे में आँचल से सिर और पीठ अच्छी तरह ढाँप कर, दोनों घुटने सीने से लगाए, घुटनों पर सिर रखे सरस्वती देवी बैठी हुई हैं। लगता है कि उसे हल्की-सी झपकी आ गई है। अर्जुन एकटक उन्हें निहार रहा है। पाँच हाथ की दूरी पर ओझा खड़ा हुआ। मरीज को थोड़ी देर तक आँखें फाड़-फाड़कर अच्छी तरह देखा। घर की छत और दीवारों को भी निहार लिया। फिर गोपाल बाबू की ओर देखकर गिरगिट की तरह अति घमंड के साथ सिर हिलाते हुए कहा, "हुँह, देखते रहिए बाबू, देखते रहिए कि मैं क्या करता हूँ।" बात छोटी-सी लगती है लेकिन सरस्वती देवी के कानों से टकरा गई होगी। उनका बदन थोड़ा हिल-सा गया। फिर ओझा पाँच हाथ की दूरी पर बाएँ घुटने के बल बैठकर ज़ोर-ज़ोर से मंत्र पढ़ने लगा, "वीर-वीर महावीर। वीर तू वीर न था। मेरी पुकार सुनकर तू भागता हुआ आया। बाँध-बाँध भूत को बाँध, प्रेत को बाँध, डाइन को बाँध, किसकी आज्ञा, कुँआरी हड्डी कामचंडी। भगवती वासुली की करोड़ आज्ञा आ-फू, आ-फू, आ-फू"। तीन बार फूँक मारकर मुट्ठी भर मंत्रित उड़द सरस्वती देवी पर छितरा दिए।

सरस्वती देवी ने पूरा मंत्र सुना। वह कुछ समझ न पाईं। नाम सुना भगवती डाइन। फिर ढेर सारा उड़द झरझराते हुए गिरने के कारण चौंककर देखने लगीं। पास ही एक भूत कंधे पर लाठी लिये बाँधना चाह रहा है। ख़ूब ज़ोर से चीख़ उठीं, "ओ मेरी मैया, भूत मुझे खा गया रे, डाइन बाँधना चाह रहा है।" चीख़ते हुए हुए वह लुढ़क पड़ीं। झा ने बाबू जी से कहा—"हुज़ूर, दो

तगड़े उलझाऊ भूत और डाइन बसे हैं। सुना नहीं, मालकिन ने भूत और डाइन दोनों के नाम लिए।" मूँछों पर ताव देते हुए (लेकिन मूँछ है नहीं) खूब ज़ोर से बोले, "मालिक परेशान न हों। क्या शुक्रिया से ये दमदार हो सकते हैं भला? दोनों की जोड़ी को बाँधकर (झोला उठाते हुए बोला) इसी में भरकर ले जाऊँगा। आप अड़हुल के ढाई अधखिले फूल, केले के पेड़ का एक गूदा और पंचरंगा भोग ज़ल्दी-ज़ल्दी लाइए। मैं जा रहा हूँ तालाब से लोटा भर पानी लाने। दीजिए-दीजिए, चार पैसे दीजिए। उधर से दो दो डाकिनी फल लेता आऊँगा।"

सरस्वती देवी इतना ही सुन सकीं कि बाँधकर झोले में डाल ले जाऊँगा। चीख़ते हुए चकराकर गिर पड़ीं, बेहोश हो गईं।

इतने में पेशकार बाबू की बूढ़ी माँ झुक-झुककर पिछवाड़े से आ पहुँची, साथ में राधी है हाथ में दीया थाम कर। सरस्वती को भली भाँति देखने के बाद चीख़ने लगीं, "मेरी बेटी को मार डाला रे, मेरी बच्ची को ख़त्म कर दिया। अरे गोपाल, भरद लोगों को बाहर करो। अरे अर्जुन, दरवाज़ा बंद करो।"

सरस्वती बेहोश हैं। उसके पास बैठकर धीरे-धीरे सिर पर हाथ फेरने लगी बूढ़ी माँ। हाथ को चिप-चिप-सा कुछ लग रहा है। अरी राधी! ज़रा ढिबरी तेज़ करना। ऐं यह क्या? अरे, ख़ून बह रहा है। हाय, हाय, सिर फट चुका है।" चूना और जला हुआ कपड़ा सिर पर रखकर पट्टी बाँध दी, "ऐं-सारे बदन पर ये फफोले कैसे? तमाम फफोलों पर नारियल का तेल लगा दिया। दादी माँ के रुदन को देखकर राधी रोते हुए चाची के बदन पर हाथ फेर रही है। अर्जुन पंखा झल रहा है। बूढ़ी ने गीले गमछे से बदन पर लगे ख़ून, धूल, कीचड़ आदि पोंछकर ख़ून और माँड़ से सने कपड़े बदलवाकर एक धुली हुई साड़ी पहना दी। सरस्वती को थोड़ा-थोड़ा होश आने लगा। उसने देखा कि मौसेरी सास, राधी और अर्जुन उसे घेरकर बैठे हुए हैं। उसने घर के चारों ओर नज़र दौड़ाई। भूत भाग चुका था।

बूढ़ी–"अरी मेरी बिटिया, अरी मेरी बिटिया, अरी मेरी लाली, अरी मेरी बच्ची, अरी मेरी आँखों की पुतली!" फुसलाते हुए ख़ूब प्यार जताया। ठंडी हवा, राधी के हाथ का स्पर्श और बूढ़ी की कोमल बातों से सरस्वती होश में आई। अब कोई डर नहीं है। बूढ़ी सिर्फ़ सोच रही है कि बात क्या है? बूढ़ी ने पूछा, "बोल बिटिया, क्या बोलना चाहती हो?" सास की बातों का क्या जवाब दे। राधी को पास खींचकर कान में फुसफुसाते हुए बोली, "मैं माँ के पास जाऊँगी।"

बूढ़ी–"हाँ, ज़रूर जाएगी। मेरी अम्मा से मिलने का मेरी भी बड़ी इच्छा

है। भालुकपोशी गाँव भी देख आऊँगी। कल सुबह दो डोलियाँ मँगाई जाएँगी। दोनों सवार होकर निकलेंगे।"

राधी के पूछने के पहले चाची ने उसका हाथ दबाकर साथ ले जाने की सहमति दे दी।

राधी–"एँ-एँ चाची! तुम्हारे गाँव में क्या पालतू भालू हैं, मुझे काटेंगे?"

चाची ने भतीजी का हाथ पकड़कर हिला दिया, यानी, भालू काटेंगे नहीं।

"अरे अर्जुन, घर में कोई नाश्ता है?" अर्जुन कटोरी में दो मिठाइयाँ और एक गिलास पानी रख गया। "अरी राधी, चाची को खिला दे"–इतना कहकर बरामदे में चली गई।

राधी, "दादी माँ, चाची खा नहीं रही हैं।"

"एँ-क्या, खा नहीं रही है? फिर तो उसकी अम्मा को देखने न जाऊँगी। अरी राधी सुन, चाची नहीं खाएँगी तो तू भी नहीं जाएगी।" अब चाची क्या करती? राधी ने जोंक की तरह चिपक कर जबरन दोनों मिठाइयाँ खिला दीं। एक गिलास क्या, चाची तो गटागट एक ही साँस में लोटा भर पानी पी गई।

बूढ़ी पास आकर बैठी। धीरे-धीरे बहू के सिर पर, पीठ पर हाथ फेरती रही। उसका बेचैन मन जानना चाह रहा था कि मामला क्या है? यह बखेड़ी क्यों? लेकिन बहू से तुरंत पूछने से कोई भेद खोलेगी नहीं। सारा मटियामेट हो जाएगा।

बूढ़ी पास बैठकर फुसलाते हुए ढेर सारी बातें कहकर बहू का मन बहला रही है। अंत में मौका देखकर बोली, हाँ रे बिटिया सचमुच गोपाल पूछेगा कि भालुकपोशी क्यों जाओगे? उसे सच बात न बताने से जाने न देगा। बात क्या है, बता दे बेटी?" अब सरस्वती बड़ी उलझन में पड़ गई। पति की बात, अप्रिय बात है। सास से कैसे कहे। बूढ़ी समझ गई और बरामदे की ओर चलीं, "अच्छा बेटी, तू राधी को बता दे।"

राधी–"दादी माँ, कुछ नहीं बता रही हैं।"

बूढ़ी–"बात खुलकर न कहेगी तो गोपाल जाने न देगा। राधी, तब तो तू अपनी नानी को देखने जा नहीं पाएगी।"

राधी तो चमगादड़ की तरह चाची के पीछे पड़ गई, "चाची बोलो, हाँ बोलो, चाचा जाने न देंगे, तुम बोलो।"

राधी ने कहा, "चाची कह रही हैं, डाइन।"

बूढ़ी ने पूछा, "कौन डाइन?"

राधी ने पूछकर बताया, "वही भगवती डाइन।"

बूढ़ी ने अर्जुन को पास बुलाकर पूछताछ की। तमाम बातें पूछीं। सभी बातों का एक ही जवाब 'ना', वह जिस तरह घबराते हुए 'ना' कहता था, बूढ़ी समझ गई कि वह सारी बातें जानता है। लेकिन डर के मारे कह नहीं रहा है। उसे ख़ूब डराया, ख़ूब भरोसा दिया। अर्जुन बात छिपा रहा था लेकिन बूढ़ी की जिरह में फँस गया।

सारी बातों में से बूढ़ी ने असली बातें चुन लीं। गोपाल रोज़ शाम को भगवती डाइन के पास जाते हैं। बहू को पहले की तरह नहीं चाहते इसलिए इतना बखेड़ा।

बूढ़ी ने बाहर खड़े गोपाल बाबू को बुलवाया। बेटे से इतनी अप्रिय बातें कैसे कहें, तनिक पीछे हटकर खड़ी हो गई। बूढ़ी की ओर से अर्जुन ने बाबू से इस तरह कहा, "आप पहले की तरह माँ जी को नहीं चाहते। रोज़ शाम को भगवती डाइन के पास जाते हैं। उसे सोने का घूँघर दिया है। इसलिए माँ दुखी हैं। इतना बखेड़ा है।"

भगवती डाइन का नाम सुनकर गोपाल बाबू तत्काल सब समझ गए। अब वे हँसें या अपना सिर धुनें? कैसी जंगली पशु है। किस बात को लेकर क्या कर डाला? दस शरीफ़ लोगों के सामने अपमानित होना पड़ा। इसलिए काफ़ी दुखी हैं।

बूढ़ी और राधी दोनों के बीच में बहू को सुलाया गया। उस रात गोपाल बाबू के यहाँ भीड़ लगी रही।

बहू स्वस्थ हो गई है—यह सुनकर बाहर खड़े लोग अपने-अपने घर लौट गए। लेकिन भीतरी बात क्या है, लोग जान न सके। गोपाल बाबू ने चाणक्य में पढ़ा था कि घर का भेद बाहर प्रकट न होना चाहिए।

पहले डॉक्टर को बुलाने का प्रस्ताव हुआ था। अंत में डॉक्टर को आना ही पड़ा। बहू के सिर के घाव और हाथ-पाँव के फफोले, फिर गोपाल बाबू के दोनों घुटनों के घाव भरते-भरते डॉक्टर बाबू ने कम-से-कम पूरे बीस विज़िट जेब में डाल लिए हैं।

19.
अधर्म वित्त

गाँव नरहरिपुर ब्राह्मण बस्ती है। इसके नुक्कड़ से पचास-साठ क़दम की दूरी पर बलदेव जी का पूजा मंडप है। गाँव की दिशा को छोड़ मंडप की अन्य तीनों तरफ़ पाँच साल के, दस साल के, बीच के और कुछ ख़ूब पुराने, बूढ़े इस तरह गिनती में एक सौ सात नारियल के पेड़ हैं। ये सब ब्राह्मण टोले के साझे के पेड़ हैं। फल एक साथ तोड़े जाते और हिस्से के मुताबिक़ बाँटे जाते हैं।

दिन का पहला पहर है। नारियल पेड़ों के नीचे लगभग पचास ब्राह्मण गोसाई विराजमान हैं। बड़े-बूढ़े और आदरणीय तथा दूर-दराज़ के गाँवों से आए हुए मित्र नारियल की पत्तियों से बनी चटाई पर बैठे हुए हैं, बाक़ी सभी ज़मीन पर। छोटे-छोटे बच्चे सुबह से शाम तक नारियल के बग़ीचे में उछल-कूद करते, हुल्लड़ मचाते हुए खेलते रहते हैं। लेकिन आज किसी की जुबान से कोई बात नहीं सुनाई पड़ रही है। दो-दो चार-चार बच्चे दूर घूमते हुए गोसाइयों की सभा की ओर ताके जा रहे हैं। शायद उनका भी क़यास है कि आज गाँव में कुछ होने वाला है। ब्राह्मण टोले के गोसाइयों के अलावा दूसरे गाँवों के आठ-दस गोसाई दूर-दूर से आए हुए हैं। जवान जग्गू पति दोनों पाँव और हथेली के बीच पत्थर का एक कटोरा रख कर, सिर झुकाए, हाथ में बट्टा लिये नास घोंट रहा है। घड़र-घड़र की आवाज़ आ रही है। घोंटना ख़त्म हुआ। पहले बुज़ुर्गों के सामने, फिर बड़े लोगों के सामने कटोरा रखते गए। सभी चुटकी भर नास, लेकर सूँ-सूँ करके नथूनों में ठूँसने लगे।

नास सूँघ लेने के बाद सबसे पहले लक्ष्मण मिश्र ने पूछा–"मामा जी, यह नास तुम्हारे ज़माने का है या नाना जी के दौर का?" (लक्ष्मण मिश्र, दिवाकर द्विवेदी के भांजा, इंट्रेंस पास, एक माइनर स्कूल के हेडमास्टर हैं। मामाजी की आफ़त भरी बातें सुनकर दूसरे मित्रों की तरह मिलने आए हुए हैं।)

द्विवेदी ने कहा–"नहीं, नहीं बबुआ! मेरे ज़माने के दो पैसे भी नहीं हैं।

पिताजी ने अपनी मँझली बेटी तारा जीजी की शादी में साहू से करीब सौ रुपये ताड़ पत्ते का रुक्का लिखवा कर लाए थे। अगले साल पचास रुपये लेकर साहू के पास पहुँचे। सोचा था कि सूद चुकाकर मूल से कुछ रुपये कटवा लेंगे। महाजन से रुपये देखकर दाँतों तले जीभ दबाकर कहा–"यह क्या, क्या गदाधर चाचा? सुना है कि तुम अनाज बेचकर ये रुपये चुका रहे हो। राम-राम! यह भी कोई बात है? बाल-बच्चों का कुनबा। धान जीवन है, धान लक्ष्मी है। उसे क्या बेचना चाहिए? मिला भी क्या धान था? ले जाओ, ले जाओ, रुपये ले जाओ। तुम कुल-पुरोहित हो। वैसे भी तुम्हें चाचा मानता हूँ। रुपये चाहे तुम्हारे पास हों या मेरे, बात बराबर है। जाओ, जाओ। इन रुपयों से अनाज ख़रीद लो। गाँव में दस यजमानों के यहाँ पूजा-पाठ हो जाने पर एक ही दिन में रुपये मिल जाएँगे।" पिताजी बिलकुल सीधे-सादे थे। साहू की मीठी-मीठी बातों से बिलकुल पिघल गए। पिता जी ही क्यों? तुम भी जाओ तो सुनोगे कि शक्कर-सी मीठी बातें, कैसी निश्छल बातें करते हैं। सोचोगे कि ऐसा सीधा, परोपकारी और धार्मिक बातें इस संसार में केवल वही कर सकते हैं। ये जो तुम्हारे सामने बैठे हैं राम महापात्र, सदाशिव मिश्र, विश्वनाथ शतपथी, भीम पाढ़ी सबका यही हाल है। बेटा-बेटी के ब्याह के लिए कर्ज़ा लिया था। सबकी तीस-तीस एकड़ बँटवारे की ज़मीन हमारी ज़मीन के साथ एक ही तारीख़ में कटक की जॉजकोर्ट में नीलाम हो चुकी है। अब तो गाय के खुर के बराबर की भी ज़मीन न बची है। अन्य छह लोगों ने भी उससे कर्ज़ा लिया था। वे सभी मूल और सूद में डूब चुके हैं। आने वाले छह महीने या साल भर में उनकी ज़मीन भी लुटने वाली है। सिर्फ़ इस बाभन टोले में नहीं, इस इलाक़े के बीसों गाँवों में जिस किसी की थोड़ी-सी अच्छी ज़मीन बची है वह बेदख़ल होकर ही रहेगी। किसी को ज़रूरत पड़ गई तो आधी रात में भी रुपये गिन कर रख देगा। एक बार भी उससे रुपये उधार ले लिए गए तो तीन पुश्तों में भी चुकाए नहीं चुकेंगे। सूद, सूद का सूद, उसका सूद; सिलसिला जारी रहेगा। मुंशी भी कुछ ऐसे ही मिले हैं। कोई पाँच रुपये जमा करे तो खाते में डेढ़ रुपये लिखे जाएँगे। हाँ, क्या कह रह था? पिताजी उनकी बातों में आकर रुपये अपने साथ वापस लेते आए और धान ख़रीद लिया। अगले साल बारिश कम हुई। फ़सल अच्छी न हुई। तुम्हारी सरस्वती मौसी का ब्याह था। नौवाँ साल पूरा होने वाला था 'दसवर्षा तुकन्यका' विवाह नहीं किया तो कन्यादान का फल नहीं मिलता। पिताजी चलकर हाज़िर हुए साहू की चौखट पर। साहू लार टपकाते हुए ताक में था। उसे मौका मिला।

साहू ने मुस्कराते हुए नर्म स्वर में कहा–"ठीक है, चाचा जी ले जाइए। इस घर के रुपये उस घर में जाएँगे। और क्या है? अरे मुंशी जी, आइए। चाचाजी कुछ उधार लेंगे। पहले की रक़म का ब्याजसहित हिसाब कीजिए।" मुंशी विदेई महांति ने जोड़-घटाव करने के बाद कहा–"पहले की रक़म के मूल और सूद मिल कर हुए ढाई सौ रुपये। अभी के सौ रुपये जोड़े जाएँ तो साढ़े तीन सौ।" यह सुनकर पिताजी को काटो तो ख़ून नहीं। साहू ने पिताजी के मन की बात भाँपते हुए कहा–"ठीक है, ठीक है चाचाजी, फ़िक्र न करें। लौटाना तो होगा बाद में। आप कुल पुरोहित हैं। चुकाने के वक़्त सौ-दो सौ कम करके दे देने से मैं ग़रीब न हो जाऊँगा। आठ दिन बाद ब्याह है। रुपये नहीं लेंगे तो काम कैसे बनेगा?" पिताजी ने साहू की बातों में हामी भर दी। बोले–"ठीक है, रुक्का लिखवा लीजिए।" थोड़ी देर तक ख़ामोशी रही। फिर साहू बोले–"समझे चाचा जी, यह है कलियुग। इन कायस्थ मुंशियों का कोई भरोसा नहीं है। रुक्के का किसी भी वक़्त कुछ भी कर सकते हैं। बाद में आप मुझ पर इल्ज़ाम लगाएँगे। इन रुपयों का अंगूठा लगाकर रजिस्ट्री कर डालना बेहतर होगा। कोई उँगली न उठा सकेगा। इसमें ख़र्च भी कितना है? आप अभी घर से लाकर थोड़े दे रहे हैं।" अंगूठा, लिखा-पढ़ी और रजिस्ट्री वाला काम पूरा हुआ। जो करना था कर लिया। अब रुपये दो। जब गिन कर दिया तो सत्तासी रुपये आठ आने। "अरे रुपये कम हैं, क्यों?" मुंशी ने समझा दिया कि संदूक की पूजा के लिए दो रुपये सैकड़े। मुंशी का ख़र्च दो रुपये। गुमाश्ता के कटक आने-जाने आदि का ख़र्च मिलाकर साढ़े छह रुपये। कुल मिला कर बारह रुपये आठ आने हुए। पुरोहित जी, आप पंडित हैं। इतना समझ नहीं पा रहे हैं? आप तो देख ही रहे हैं रोज़ का लेन-देन। आपसे ग़लती से एकाध रुपये ले लेंगे तो क्या मालिक का भंडारा भर जाएगा? तमस्सुक की रजिस्ट्री के बाद चार साल तक उसकी कोई चर्चा नहीं की। पिताजी उसके द्वार पर जाते तो उसकी भक्ति का क्या कहना–"चाचाजी, आप पधारे हैं, पायँ लागूँ। अरे, आसन डालो। पैर धोने के लिए पानी लेते आओ।" ऐसा आदेश करता। दो साल पहले पिताजी का देहांत होते ही महाजन की तो पौ बारह। मूल और सूद का हिसाब आया बारह सौ कुछ रुपये। सिर्फ़ कई आने की याचिका दायर कर दी कटक की अदालत में। मैं जा पहुँचा महाजन के पास। उसने कहा–"अरे भाई, दिबू, गुमास्ताओं ने मेरे अनजाने में याचिका दायर कर दी। जा, जा तू हाकिम के पास रुपये क़बूल कर आ, बाद में निपटा देंगे।" मेरा मन हिचकिचा रहा था। कटक जाने का मन न था। डर के मारे उसके वकील के कहे अनुसार हाकिम के पास जवाब दे आया। यह तो पिछले साल की बात थी। मुझे

और कुछ न पता था। कब डिक्री हुई और कितने रुपये की तथा कैसे क्या हुआ, यह हमें न पता। सुनने को मिला कि पिछले मकर के महीने के सातवें दिन चार-पाँच हज़ार की अपनी संपत्ति सात सौ में नीलामी पर चढ़ गई। महाजन ने खुद नीलाम लिया। उसका मुंशी कहता कि मुझ पर और छह सौ रुपये का पावना है। हमारे बाभन टोले के पाणिग्रही भाइयों के हिस्से की ज़मीन पचास एकड़ है। दक्षिण दिशा की ओर केवड़े की घनी झाड़ियाँ हैं। पंद्रह एकड़ की सपाट ज़मीन एक ही घेरे में है, बड़ी उपजाऊ है। मुझे मालूम है कि इस ज़मीन पर पिछले दस-पंद्रह साल से उनकी नज़र है। जब भी इस गाँव में आता, उस ज़मीन के पास जाकर चारों ओर घूम-फिर कर देखता, "कितनी अच्छी फ़सल होती है, किस क़िस्म का धान उपजाया जाता है?" दस बार पूछता। मैं झिझक रहा था। सोचता कि सही सही पता तो चले कि उसकी मंशा क्या है? हमारे मामले की तरह और पाँच लोगों की ज़मीन की नीलामी करवा दी है।

लक्ष्मण मिश्र बोले, "मैं देख रहा हूँ कि यह साइलक है।" बिना कुछ समझे भागवत पति ने कहा, "ना, ना, वह इस बस्ती का नहीं है। वह मकरामपुर का है यहाँ से डेढ़ कोस दूर नदी के किनारे।" लक्ष्मण मिश्र ने कहा नहीं, नहीं मैं वो बात नहीं कह रहा हूँ। इंगलिस्तान में इसी क़िस्म का एक सूदख़ोर आदमी था, उसका नाम साइलक है।" तिरेई तिहाड़ी ने कहा, "वह कुछ भी हो, अब क्या चारा है? लक्ष्मण मिश्र ने बुज़ुर्गों की ओर देखते हुए हाथ जोड़कर, ज़मीन पर मत्था टेककर कहा, "हे गोसाई महाप्रभु। मैं बालक हूँ मुझे अन्यथा न लें। मैं यह कहना चाहता हूँ कि इसमें साहू की कोई ग़लती नहीं है। यह आपकी अज्ञता है। आप लोग अपने पाप-कर्म के चलते सब कुछ समाप्त करके दरिद्र हो जाते हैं।" बुज़ुर्ग अनंत पाढ़ी थोड़ा गर्म होकर बोले, "क्यों भई लक्ष्मण! हमारा पाप क्या है? बेवकूफ़ी कहाँ दिखी तुम्हें?"

लक्ष्मण मिश्र ने फिर से जुहार करते हुए कहा, "नानाजी मेरे, शायद आप मुझ पर ख़फ़ा हैं। देखिए, किसी महात्मा ने इस बाभन टोले को बसाकर इतनी अधिक ख़ज़ाना रहित ज़मीन दिलाकर यह सोचा होगा कि आप लोग शास्त्र अध्ययन-अध्यापन करेंगे। दाता को त्रिकाल संध्या में आशीर्वाद देंगे। क्या ऐसा कर रहे हैं? कहिए भला, बाभनों की इतनी बड़ी बस्ती में एक भी चौपाल नहीं। बेकार में नास सूँघ कर, भाँग पीकर, चौसर खेलते हुए दिन बिताएँगे। दाता को त्रिकाल संध्या में आशीर्वाद देने की बात छोड़िए, पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर भी आपमें से कितने त्रिकाल संध्या में गायत्री का जाप, संध्या-पूजन आदि नित्यकर्म करते हैं? क्या यह पाप नहीं? एक बात और, कर्ज़ा कैसे

दुकालें उनकी चिंता नहीं, भागते हुए जाकर महाजन की चौखट पर रुक्का लिखवा लेंगे। बेटे और बेटियों के ब्याह में अपना बड़प्पन दिखाने के वास्ते हेकड़ भारी रकम फूँक डालेंगे। अपनी औकात के हिसाब से जो चादर नहीं फैलाता वह मूर्ख नहीं तो क्या होगा? यह देखिए, अति पवित्र ब्राह्मण बस्ती की ज़मीन पर बीसों जातियों के लोग कब्ज़ा किए बैठे हैं। क्या यह आप लोगों के पाप और मूर्खता का परिणाम नहीं है? इसके लिए कौन ज़िम्मेदार होगा?"

माधव पाणी ने कहा, "लक्ष्मण ने जो कुछ कहा, वह सच है। सोलह आने सच। आइंदा जो कुछ करेंगे, सोच-समझकर करेंगे। लेकिन, अब इससे बचने का क्या उपाय है?"

लक्ष्मण मिश्र–"आप लोगों ने कौन-सा उपाय सोचा है?"

आनंद मिश्र–"हम क्या जानें कोर्ट-कचहरी? कर्म-कांड की बात कहिए तो हम आदमी तैयार हो जाएँगे।"

लक्ष्मण मिश्र–"मामाजी! ज़मीन की नीलामी के बाद साहू के पास गए थे, क्या कहा उसने?"

दिवाकर द्विवेदी–"गया था। दस बार जा चुका हूँ। भेंट ही नहीं होती है। बीमार है, बातचीत नहीं कर सकता, ऐसे बहाने बनाकर सो जाता है। मेरा रोना-धोना सुनकर सहुआइन कमला और उसका बेटा विद्याधर दोनों रोने लगते हैं। मुझे काफ़ी ढाढ़स बँधाते हुए बोले हैं कि मुझे अपनी ज़मीन वापस दिला देंगे। न जाने तकदीर में क्या है? माँ और बेटा दोनों दयालु हैं, धार्मिक भी। उनसे किसी का दुख देखा नहीं जाता। कुबेर साहू जितना निष्ठुर है, उतना ही कंजूस। हथेली से पानी चू नहीं सकता। कर्ज़ के रुपयों के कारण किसी का घर-बार नीलाम करा देता है तो ये लोग उसका परिवार चलाने के लिए छिपाकर रुपये और अनाज दे दिया करते हैं।"

लक्ष्मण मिश्र, "एक उम्मीद तो है, लेकिन उस पर भरोसा करके रहना खतरे से खाली नहीं है। अपना भी एक रास्ता निकालकर चलना चाहिए। अभी ज़मीन पर कब्ज़ा होने मत दीजिए। मामा जी! आप कह रहे थे कि पाँच हज़ार रुपये का माल सात सौ में नीलामी करके ले गया है। इस बात पर शिकायत करके दोबारा नीलामी के लिए हाकिम के पास दरख़्वास्त कीजिए। कुछ खर्च करते रहने से काफ़ी दिनों तक इस मामले की तारीख़ बढ़ती जाएगी। और तुम लोग इधर माँ-बेटे के साथ लगे रहो। आज और कल में बड़ा अंतर है। इस बीच कोई दूसरा रास्ता निकल सकता है।"

मिश्र की बातें सुन सभी बड़े-बूढ़ों ने काफ़ी खुश होकर ऊँची आवाज़ में

कहा, "दीर्घजीवी बनो, राजराजेश्वर भव! नहीं तो क्या यूँ ही अंजलि भर-भर कर रुपये देकर हाकिम बनने की पढ़ाई की है? देखो तो सही, हम इतने सारे लोग अँधेरे में लाठी चला रहे हैं। कुछ सूझ न रहा था। बबुआ ने कितना बढ़िया रास्ता सुझाया है।"

बुजुर्ग दनेई महापात्र ने ज़ोर से दो चुटकी नास सूँघकर हकलाते हुए कहा, "महान गोसाइयाँ! समझ लें–

"ख़ूब बढ़ता है अधर्म वित्त,
जब डूबे तब मूल सहित।"

फिर वे बोले, "आप लोगों को पता है कि उसने इंसानों का गला दबाकर, ख़ून चूसकर सारा धन कमाया है। मुफ़्त में उसे लाखों की संपत्ति मिली है। जब से भीम की दौलत पर क़ब्ज़ा हुआ है, तब से वह दौलतमंद बना है। और क्या? यह जो साहू का घर देख रहे हो, यह उसका अपना घर नहीं है। भीम साहू का है। भीम भी कुबेर साहू से कुछ कम गला रेतने वाला न था। अति कंजूस था। बाल-बच्चा कोई भी नहीं। एक लड़के को गोद लिया था। वह भी मदिरा पीकर, भाँग पीकर मर गया। कुबेर न उसकी जाति का है और न बिरादरी का। उसके साथ कारोबार करता था। भीम को अपने वश में कर रखा था। जैसे ही भीम ने आँखें मूँद लीं, कुबेर ने नौकर-चाकरों को हाथ में कर लिया। वकील और मुख़्तार को लेकर, खुद को पोष्य पुत्र बताकर सरकारी पकड़ से बाहर हो गया। पापी का धन पानी की तरह बढ़ता है। अब देखो, जल्द ही उतर जाएगा। पूरा इलाका उससे पीड़ित है। हज़ार लोगों की आत्माएँ रो रही हैं। जिनका उसने कुछ न बिगाड़ा है, वे भी गाली बकते रहते हैं। अब मेरी ही बात ले लो, बेटे के ब्याह में पचास रुपये का कर्ज़ा लिया था। पंद्रह वर्षों में सिर्फ़ ब्याज के वास्ते ढाई सौ रुपये दे चुका हूँ। पाँच बार अंगूठे की छाप लेने के बाद। उसने याचिका दायर कर दी। पाँच सौ रुपये की डिक्री करवाई और मेरी तीस एकड़ की ज़मीन नीलामी में ले ली। वह ज़मीन पूरे परिवार का आसरा थी। बूँद भर पानी डालने का भी उपाय न बचा। दिन-रात प्राण छटपटाते रहे। आँसू सूखते नहीं। पंच परमेश्वर सुनिए, मैं जनेऊ पकड़कर कह रहा हूँ कि आज से तीन पक्ष, तीन महीने और तीन साल में उसका सर्वनाश होगा। अगर ऐसा न हुआ तो मैं ब्राह्मण नहीं। जनेऊ की इस ब्रह्म गाँठ को तोड़कर फेंक दूँगा। वह तो बहुत पहले से ही मिट चुका होता, लेकिन सिर्फ़ माँ और बेटे के पुण्य के कारण बच गया है।"

लक्ष्मण मिश्र–"मामा जी! सहुआइन और विद्याधर के पास आना-जाना

जारी है न? उनके सहारे पड़े रहिए।"

मामा–"हाँ बेटा, चारा भी क्या है? बाल-बच्चेवाला परिवार है। ज़मीन की नीलामी हो चुकी है। दूसरा कोई रास्ता नहीं आमदनी का। मेरा दुख देखकर सहुआइन रो पड़ती हैं। उसी के दिए हुए पाँच मन धान और पाँच रुपये से आज तक गुज़ारा चल रहा है। कल रात भी विद्याधर के पास गया था। उसने मुझे पक्का जवाब देते हुए कहा, "चाचा, मत रोओ, चाहे जो हो जाए तुम्हें तुम्हारी ज़मीन दिलवा के मानूँगा। मेरे ब्याह करके लौटने तक सब्र करो। तुम कुल पुरोहित हो, साथ चलोगे ही। सुना है कि मेरे ससुर दस लाख के मालिक हैं। वे भी ढंग से दान-दक्षिणा सहित तुम्हें विदा करेंगे।

कुबेर साहू कहता है, "मुझे ब्याज की ज़रूरत ही नहीं है। मेरी जायदाद सलामत रहे। सोनपुर से लेकर दशपल्ला तक दस-पंद्रह गोदाम हैं। हर गोदाम में एक-एक मुंशी, एक-एक आदमी कारोबार सँभालने के लिए हैं। खुद की बीस के लगभग बारह कोठरियों वाली शानदार नाव हैं। बरसात के दिनों में उनमें सौदा लाता है और ले जाता है। नावों के अलावा गर्मी के दिनों में सौदा लाने-ले जाने के लिए कौड़ी की क़ीमत के दो भारवाही बैल हैं। नावों के अलावा गर्मी के दिनों में सौ कौड़ी की क़ीमत के बैलों से काम लिया जाता है।

सोनपुर जाते समय नाव हरिहरपुर गाँव की बग़ल से होते हुए निकलती है। संयोग से उसी गाँव के आस-पास ही शाम होती। कुबेर गाँव के पास नदी के उस पार नाव रोककर रसोई वगैरह बनाता। कुबेर को घर में पूजा-पाठ करते हुए या हरिनाम लेते हुए किसी ने देखा नहीं है। लेकिन सफ़र में अपने साथ पूजा-पाठ की सामग्री से भरा एक थैला ले जाता। नदी के किनारे सब कुछ सजाकर रात को काफ़ी देर तक आँखें मूँदकर जाप करता। उस समय चारों और नज़र डालकर चुपके से व्यापारियों से माल ख़रीदने और बेचने की बातचीत भी कर लेता। हरिहरपुर तक सुनाई पड़ने वाली घंटा ध्वनि भी बीच-बीच में करता है।

युधिष्ठिर साहू ने कुबेर साहू का नाम सुना था। मुलाक़ात न थी। कुबेर साहू का नदी किनारे ठहरने की बात सुन वे नाव पर सवार हो नदी पार करते हैं। कुबेर हाल-चाल पूछा करता था। युधिष्ठिर के पहुँचते वक़्त कुबेर साहू ध्यान में बैठे हुए हैं। उन्हें ध्यानस्थ देखकर वे पिघल चुके हैं। ध्यान टूटा। कुबेर साहू को पता चलते ही भागते हुए युधिष्ठिर के पैरों में गिरने को हुए। युधिष्ठिर बोले, "नहीं, नहीं, यह क्या कर रहे हैं? क्या कर रहे हैं? आप धार्मिक व्यक्ति हैं। मैं पापी हूँ, मेरे पैर पकड़ें आप, ऐसा नहीं हो सकता।"

कुबेर कहता है, "ये क्या, आप तो हमारी जाति के सिरमौर हैं। घंटे भर से इंतज़ार करना पड़ा। माफ़ कर दें।" युधिष्ठिर–"नहीं नहीं, मैंने ही आपका ध्यान तोड़ा है। मुझे क्षमा कर दीजिए।" दोनों गले मिलते हुए यह कह रहे हैं कि मुझे माफ़ कीजिए। दोनों एक कंबल पर बैठे। युधिष्ठिर ने प्रस्ताव रखा–"जी, आप हमारी जाति के मस्तकमणि हैं। मेरी झोपड़ी के पास बाहर पड़ाव डालेंगे तो मुझे महापाप लगेगा। उठने की कृपा करें, पधारें। मेरी झोपड़ी में पद-धूलि दीजिए। मेरी कुटिया अपनी पवित्र कीजिए।"

दोनों साहू मंदिर के सामनेवाले मंडप में बैठे। ठाकुर के सामने आसन पर बैठना मना है। दोनों ज़मीन पर बैठे। आधी रात तक दोनों की बातचीत चलती रही। इधर-उधर की, कारोबार की बातें करते-करते शादी की बात चल पड़ी। कुबेर ने कहा, "मैंने पिता जी के मुँह से कई बार सुना है कि पहले गढ़जात (सामंत शासित क्षेत्र) इलाक़े और मुग़लबंदी (मुग़ल शासित) इलाक़े में शादी-ब्याह होता था। गढ़जात की लगभग पचास-साठ कन्याएँ मुग़लबंदी थीं। मुग़लबंदी की लड़कियाँ भी गढ़जात में थीं। अधिक दूरी के चलते कमोबेश पचास वर्षों से शादी, लेन-देन बंद हैं। बातचीत के दौरान पद्मावती की शादी का रिश्ता तय हो गया। कुबेर ने कहा, "जी, मैं मुग़लबंदी इलाक़े का काम चला लूँगा। विद्याधर पूरा साल वहीं रहकर काम सँभालेगा। विद्या तो आपका बेटा हुआ। बच्चा है। पेशा समझता नहीं। आपकी चरण-धूलि उसके माथे पर रहेगी तो सब कुछ सीख जाएगा।" रिश्ते को लेकर अब कोई संदेह न रहा। लगे हाथ तिथि भी तय हो गई। अगली मकर शुक्ल सप्तमी। महाजनों की बातें बहुत ज़ल्दी फैलती है। एक ही दिन में ज़िले के तक़रीबन आधे लोगों को पता चल गया कि कुबेर साहू के पुत्र विद्याधर से युधिष्ठिर साहू की बेटी पद्मावती की शादी तय हो गई है।

रिश्ता तय होने के अगले दिन शाम को दोनों समधी ठाकुर के नृत्य मंदिर में बैठे हुए हैं। इधर-उधर की बातचीत के बाद कुबेर साहू ने कहा, "समधी जी! सोनपुर में मेरा बहुत काम था। लगता है कि अब मैं जा न सकूँगा। यूँ समझ लीजिए कि मकर के महीने में ब्याह है, उसे छोड़ दीजिए। कर्क का महीना चल रहा है। इसका भी क्या हिसाब करें? बाक़ी बचे सिंह से लेकर धनु तक के पाँच महीने। इसी बीच सारा बंदोबस्त करना होगा। उस पर नाव के आरोहण का मामला है। रास्ते के लिए पूरा एक महीना छोड़ दीजिए। कुल जमा चार महीने हाथ में हैं। मैं सोच रहा हूँ कि कल सुबह निकल जाऊँ। जी, क्या हुक्म है?" युधिष्ठिर साहू ने तनिक आँख मूँदकर बैठे-बैठे कहा,

"और दो दिन ठहर जाते तो शायद बेहतर होता। ठीक है, आप जैसा उचित समझते हैं।"

मकामपुर में चहल-पहल है। साहू के बेटे विद्याधर का ब्याह है। लेकिन एक समुदाय में रोना-धोना चल रहा है। बीसों गाँवों में साहू के क़रीब दो-तीन सौ क़र्ज़दार हैं। धान हो या रुपये, उसके पास से किसने कर्ज़ न लिया है? साहू का सब पर दबाव है। बेटे का ब्याह है, चुकाना ही पड़ेगा। न हो सके तो मूल रहने दो, सूद चुकता कर दो। सूद का एक पैसा भी रखना नहीं है। अब प्यादे चल रहा है। लोगों के घर में रुपये का तो क्या कहें, पटसन का बीज तक नहीं है। एक-एक के घर में दो-दो प्यादे बैठे हुए हैं। कर्ज़दार साहू के द्वार पर भूखे-प्यासे पड़े-पड़े गुहार लगा रहे हैं। सुनता कौन है? कुछ कर्ज़दारों ने दस-बारह साल के पुराने कर्ज़े के मूल और सूद का हिसाब करके तमस्सुक रजिस्ट्री करवा दी और छुटकारा पा गए। तमस्सुक में जगह-ज़मीन, घर-बार सब कुछ रेहन में रख दिया। सहुआइन सब सुन रही थी। दो दिनों से पानी तक नहीं पी रही हैं। अकेला बेटा ही तो है। उनकी इच्छा है कि शुभ कार्य शीघ्र संपन्न हो जाए। लेकिन प्रारंभ से सैकड़ों लोग रोने-बिलखने लगे हैं। ऐसा अन्याय धर्म भला कैसे सहन कर सकता है? इसलिए वे साहू के पैरों पड़ीं, ख़ूब मिन्नत की, रोईं भी। लेकिन, नतीज़ा यह हुआ कि पति से कड़वी बातें और गालियाँ सुननी पड़ीं। औरत ठहरीं, क्या करतीं। तथापि वह चुपचाप न बैठी रही। मुंशियों को फुसलाकर प्यार से, कुछ हाकिम के नाते समझा दिया, "किसी को तक़लीफ़ देकर रुपये नहीं वसूलने हैं।" साहू मुंशियों को गाली बक रहा है, फजीहत कर रहा है रुपये की वसूली क्यों नहीं हो रही है? हाँ हिसाब जारी है, परचे लिखे जा रहे हैं ऐसा कहकर दिन गुज़ारने लगे। जिस जगह साहू ख़ुद जा बैठता, वहाँ सहुआइन चुपके से रुपये दे देतीं।

इधर ब्याह के सामान की ख़रीदारी ख़ूब हो रही है। आतिशबाज़ ने पहले ही पेशगी ले ली। कपड़े गट्ठर के गट्ठर कचहरीवाले कमरे में जमा हो रहे हैं। मसाला वग़ैरह ख़रीदने के लिए दो मुनीम कटक रवाना हो चुके हैं। लेकिन, साहू को यह अच्छा नहीं लगता। उसकी इच्छा है कि बेटे के ब्याह के बहाने क़र्ज़दारों से रुपये वसूल हो जाएँ। सहुआइन के पिताजी बड़े अमीर थे। वे पुत्र सुख से वंचित थे। उनकी पूरी जायदाद सहुआइन को मिली। सहुआइन चाहती हैं पुत्रहीन की संपत्ति घर में न रहे, दान-पुण्य में ख़र्च हों। उनकी दान-पुण्य की बातों को पुत्र भी नहीं जान पाता। माँ की इच्छा है कि बेटे का ब्याह ख़ूब धूम-धाम से हो। लोग खा-पीकर मौज़ करें। सहुआइन के हाथ खुले हुए हैं।

साहू को इन बातों का पता चलता है। बेटे के ब्याह के लिए वह कुछ निकाल न रहा है। इधर ज़्यादा ख़र्च देखकर झुंझला रहा है।

लगभग पंद्रह शानदार नौकाएँ, तमाम कश्तियाँ तैयार हुईं। पुरोहित ब्रह्मा, ज्योतिषी, मुनीम, कुछ स्थानीय प्रतिष्ठित व्यक्ति, नाई, ग्वाले आदि मिलकर साठ-सत्तर लोग बारात में चलेंगे। नदी में पानी कुछ कम है। इसलिए रेत हटाने के लिए लकड़ी की हथेली जैसी औज़ार लेकर बीस के क़रीब मज़दूर साथ चल रहे हैं। नदी की धारा के विपरीत चलने के लिए चौबीस-पच्चीस दिन से कम न लगेंगे। लेकिन सहुआइन ने डेढ़ महीने की रसोई का सामान और नाश्ते का सामान दे रखा है। ऊँच-नीच है, पता नहीं रास्ते में देर लग जाए।

सहुआइन जितनी दानी और दयालु हैं, उतनी काम में माहिर हैं। पौ फटने से लेकर आधी रात तक चरख़ी की तरह घूमती रहतीं। तनिक भी नहीं थकतीं। घर की रसोई में दोनों वक़्त सौ के क़रीब पत्तलें लगाई जाती हैं। सफाई करने वाले और डोम स्त्रियाँ एक-एक खँचिया लिये पिछवाड़े के दरवाज़े के पास बैठी रहतीं। सहुआइन सभी का ध्यान रखतीं, सब को दे-दिलाकर ही ख़ुद खाने बैठतीं। सहुआइन का ध्यान रखने वाला कोई नहीं। लेकिन बेटा विद्याधर माँ के खाने-पीने का ख़्याल रखता, बीमार पड़ने पर पास बैठकर हाथ-पाँव सहलाता।

आज पूस का पंद्रहवाँ दिन है। बारात निकलने की तिथि है। नदी के किनारे आधा कोस तक नाव और कश्तियाँ क़तार में सजी हैं। नाविक चप्पू, डांडा, नौका खींचने की रस्सी, रेत हटाने के औज़ार लिये हाज़िर हैं। क़रीब बीस गाँवों से बाल-बच्चों सहित आए हुए औरत-मर्द नदी के किनारे क़तार में खड़े हैं। नदी में ही थोड़ी दूरी पर पटाख़ों की आवाज़ होने लगी। तुरंत शंख और ऊलूर ध्वनि से दिशाएँ गूँज उठीं। सभी विद्याधर से प्रेम करते हैं। मन-ही-मन उसके लिए मंगल कामनाएँ करते हैं। बारात निकलने से पहले घर के आँगन में बनी वेदी पर नांदीमुख श्राद्ध हुआ। विद्याधर मंडप से उतर कर माँ से विदा लेने गया। माँ के पाँव छूकर, पद-धूल लेकर माथे पर लगाया। माँ ने तुलसी के बिरवे से मिट्टी लेकर उसके माथे में तिलक लगाया। तब विद्याधर ने माँ के चेहरे की ओर देखा, चेहरा मुरझाया है। आँखों की पुतलियाँ अंदर धँस गई हैं। विद्याधर चौंक उठा, "माँ, तूने ऐसी क्या हालत बना रखी है? बुख़ार है क्या? मैंने सुना है कि तू चार दिन से खाँस रही है। नहीं, नहीं, तुझे छोड़कर जाने को मन नहीं कर रहा है।"

माँ–"यह क्या बबुआ! यह कैसी बात है? इस वक़्त ऐसी बातें नहीं

करते। रास्ते में ग्रामदेवी तेरी रक्षा करेंगी। महाप्रभु जगन्नाथ तेरा कल्याण करेंगे। मुझे कुछ नहीं हुआ है। अभी कुछ दिनों से थोड़ा काम ज़्यादा पड़ रहा है। खाने-पीने का वक़्त गड़बड़ाया है। ग्रामदेवी को प्रणाम करके यहाँ दही और ज़िंदा मछली देखकर लाओ।"

"मंगलम् भगवान विष्णुः"–मंत्र पाठ कर पुरोहित ने दूल्हे की यात्रा का शुभारंभ किया।

हरिहरपुर पहुँचने में हिसाब से ठीक पच्चीस दिन लगे। साथ में नाचने और गाने वालों की टोली थी। सही स्थान पर कभी-कभी शाम को नाच-गाना भी होता। नदी के किनारे कोसों दूर से लोग आकर गाना-बजाना सुनते।

युधिष्ठिर साहू के घर से कोस भर की दूरी पर शाम को रोशनाई लगी। कटक की भूईंचंपा, चंद्रउदिआ, गठबाण पटाखे साथ लिए गए थे। युधिष्ठिर साहू ने भी तरह-तरह की आतिशबाज़ियों का इंतज़ाम कर रखा था। दस कोस दूर से लोग चिउड़ा-चावल पोटली में बाँधे आतिशबाज़ी देखने पहुँचे थे। लौटते समय आपस में बातचीत कर रहे थे कि किसी राजकुमार का ब्याह भी इतनी धूम-धाम से नहीं हुआ होगा।

ब्याह हो गया। अष्टमंगला की रस्म भी पूरी हो गई। अब दूल्हा-दुल्हन को विदा करना है। हाँ, हाँ, आज, कल, अगले शुक्रवार, रविवार; इस तरह करते-करते महीना गुज़र गया। आख़िर एक दिन युधिष्ठिर साहू ने कुबेर साहू से कहा, "समधी! नदी में पानी नहीं के बराबर है, बहुत अधिक रेत हटानी पड़ेगी। बहुत देर लग जाएगी। इधर धूप तेज़ होने लगी है। हमारी और आपकी बात होती तो फिर भी कुछ सोचा जा सकता था। साथ में दासी और परिजन भी होंगे। उन्हें बड़ी तक़लीफ़ होगी। मैं कहता हूँ कि परिजनों को विदा कर दीजिए। बेटा और आप दोनों रुक जाइए। आषाढ़ की शुरुआत में जब पहली बरसात का पानी आएगा, नौका खोल देंगे। अब आप पराए थोड़े ही हैं। जो झिझकते हुए कहूँ? यह देखिए, हड़बड़ी में सारा इंतज़ाम करना पड़ा। बच्चों को दो-चार ज़ेवरात तो देने होंगे। देख ही तो रहे हैं कि चार-छह सुनार दिन-रात काम में लगे हुए हैं। हड़बड़ी का काम नहीं है। समय लेकर न पूरा किया तो काम सही न होगा। कुछ और चीज़ें भी तो बनवानी हैं। आठ नौकाएँ देना चाहता हूँ। काम पूरा नहीं हुआ है। नदी के किनारे चलकर देखिए, काम आधा भी नहीं हुआ है।" कुबेर साहू ने सोचा, "यहाँ तो सोलह कोठरियों वाली सात नौकाएँ बन रही हैं। ज़ेवरात भी बन रहे हैं। अब बेटा घर जाकर क्या करेगा? पैसा कमाने का मन नहीं है इसका। माँ-बेटा मिलकर इसे दो, उसे दो, घर की

चीज़ें बाँटने में लगे रहते हैं।" अभी तो इतना लाभ है। बूढ़ा आँख मूँद ले, तो सब कुछ मेरा है। नहीं-नहीं, बूढ़े का दिल तोड़ना सही नहीं होगा। घर में कुबेर साहू के मुँह से कभी किसी ने भगवान का नाम नहीं सुना है, हमेशा ज़ुबान में सूद और लाभ का हिसाब लगा रहता है। हरिहरपुर पहुँचने के दिन से हरदम 'जगन्नाथ, जगन्नाथ, नीलाचलनाथ' रट रहे हैं। कुबेर साहू ने आँखें मूँदकर कहा, "ठीक है समधी! जैसी आपकी आज्ञा, उसकी अवज्ञा कौन करेगा? आप तो हर जगह के मालिक हैं।" सभी परिजनों की विदाई हुई। सिर्फ़ बाप, बेटा और कुछ सेवक रुके रहे।

कुबेर ने सोनपुर और बौद्ध के सभी कोठारों के मुनीम और कारोबार सम्हालने वालों को लिख भेजा—"देहात का कोई भी पावना बाक़ी न रहे। आषाढ़ की शुरुआत में पहली बरसात का पानी नदी में आते ही सभी नौकाओं में सौदा लादकर हरिपुर घाट पहुँच जाना। उधर घर में सहुआइन ने बिस्तर पकड़ लिया है। वैद्य ने कहा, "यह राजयक्ष्मा है, शिवजी के लिए भी असाध्य है।" मुनीम को बुलाकर सहुआइन ने सावधान कर दिया, "ख़बरदार! मेरी बीमारी की ख़बर हरिहरपुर न भेजना, बेटा सुनकर घबरा जाएगा।"

विद्याधर ससुराल में राजसी ठाट में है। लड़की जितनी सुंदर उतनी ही गुणवती तथा पतिव्रता। हर आठवें दिन घर से माँ का समाचार न मिले तो बेटा बेचैन हो जाता था। पिछले पत्र से पता चला कि माँ की बीमारी ठीक हो गई है। अब वह निश्चिंत है। फिर भी यह सोचकर कि माँ बहू को देखे, कभी-कभी अधीर हो जाया करता है।

सुख के दिन घोड़े की गति से बीत गए। युधिष्ठिर साहू के घर में आनंद-उत्सव के साथ देखते ही देखते चार महीने बीत गए। कन्या की विदाई के लिए जो कुछ चाहिए था, सब कुछ तैयार है। दस नई नौकाएँ घाट पर क़तार में खड़ी हैं। नौकाएँ चित्रों से अंकित हैं। दोनों छोर पर झंडे फहर रहे हैं। सभी नौकाएँ दहेज में दी जा रही हैं। इनमें दो नावों को ख़ास तौर पर सजाया गया है। एक में बेटी और दूसरे में दामाद जाएँगे। आषाढ़ का महीना आते ही नौकाओं में सामान लदना शुरू हो गया। छह नौकाओं में बरतन-भाँड़े, पेटियाँ, बेंत की संदूकची, कपड़े-लत्ते की पेटियाँ, सिल-बट्टा से लेकर झाड़ू तक, यहाँ तक कि दो साल के लिए दातौन भी नावों में रखी गई। युधिष्ठिर साहू की ताक़ीद, "ख़बरदार! सोच-समझकर देना। बेटी दो साल तक ससुराल में वहाँ के पानी के अलावा और कुछ इस्तेमाल ही न करे।" लोगों का कहना है कि दहेज के सामान पचास हज़ार से कम के न होंगे।

कुबेर साहू के दूर-दूर के कोठारों से करीब तीस नाव माल लेकर वहाँ पहुँचीं। सभी नौकाएँ सामान से लदी थीं। पानी की लहरें नौकाओं के छप्पर की ओलती तक छू रही थीं। नौकाएँ कोस भर कतार में खड़ी हैं। आज से ही किनारे पर देहात से आने वाले दर्शकों का तौंता लगना शुरू हो गया है।

आषाढ़ कृष्ण दसवीं को यात्रा तय की गई। सभी पानी के इंतज़ार में बैठे हैं। पर्याप्त पानी न होने से नाव नदी के अंदर के बड़े-बड़े पत्थरों को पार नहीं कर सकती। ज़रूरत के मुताबिक पानी हो गया। आज सफ़र का दिन है। हज़ारों दर्शक नदी के दोनों छोर पर कतारों में खड़े हैं। एक-एक नौका में चार-चार आदमी चप्पू लिये खड़े हो गए हैं। पीछे की तरफ़ पतवार पकड़ने वाले और आगे राह दिखाने वाले भी खड़े हो गए हैं। ये राह दिखाने वाले न हों तो नौकाएँ नदी के गर्भ में छिपे बड़े-बड़े पत्थर पार नहीं कर सकती हैं।

आठमल्लिक के बाद मुंडापाड़ा गाँव से लेकर कइंत्रागढ़ तक सोलह-सत्रह मील के अंदर ऐसे ही पत्थर हैं। सारे ऊँचे-ऊँचे पत्थर ऐसे अड़े हुए हैं मानो किसी सभा में विराजमान हैं। ख़ूब पानी आ जाने से ये पत्थर पानी में डूब जाते हैं तब उनके ऊपर से होते हुए नौकाएँ निकल जाती हैं। कुछ पत्थर सिर ऊँचा किए रहते हैं। कुछ पत्थरों पर चार अंगुल या बालिश्त भर पानी ही रहता है। नाविक को पत्थर दिखाई नहीं पड़ते। पत्थरों से भरपूर इस स्थान पर नदी की चौड़ाई कुछ कम है। इसलिए धारा तेज़ है। घंटे भर में नौका बीस मील तक की दूरी नाप लेती है। बड़े-बड़े पत्थरों की वजह से यहाँ का रास्ता साँप की तरह टेढ़ा-मेढ़ा होता है। नौका उसी रास्ते से गुज़रती है। रास्ते का पता राह दिखाने वाले को होता है। पानी का बहाव तेज़ होता है। पत्थरों से टकराएँ तो ऐसी आवाज़ निकलती है कि राह दिखाने वाले की बातें पीछे पतवार थामने वाले को सुनाई नहीं पड़तीं। तब वह हाथ के इशारे से राह दिखाता है। पथरीला इलाक़ा पार करने के बाद राह दिखाने वाला कईंत्रागढ़ में नाव से उतर जाता है। उसका काम पूरा हो जाता है। तीन दिनों से श्रवणा चल रही है। ख़ूब पानी, तेज़ आँधी। कल शाम से पानी थम गया है। सुबह से आसमान साफ़ है। सूर्यदेव धधकता स्वर्ण कंदुक के समान उग आए हैं। साहू के घर से ख़ूब ज़ोर से रोने की आवाज़ के साथ-साथ शंख और मंगल ध्वनि सुनाई पड़ी। दूल्हा-दुल्हन की नौकाएँ खोल दी गईं। उनके पीछे-पीछे अन्य सभी नौकाएँ चल पड़ीं। नदी के दोनों तट पर खड़े हज़ारों लोगों ने 'हरिबोल' की ध्वनि की।

सामनेवाली नाव बहती जा रही है। दो कोस की लगभग दूरी तय करने

के बाद श्यामपुर गाँव के पास पहुँची तो सूर्यदेवता बादलों में डूब गए। मल्लाहों को पता है, "उदित हँसते हुए बादल में घुसे, बाप कहे बेटा से आज ज़रूर बरसे।" नदी के दोनों किनारे लोग खड़े-खड़े निहार रहे हैं। नाविक खुशी में 'हरिबोल' कह रहे हैं। दो नौकाएँ मिठाइयों से लदी हुई हैं रास्ते के लिए। अब उत्तर-पश्चिम कोने से चटाई की तरह एक छोटा-सा बादल का टुकड़ा उग आया। ठंडी हवा हौले-हौले बहने लगी। नाविक डर गए। सभी नौका खेने में जुटे हुए हैं। 'जय जय- गंगा माता की जय' गीत गाते हुए चप्पू चला रहे हैं। मुंडापाड़ा के आस-पास पूरे आकाश में बादल भर गए। साथ ही साथ हवा और बौछारें। हवा ही नहीं बहुत तेज़ हवा कभी कभार देखने को मिलती है। मल्लाहों के शरीर में कँटीले तार की तरह बौछारें चुभ रही थीं। सारा दिन बारिश में भींगते हुए नाव खेने वाले मल्लाह आज घड़ी भर में थके हुए हैं। दोनों किनारों से आवाज़ आ रही है–"माँझी, नाव किनारे लगाओ, किनारे।" नाव कहाँ पतवार की सुन रही है? तेज़ हवा नाव के अगले भाग को पीछे कर दे रही है। नदी के तट पर खड़े-खड़े बड़े-पुराने आम, पीपल और बरगद के पेड़ सरसों के पौधे की तरह उखड़ रहे हैं। पूरब से हवा का एक भारी भरकम झोंका आ टकराया। नौकाओं पर बैठे माँझी, राह दिखाने वाले लोग और दूसरे नदी में लुढ़क गए। धक्का मारकर मानो किसी ने उन्हें पानी में धकेल दिया। नौकाएँ एक दूसरे से टकरा रही हैं। कई नौकाएँ टूट-फूट चुकी हैं। बस थोड़ी देर बाद सभी नौकाएँ पानी की धारा में बह चुकी होतीं लेकिन कईत्रागढ़ की मु–डेर पर नदी के बीचोबीच बहुत बड़ा शिलाखंड महाकाल के दूत की तरह खड़ा था। सभी नौकाएँ उससे टकराकर चकनाचूर हो गईं। एक भी बच न सकी। आदमी या लदे हुए माल का कोई ठौर-ठिकाना नहीं। सिर्फ़ लकड़ी की तमाम तख़्तियाँ बहती जा रही हैं।

हिसाब के मुताबिक़ आज ठीक एक साल हुआ। आज भी मिथुन कृष्ण दसवीं तिथि है। महानदी के दोनों तट पर लहरें पछाड़ खा रही हैं। लंगलकाँटा गाँव के पास तट पर दो छोटी-छोटी नौकाओं के सामने के सिरे से दो लंबी रस्सियाँ दो पेड़ों से बँधी हैं। तेज़ धार के कारण नौकाओं के पिछले छोर हौले-हौले डोल रहे हैं। रह-रह कर दोनों नौकाएँ पानी में नाच उठती हैं। नाविक दिन भर डाँड चलाते हुए थक गए थे। लेटते ही गहरी नींद में खर्राटे भर रहे हैं। आकाश में एक भी तारा दिखाई नहीं पड़ रहा। घनघोर अँधेरा। बीच-बीच में बिजली कौंध रही है। एक युवक नौका के पिछले छोर पर गाल पर हाथ रखे चिंतित मुद्रा में बैठा हुआ है। क़रीब आधी रात बीत चुकी है।

वह क्यों नहीं सो रहा है? आँखें मूँदे चुपचाप बैठा है मानो तपस्यारत हो। पीछे की गलही पनघट में कमर तक के पानी में डोल रही है। इतने में पनघट से कुछ ही दूरी पर, "हे गंगा मैया, हे भगवान! मेरी लाज रखो।" की विकल चीख सुनकर मौनी युवक चौंक उठा। देवी की प्रतिमा-सी कोई एक भाग रही है। उसके पीछे पीछे काले भूत-सा मतवाला आदमी डगमगाते कदमों से उठते-गिरते हुए आ रहा है। अत्यंत ऊँची बोली में चिल्लाते हुए कह रहा है, "साल भर से यह कुत्ता तेरे पीछे पड़ा हुआ था, बात सुन नहीं रही थी न? आज सही समय पर सही स्थान यूँ भेंट हो गई। बुलाओ अपनी माँ को। तेरा बाप आकर बचाएगा? मेरी माँ तेरी रखवाली कर रही थी न! अब कौन बचाने आता है?" युवती अकुलाते हुए चीख़ रही है, "हे प्रभु! मेरी लाज बचाओ, माँ गंगा! मुझे गोद में ले लो। मेरे पति मेरे माथे की मणि, मेरे प्राण के देवता को गोद में ले चुकी हो, मुझे भी बुला लो।"

नाव की गलही से पाँच-छह हाथ की दूरी पर यह सब घटित हो रहा है। युवती और आगंतुक दोनों में खींचातानी चल रही है। नौका पर बैठा हुआ युवक उस युवती की आवाज़ को सुनकर चौंक उठा। उस समय बिजली कौंध उठी। युवक की आँखों के सामने झकमक करता हुआ पद्मावती जैसा चेहरा दिखाई पड़ा। अब खुद से रहा न गया। सामने एक चप्पू पड़ा हुआ था। उसे उठाकर हुंकार भरते हुए नौका से सात-आठ हाथ की दूरी पर जैसे ही एक छलांग लगाई। उस उद्दंड राक्षस के सिर पर एक सख़्त चोट लगी। वह आदमी 'बाप रे' कहते हुए नदी में सात-आठ हाथों की दूरी पर छिटक कर गिरा। पानी के छप की आवाज़ हुई। बस इतना ही। युवक ने एक और आघात के लिए चप्पू उठाया, पर आदमी का कहीं नामोनिशान नहीं। युवती ने बिजली की कौंध में इतना ही देखा कि आकाश से उतर कर एक देवता ने उसे बचा लिया। अकुलाते हुए, "मेरे प्रभु! देवता", कहकर युवक से लिपट गई। फिर वह बेहोश हो गई।

युवक ने बड़ी मुश्किल से युवती को नाव में बिठाया। उसने नाविकों को जगाया। नौका के छप्पर को थोड़ा उठाकर बड़ी कठिनाई से युवती को नौका में लेटाया। युवक ने देखा कि युवती होश में नहीं है। सिर के लंबे-लंबे केश से पानी टपक रहा है। पूरा शरीर कीचड़ से लथपथ है। कपड़ा निचोड़ा जाए तो पानी बहकर निकलेगा। वह उलझन में पड़ गया। भले ही उसने अच्छी तरह पहचान लिया है फिर उसे डर लग रहा है। उसके पास कोई नहीं है। युवती का कपड़ा कैसे बदले? अचानक उसकी नज़र हाथ पर पड़ी तो अंगूठी

दिख गई। अपनी दी हुई अंगूठी थी। अब कोई सुबहा न रहा। कपड़ा कहाँ है? अपने भी तो दो ही हैं। अपनी चादर युवती को पहनाकर उसके शरीर पर लगा कीचड़ साफ़ कर दिया।

श्याम साहू विद्याधर के सगे ममिया ससुर हैं। खालपाल इलाक़े के हैं। साहू मँझले क़िस्म के व्यापारी हैं। ब्याह के दौरान विद्याधर की उनसे पहचान हुई थी। घर का पता याद था उन्हें। युवती को होश नहीं आ रहा है। नौका में अंगीठी बराबर जल रही है। कपड़े का गोला बनाकर विद्याधर युवती को सेंकता जा रहा है। रात का अंतिम पहर अभी बाक़ी है। विद्याधर ने मल्लाहों को बुलाकर कहा, "तुम लोग यदि दिन के पहले प्रहर तक खालपाल के घाट में पहुँचा दोगे तो बख़्शिश में पाँच-पाँच रुपये मिलेंगे।" मल्लाहों ने बैठकर सोचा कि मंज़िल यहाँ से चार कोस की दूरी है। अभी नाव खुली तो लग-भिड़कर पहुँचा सकते हैं। आसमान साफ़ है। धुँधली-सी चाँदनी फैलने लगी है। नाव नदी के दक्षिण किनारे चल रही थी। खालपाल उत्तर किनारे पड़ता है। जैसे ही पौ फटी मल्लाहों ने नौका खोल दी।

युवती को अब भी होश नहीं है। मुलायम बिस्तर पर लेटी हुई है। नथुनों पर रुई रखकर देखा गया कि साँस हल्की-सी चल रही है। गाँव के पुराने वैद्य हैं बलदेव वाहिनी पति। उन्होंने नाड़ी की गति देखकर कहा, "सिर्फ़ इंद्रियों की कमज़ोरी है। डरने की कोई बात नहीं है।" कस्तूरी भूषण और अदरख के रस को शहद के साथ मिलाकर, लगातार तीन खुराक पिलाने के बाद बोले, "इस दवा का असर शुरू होते ही होश आ जाएगा।" तीसरे दिन शाम को युवती ने थोड़ा-सा आँख खोलकर देखा। छत और दीवारों पर निगाह डाली। देखा कि एक प्रौढ़ा स्त्री उसके पास बैठकर उसके शरीर पर धीरे-धीरे हाथ फेर रही है। युवती ने धीमी आवाज़ में उससे पूछा, "मैं कहाँ हूँ?" प्रौढ़ा ने अत्यंत धीमे और प्यार भरे स्वर में कहा, "बेटी पद्मावती! मैं तेरी मौसी हूँ क्या मुझे पहचान नहीं पा रही? पद्मा अब बैठने लगी। दीवाल थामकर सुबह-शाम थोड़ा-सा चल-फिर लेती है। वैद्यराज की व्यवस्था के अनुसार थोड़ा-थोड़ा दूध पिलाया जा रहा है। अभी कोई पथ्य नहीं दिया जा रहा है।

बेटी और दामाद के पहुँचते ही साहू ने चार हट्टे-कट्टे प्यादों के हाथ युधिष्ठिर साहू के पास पत्र भेजा, "आज दसवाँ दिन है। तीस मजबूत कहार चार पालकियाँ लेकर हरिहरपुर से आ पहुँचे हैं।" युधिष्ठिर साहू ने लिखा

है—"रास्ते में आठ जगह कहारों की चौकी का इंतज़ाम किया गया है। फ़ौरन बेटी और दामाद को लेकर मौसा-मौसी आ जाएँ। चार दिन का रास्ता दो दिन में तय करना है। थोड़ी भी देर न हो।"

परम आनंद-उल्लास और उत्सव मनाते हुए युधिष्ठिर साहू बेटी और दामाद को घर लेते गए। अर्से तक मंदिर में हरिनाम, कीर्तन, ब्राह्मण भोजन प्रसाद सेवन होते रहे।

घनघोर आपदा महादुर्दिन के बाद तरुण अरुण का प्रकाश बड़ा प्रेममय एवं आनंददायी होता है। विद्याधर और पद्मावती दोनों दिन-रात चकवा-चकवी की तरह हवेली में बैठे आनंद-उत्सव के साथ दिन बिता रहे हैं। नौका चकनाचूर होने से लेकर साल भर तक कैसी मुसीबतें झेलनी पड़ीं, उसके बारे में किसी ने किसी से पूछा नहीं। विद्याधर ने कहा, "नाव टूटते ही मैं एक तख़्ती पर पेट के बल लेटा बहता गया। मैं देखता रहा कि तुम कहाँ हो? सिर्फ़ एक बार तुम्हें देख पाया कि तुम भी तख़्ते पर पड़ी बहती जा रही हो। बाद में सुना कि अगले दिन नदी में बहते हुए किसी मल्लाह ने मुझे उठा लिया। चार दिनों बाद मुझे होश आया। आँखें खोलकर देखा कि एक बहुत बड़े कमरे में लेटा हूँ। पता चला कि यह गोविंदपुर के गोपाल जी का मठ है। कटक से दो कोस दूर। बूढ़े महंत महाराज ललितादास बाबाजी मुझे बचाने की बहुत कोशिश करते रहे हैं। महीना भर के बाद चलने-फिरने लायक़ बना। तुम्हारे पिताजी ने सोने का हार दिया था। वह मेरे पास था। मैंने उसे महंत महाराज को दे दिया। उसे बेचकर मेरा ख़र्च उठाने के लिए कहा। महंत जी ने ना-ना करते हुए उसे स्वीकारा। धीरे-धीरे मेरी ताक़त लौट रही थी। तुम्हारी और अपने पिताजी की याद आते ही दस-पंद्रह दिनों के लिए बीमार पड़ जाता था। इसी तरह आठ-दस महीने की अवधि गुज़र गई। कटक ज़िले में पिताजी का नाम मशहूर है। ललितादास ने पिताजी का नाम सुनकर मेरी ज़्यादा तीमारदारी की। उन्होंने मेरे घर ख़बर भिजवाई। लोगों ने वापसी में ख़बर दी कि माँ का स्वर्गवास हो गया। इसके बाद मैं दो महीनों तक बिस्तर में पड़ा रहा। मैंने तय किया कि घर नहीं जाऊँगा, संन्यासी बनकर तीर्थाटन करूँगा। थोड़ी ताक़त लौटी तो पैदल घर लौटा। घर में जो कुछ देखा उससे एक पल भी रुकने का मन न हुआ। पुरोहित दिवाकर द्विवेदी तथा बाभन टोले व अन्य जिन लोगों की ज़मीन पिताजी ने नीलामी में रख ली थी, उन सबको बुलाकर उनकी ज़मीनें लौटा दी। रजिस्ट्री, ग़ैर-रजिस्ट्री, रुक्का आदि के काग़ज़ात और अनाज के कर्ज़े का खाता सब कुछ जला डाला। कर्ज़दारों को ख़बर भिजवाई कि अब उन्हें कर्ज़ा

चुकाने की ज़रूरत नहीं। धान, गाय-बैल, बरतन आदि जो कुछ था, लोगों में बाँट दिया। एक दिन, रात को किसी से कुछ कहे बिना घर छोड़कर निकल आया। सोचा कि अब तो कोई गुरुजन रहे नहीं, ससुर जी से आख़िरी बार मिलकर, उनका पद-रज माथे पर लगाकर निकल पड़ूँगा। कटक आ पहुँचा। यहाँ पिताजी को सभी जानते हैं। महानदी के किनारे गगड़िया घाट के पास सोनपुर वाली नाव में जा बैठा। आते-आते लंगलकांटा के पास...'' पद्मावती ने अपने आँचल में विद्याधर का मुँह ढँकते हुए कहा, ''और कुछ मत कहिए।'' विद्याधर जब आपबीती सुना रहा था, उस समय पद्मा की आँखों से आँसू बहते जा रहे थे।

विद्याधर ने कहा, ''अब अपनी बात बताओ।'' पद्मा बोली, ''मैं लंगलकांटा गाँव के दीनू दलाई के घर में थी। वे गाँव के अमीर व्यक्ति हैं। सभी गाँववाले उनको मानते हैं। घर के सामने ठाकुरजी का मंदिर बनवाया है। अन्न-छत्र खोल रखा है। सुना कि मैं घाट पर बेहोश पड़ी हुई थी। दलाई के घर की औरतें मुझे उठाकर ले गईं। दलाई दंपती ने मुझे प्रेम से पाला। बेटी से बढ़ कर प्यार किया। मंदिर का प्रसाद मेरे लिए लाया जाता था। जब मैं रोती तो दलाई की पत्नी ढाँढस बँधाती थीं। पिता जी के पास भिजवाने की दिलासा देती थीं। दलेई जितना धार्मिक स्वभाव का है, उसका बेटा उतना ही लफंगा और पाखंडी है। शराब, अफीम, गाँजा आदि का नशा भी उस पर कोई असर न करता था। घर में जवान बहू है। उसकी तरफ़ देखता भी न था। गाँव की बहू-बेटियाँ उसके डर से घर से निकलती नहीं। मुझ पर बड़ा जुर्म करता था। बहुत बुरी-बुरी बातें करता था। इसलिए, दलाई की पत्नी ने मुझे अपने आँचल में छाया की तरह सँभाले रखा था। मैं भी उन्हीं की शरण में रहती थी। फिर भी उसे थोड़ा-सा मौका मिलते ही मुझे बुरी-बुरी बातें सुनाता था। मैं अधिक बरदाश्त न कर सकी। उस दिन रात को डूब मरने आई थी। बदतमीज़ ने रास्ते में पकड़ लिया। तुम ने बचा लिया। उस समय तुम्हें पहचान न सकी। सोचा कि स्वर्ग से उतर कर प्रभु ने मुझे गोद में उठा लिया।''

इधर युधिष्ठिर साहू ने दुनियादारी छोड़ दी है। बेटी और दामाद को सब कुछ सौंपकर दिन-रात बैठे-बैठे हरिनाम का जाप कर रहे हैं।

20.
माधो महांति का कन्यासोना

माधो महांति मधुपुर के हैं। बलराम गोत्री। सत्तर के आसपास के हैं। परिवार में खाने के लिए कोई है तो पंद्रह साल की बेटी। मालती उसका नाम है। महांति जी साठ साल की उम्र में विधुर हो गए। बुढ़िया के गुज़र जाने के बाद दूसरी शादी करने की उम्र उनकी थी। ऐसा उनके हमदर्द कहते फिरते थे। स्वयं महांति के मुँह से भी यह एक-आध बार सुना गया है। दो-तीन साल तक उनका मन भी ब्याह के लिए डोलने लगा था। सिर्फ़ कन्यासोना का पलड़ा बहुत भारी पड़ने के कारण वे पीछे हट गए थे। दो-तीन साल तक कहते-फिरते रहे-"अरे बाप रे, नहीं। कहीं से कोई आकर मेरी लाड़ली का अनादर न कर बैठे। माँ खोई बच्ची रोएगी, उसका दुख देखा न जाएगा।" माँ के गुज़र जाने के बाद वही सात साल की लड़की मालती अपने तथा पिता के लिए खाना पकाती है, जूठे बरतन माँजती है। घर का बाक़ी काम भी उसी के ज़िम्मे है।

महांति जी की एक और बेटी थी। नाम माधवी। बुढ़िया के गुज़रने के चार महीने पहले सात सौ रुपये के कन्यासोना में साठ साल के बूढ़े वर के साथ आठ साल की बेटी का ब्याह रचाया गया था। कन्यादान का सोलह आना पुण्य अर्जित किया गया था। माधवी ग्यारह साल की उम्र में विधवा हो गई। ब्याह के बाद जो गई, कभी मायके नहीं लौटी।

मालती पंद्रह की हो गई है। मालती जैसी रूपवती और गुणवती मधुपुर ही क्यों पूरे इलाक़े में ढूँढ़ते नहीं मिलेगी। लोग कहते हैं कि कीचड़ भरे तालाब में कमल का फूल खिला हुआ है। गाँव की अन्य लड़कियों की तरह मालती को हँसते-बतियाते हुए किसी ने नहीं देखा है। दरवाज़ा बंद करके अपने काम-काज में लगी रहती। बस तालाब से पानी भरने के लिए बाहर निकलती। सिर पर थोड़ा-सा घूँघट काढ़े, बग़ल में गगरी दबाए गाँव के रास्ते के किनारे-किनारे धीरे-धीरे चली जाती। गाँव की सभी औरतें उसकी सुंदर चाल की तारीफ़

करती हैं। पंद्रह साल की कुँवारी लड़की को घर में बिठाल कर रख दिया है। गाँव बिरादरी के लोग महांति को काफ़ी धिक्कारते। अब तो महांति अपने आपको सँभाल न पा रहे हैं। बेटी का ब्याह जो आज तक नहीं हुआ है, उसकी मूल वजह यह कि उसके ससुराल चले जाने के बाद मुट्ठी भर चावल उबाल कर कौन देगा?

फिर ऐसी एक गुणवती लड़की कहाँ मिलेगी? महांति जी सुबह उठकर ज़रूरत के मुताबिक़ दो जन के लिए चावल निकालकर दे जाते हैं। शाम को खेत से लौटने के बाद बाबूजी के लिए परोसे गए खाने में मालती अपने हिस्से से भी कुछ भात उनके लिए रख देती। कभी-कभार बासी भात रख देती। महांति जी चावल नापकर देते समय एक छोटी सीपी में नमक भी नाप कर रख जाते हैं। पिछवाड़े के इमली के पेड़ से साल भर की सब्ज़ी का काम चल जाता है। इमली पक जाने से, महांति जी पेड़ से खुद तोड़कर छिलके हटाकर, रेशे निकालकर मटकों में भरकर भंडारघर में रख ताला लगा देते हैं। उसमें से बाप और बेटी के लिए सिर्फ़ दो फाँक निकलते। मालती बड़ी दयालु है। बाबूजी से बहुत लगाव है। बापू से ही नहीं, सबसे प्रेम भाव रखती है। बिल्ली की एक बच्ची पाल रखी है। उस सूनसान घर में वही उसकी सहेली है। हमेशा म्याँव-म्याँव करते हुए पैरों से लिपटी रहती है। मालती उसे अपने बर्तन में खिलाती है, पास सुलाती है। बाबूजी को हरा मिर्च पसंद है। मिर्च के दो पौधे मज़दूरों के हाथ मँगाकर आँगन में लगा रखे हैं। गर्मी के दिनों में गाँव के बीचवाले तालाब से पानी लाकर पौधे सींचती है। मालती शाम से पहले पानी भरने जाते समय तालाब के किनारे उग आए ननुआ, बथुआ, चौलाई आदि साग में से जब जो मिल जाए थोड़ा-सा चुन लाती। साग सिर्फ़ बाबूजी के लिए पकाती है।

देहातों में जिन्हें अमीर कहा जाता है, माधो महांति ऐसे ही अमीर हैं। क़रीब चालीस एकड़ की खेती खुद करते हैं। साझे में भी बीस एकड़ की ज़मीन दे रखी है। छह जोड़ी बैल हैं। गाय-बछड़े मिलाकर लगभग अस्सी। गायें दूध देने लगतीं तो ग्वाला नियमित रूप से ख़रीदकर ले जाता।

महांति जी का ख़र्च भी क्या है? अनाज बेचकर सिर्फ़ लगान अदा करना है। उसके अलावा एक पैसे का भी कोई दूसरा ख़र्च नहीं है। पिछवाड़े में कपास के कुछ पौधे लगाए हैं। उससे बाप-बेटी के कपड़े-लत्ते का ख़र्च निकल जाता है। अतिरिक्त ख़र्च के नाम पर बचपन से बीड़ी पीने की लत है। छोड़ न पा रहे हैं। रोज़ आधा सेर धान का तंबाकू गोपी की दुकान से आता है।

हमेशा बीड़ी होठों के बीच में लगी रहती है। पास ही एक लंबी पूली पड़ी रहती जिसमें आग सुलगती रहती है। कहीं जाते तो बगल में पूली दबाए निकल पड़ते। मालती अब बड़ी हो चुकी है। अब उसका ब्याह ज़रूरी है। कई जगहों से रिश्ते आ रहे हैं। लेकिन, कीमत तय नहीं हो पा रही है। तीन सौ रुपये से अधिक कोई देने को तैयार नहीं। महांति जी बड़े सत्यवादी हैं। एक ही टेक लगा रखी है उन्होंने—"सात सौ रुपये से एक पैसा भी कम नहीं। बड़ी बेटी भी नौ साल की, सात सौ में गई थी। यह बेटी पंद्रह साल की है। देखिए तो सही कि कितनी सुंदर है। काम करने में कितनी माहिर है! देख-परखकर, समझ-बूझकर बात करनी चाहिए कि नहीं?"

महांति जी समझ चुके हैं कि दूसरी बार या तीसरी बार शादी रचाने वाला कोई बूढ़ा दूल्हा न मिले तो कीमत तय नहीं हो सकती। बेटी के लिए इस तरह के योग्य दूल्हे की राह देख रहे हैं।

मधुपुर गाँव गोपाल जीऊ की देव संपत्ति है। गाँव के बीचोबीच मठ है। अन्यत्र ज़मीन-जायदाद भी है। ज़मीन से मिलने वाला लगान, ऊपरी आमदनी, शिष्यों व सेवकों से मिलने वाला चढ़ावा आदि मिलाकर सालाना लगभग दस हज़ार की आय है। यह निहंग मठ है। कोई महंत ईश्वर को प्यारे हो जाते हैं तो उनका चेला गद्दी पर बैठता है।

महंत रघुवर दास नारायण को प्राप्त हो गए। इसके बाद उनके शिष्य लछमन दास अब गद्दी के मालिक हैं। नए महंत बड़े दाता हैं। दयालु भी। पहलेवाले महंत के सभी अच्छे गुण हैं। चरित्र भी बहुत अच्छा। लेकिन अभी भी बचकानी हरकतें करते हैं। पालतू कबूतर और गौरेया आज भी रखे हुए हैं। महंत ने मठ में एक अखाड़ा बनाया है। साम होते ही गाँव के नौजवान हाज़िर। कृष्णलीला और रामलीला का आयोजन होता। अखाड़े में चुने हुए दस जवान हैं। रात के पहले पहर के बाद महाप्रभु के यहाँ घंटा बजने लगता तो अखाड़ा बंद होता। प्रसाद सेवन के बाद सभी अपने-अपने घर लौट जाते। महंत चुने हुए दस साथियों के साथ मठ के पिछवाड़े बीच बाग़ के तालाब घाट पर बैठकर आधी रात तक गाँजे के त्वरित आनंद का मज़ा लेते। इसी दौरान बीसों इलाक़े की हालचाल का ज़िक्र होता।

महंत गाँव के जज, मजिस्ट्रेट, महाजन सब कुछ हैं। इस गाँव का कोई भी मुक़दमा अदालत में दायर नहीं होता।

महंत का एक नौकर है विनोद। बाईस-तेईस का होगा। देखने में सुंदर। वह बड़ा ईमानदार नौकर है। महंत के अपने बैठकख़ाने की चाभी, मंदिर के

भंडारगृह, आदि सभी कमरों की चाभियाँ उसी के पास हैं। लोहे की पतली ज़ंजीर में गुँथी हुई चाभियों का गुच्छा हमेशा उसकी टेंट में झूलता रहता। सभी मामलों में विनोद पर महंत का सोलह आना भरोसा है। जैसा भी मुक़दमा हो, विनोद की सिफ़ारिश के बिना महंत से ज़ल्दी काम हासिल करना संभव न था। श्री जीउ के गहने, नग़द रुपये, ऋण के दस्तावेज़, महंत की अपनी नक़द आदि लाखों रुपये विनोद के ज़िम्मे हैं। लेना चाहे तो मुक़दमे से ढेर रुपये मिल जाते। लेकिन अपनी तनख़्वाह मासिक दो रुपये के अलावा वह दो पैसा भी नहीं छूता। महंत का एक पैसा भी बेवजह ख़र्च न हो जाए, उसका भी पूरा ख़्याल रखता। प्रजा और कर्ज़दारों से मिलने वाले पावने पर कोई रिहाई नहीं बरतता, महंत के हुक्म होने पर भी। विनोद का घर हाट गाँव के मंदिर से चार कोस दूरी पर है। वह गाँव भी देव संपत्ति के रूप में दिया गया है। माँ के बीमार पड़ने की बात सुन विनोद चार दिन की छुट्टी पर गाँव गया हुआ था। आज सुबह वहाँ से लौटा है। गुमसुम बैठा हुआ है। काम-काज में मन नहीं है। महंत ने पूछा अरे विनोद, यूँ मुँह फुलाए क्यों बैठा है? ज़ल्दी जा, अमराई के रखवाले काम पर लगे हैं या नहीं, देखकर आ जा।"

विनोद महंत के पैरों से लिपट गया। ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। उससे कुछ कहा नहीं जा रहा है।

महंत–"अरे, बात क्या है बता। ऐसे रो क्यों रहा है?"

विनोद–"जी! मैं अब चाकरी नहीं करूँगा। हमारे गाँव के कई जवान रेलवे में काम करके ख़ूब रुपये कमा रहे हैं। माँ का कहना है कि मैं भी वैसा काम करके रुपये कमाऊँ। शादी करूँ। उसने यही कहा है कि वह बीमार है, मर जाएगी। बहू को देखना चाहती है।"

महंत–"हा-हा-हा-हा- यह बात है! अच्छा, मैं शादी करा देता हूँ। एक बढ़िया सुंदर लड़की देखकर ब्याह करा देने से हो जाएगा न!"

विनोद–"हमारी जाति में कन्यासोना में ऊँची रक़म देनी पड़ती है। मैं रुपये कहाँ से लाऊँ?"

महंत–"अरे पगले! तुझे शादी से मतलब है, रुपये की क्या फ़िक्र? अच्छा जो लगेगा, मैं दूँगा।"

विनोद काफ़ी प्रसन्न होकर अपने काम में जुट गया।

पदी नाइन विधवा है। घर में अकेली रहती है। एक बेटी थी, पाँच साल से ससुराल में है। गाँव के बीचोबीच घर है उसका। यूँ मज़बूत कलेजे की है। घर में अकेली रहती है। किसी से नहीं डरती। गाँव में सबका काम करती है।

औरतों के नाखून काटती है। पाँव में महावर रचाती है। पदी काफ़ी तेज़ दिमाग़ की है। तिस पर गाँव की औरतों के बीच उठने-बैठने के कारण बहुत होशियार भी हो गई है। बहला-फुसलाकर सभी औरतों के दिल जीतने में माहिर है। उसे सभी पसंद करते हैं। भले जो हो, आज तक यह किसी ने नहीं कहा कि उसकी चाल-ढाल बुरी है।

पिछले कुछ दिनों से रोज़ सुबह-शाम मठ में आती-जाती दिखाई पड़ रही है। माधो महांति घर में न होते तो पदी उनके घर घुस जाती। महांति जी के घर में जैसे कोई उनके इंतज़ार में बैठा हो। दरवाज़े पर हाथ लगाते ही दरवाज़ा खुल जाता।

पदी ने मालती को गले लगाकर कहा, ''मेरी बिटिया मेरी लाडली-आँखों की पुतली-मेरी इकलौती बेटी के ससुराल जाते ही मैं अंधी हो गई थी। तुझे बाहर पनघट में देखकर आँखें पवित्र हो जाती थीं। सुना कि तेरी शादी होने वाली है। इसलिए तुम्हें एक बार आँखों में भर लेने के लिए आ गई। मालती के हाथ पर जगन्नाथ जी का मुट्ठी भर अन्न महाप्रसाद रखते हुए बोली, ''आज से तू मेरी बेटी, मैं तुम्हारी माँ।''

मालती ने प्यार भरी, स्नेहभरी दो मीठी बातें कभी न सुनी थीं। ऐसी प्यार से पगी बातें सुनकर वह अपने आप को सँभाल न सकी। पदी से लिपट कर दहाड़ मारते हुए रोने लगी। घड़ी भर सिसकियाँ भरती रही। फिर बोली, "माँ, मुझे कुछ न चाहिए, तू बीच-बीच में मेरे पास आ जाया कर। दो बातें कर चली जाना। बाबूजी कभी भी प्यार से दो बोल नहीं बोलते। थोड़ी-सी बात पर नाहक गुस्से में आकर, ''चल हट कलमुँही, थाली पर थाली ठूँस जाती है और बैठी रहती है।'' गालियाँ बकते हैं। कल भी ख़ूब डाँटे-फटकारे हैं। तंबाकू ख़रीदने के लिए धान निकाल कर न दिया। खलिहान में पड़े हुए थोथे पछोड़कर तंबाकू लाने के लिए बोल गए थे। तीन बार पछोड़ चुकी हूँ। कल भी किया। मुट्ठीभर धन न निकला। ख़ूब गालियाँ सुनाई।'' यह सब कहकर मालती सिसकते हुए बहुत रोई।

पदी ने आँसू पोंछते हुए कहा, ''ना बिटिया, अब मत रो। गोपाल जी महाप्रभु तुझे रानी बनाएँगे। मैं रोज़ शाम तेरे लिए प्रभु से प्रार्थना कर रही हूँ। तू देखती होगी, मैं आजकल मठ में इतनी बार क्यों आ-जा रही हूँ? सिर्फ़ तेरे लिए।

अब मालती के ब्याह के लिए महांति जी बेचैन हैं। इतनी बड़ी हो गई है। घर में बिठाए रखे हैं। सभी दुत्कार रहे हैं। जगह-जगह से रिश्ते की बात चल रही है। लेकिन क़ीमत तय नहीं हो पा रही है। महांति जी ने सोचा कि

पंद्रह साल की है। कम-से-कम पाँच-छह सौ रुपये खा चुकी होगी। तीन सौ में दे दूँ तो लाभ तो दूर दो-तीन सौ का नुक़सान होगा। तय किया कि सात सौ रुपये से कम कन्यासोना में उसे छोड़ेंगे नहीं। भले ही बेटी अधेड़ होकर घर में पड़ी रहे। घर के काम-काज के लिए कोई आती तो वह भी खाती। नहीं आई तो यह खा रही है। लोग निंदा कर रहे हैं, करें। लोगों की बातों का क्या? उनके लिए क्या इतने रुपये का घाटा सहूँ?"

महांति जी को अब दिन-रात चिंता लगी रहती है कि कब उनके घर सात सौ रुपये आएँगे। एक दिन उनके मन में विचार आया कि अगर मालती का चेहरा थोड़ा ज़्यादा सुंदर दिखे तो कन्यासोना बढ़ सकता है। उन्होंने आवाज़ दी, "अरी मालती! सुन-सुन। ये सेर भर धान लेते जा। हल्दी और तेल ख़रीद लाना गोपी साहू की दुकान से। हल्दी पीसकर रखना, उसमें थोड़ा-सा तेल मिला देना, बाहर निकलते वक़्त उसमें से थोड़ी-सी हल्दी चेहरे पर लगाकर निकलना। कोई रिश्ता लेकर आए तो चेहरे पर ज़्यादा हल्दी लगा लिया करना। समझी, ख़बरदार, सोच-समझकर ख़रचना। इतने हल्दी-तेल से पूरा महीना निकल जाना चाहिए।"

मालती सिर झुकाए बाबूजी की बातें सुनती रहीं। न जाने क्या हुआ कि घर के अँधेरे कोने में बैठे 'माँ-माँ' कहते देर तक रोती रही। मालती अक्सर ऐसे रोती और फिर खुद चुप हो जाती।

सुबह की धूप चारों ओर छितरी हुई है। महांति जी सामनेवाले बरामदे में बैठे बीड़ी बना रहे हैं। खेत के काम की निगरानी के लिए निकलेंगे। थोड़ी तिरछी नज़र से देखा कि दो बूढ़े बटोही अहाते में घुस रहे हैं। बटोही साफ़-सुथरे कपड़े में थे। महांति जी को वे भले आदमी लगे। महांति जी ने सोचा कि कहीं ये तंबाकू न माँग बैठें। पास में थोड़ा-सा तंबाकू पड़ा हुआ था। उन्होंने फ़ौरन उसे टेंट में खोंस लिया।

पहला बटोही–"क्यों जी, क्या यह माधो महांति जी का घर है?

महांति जी–"क्यों, क्या कहना है, कहें।"

बटोही–"हम लोग ब्याह का रिश्ता लेकर आए हैं। क्या आप माधो महांति जी हैं?"

महांति–"पधारिए, विराजिए।" घर के अंदर से दो चटाइयाँ लाकर बिछा दिए।

दोनों बटोहियों के बैठते ही महांति जी ने तत्काल बातचीत शुरू कर दी। समझे, जगह-जगह से तरह-तरह के लोग आए गए। बात जमी नहीं। समझे

क्यों जी समझे? नहीं, नहीं पहले कन्या को देख लीजिए। फिर लेन-देन की बातें होंगी। अरी मालती! ये भले मानस आए हुए हैं। आँगन में तो ज़रा खड़ी हो जा। अरी, मैंने जो कहा था क्यों समझी कि नहीं?''

भले आदमी–''नहीं, नहीं, महांति जी। देखने की ज़रूरत नहीं। तुम्हारी कन्या के रूप और गुण के बारे में हम जानते हैं। तभी तो हम इधर-उधर बिना भटके सीधे तुम्हारे दरवाज़े आ पहुँचे।''

महांति–''फिर ज़्यादा बक-झक करने से क्या होगा? हमारी तो एक बात बिलकुल साफ़ है। एक ही बात–याद रखें कि कन्यासोना में ठीक सात सौ रुपये देने पड़ेंगे। एक पैसा, एक अधेला या एक छटांक भी कम नहीं।''

भले आदमी–''इसमें अन्याय क्या है? कन्या के रूप-गुण के हिसाब से क़ीमत सही है। हमारे ज़मींदार ने भी कहा है आप सोच-समझकर जो कहेंगे, उन्हें कोई आपत्ति न होगी।''

माधो महांति–''एँ-एँ, वर ज़मींदार है? कहाँ है उसकी ज़मींदारी?''

भले आदमी, ''वर का नाम श्री श्री विनोद बिहारी भंडारघर राय। उनका घर है मिथ्यापुर, ज़मींदारी तालुक़ा आकाशपुर।''

माधो महांति थोड़ी देर तक चुपचाप बैठे सोचते रहे। हाय, हाय! यह वर काफ़ी बड़ा आदमी है। हज़ार रुपये कहता तो भी दे देता। एक हज़ार की बात क्यों नहीं कही? फिर उनके सामने कहा, ''हमारी बिरादरी का रिवाज़ तो आप जानते होंगे, ब्याह में पूरे तीन सौ रुपये लगेंगे। आप तो समझदार हैं। जानते ही होंगे। वर को ही यह ख़र्च उठाना पड़ता है।''

''बिलकुल, अवश्य। यह भी क्या कहने की बात है? वह तो वर की ओर से मिलेगा।''

माधो महांति–''बात पक्की कर लेनी चाहिए। यह देखिए, कन्यासोना और ब्याह का ख़र्च मिलाकर एक हज़ार। वर पहुँचते ही पहले रुपये फिर उसकी अगवानी होगी। इस बात को ठीक से याद रखिएगा।''

भले आदमी–''यह तो व्यावहारिक बात है। सांसारिक नियम है। आपको बताने की ज़रूरत नहीं है। दस जगह ऐसा ही होता है, आज कोई नई बात थोड़े ही होने जा रही है।''

माधो महांति–''सही बात है, आप समझदार और व्यावहारिक हैं, आपसे बढ़कर व्यावहारिक कोई दूसरा है क्या? और एक बात है ब्याह का आयोजन करना होगा, बीस रुपये फ़ौरन चाहिए। एँ-एँ आपसे क्या कहूँ एँ-एँ।''

महांति जी के मुँह की बात मुँह में ही है। भले लोगों ने टेंट से निकालकर

बिना गिने, बिना देखे मुट्ठीभर रुपये महांति के सामने खनखनाते हुए रख दिए। एँ-एँ कहते हुए महांति जी दोनों हाथों से फ़ौरन रुपये समेटने लगे। धोती में एक-दो करके गिनकर रखते गए, पच्चीस रुपये हैं। मन में खुशी समा न रही है। सोचा कि इतने दिनों बाद तकदीर खुली। इधर-उधर की दो-चार बातों के बाद एक साथ ब्याह का दिन तय हो गया। अगले मकर महीने का सत्रहवाँ दिन, शुक्ल सप्तमी, शुक्रवार।

भले आदमी ने देखा कि घर के अंदर दरवाज़े की फाँक से दो पैर स्थिर नज़र आ रहे हैं। दोनों पैरों के आगे की गौर रंग दस उँगलियाँ चंपा कली की तरह दिखाई पड़ रही हैं।

भले आदमी ने ज़रा ऊँची आवाज़ में कहा, "समझे महांति जी, हम तो कन्या के रूप-गुण के बारे में सब कुछ जान गए। गाँव में जाकर बताएँगे। आप ने तो घर-बार के बारे में कुछ नहीं पूछा। हमें बता देना चाहिए। घर की पहली दो स्त्रियाँ गुज़र चुकी हैं। यह उनका तीसरा ब्याह है। वह इस माघ के महीने में पैंसठ साल के होंगे।"

भले लोगों को दरवाज़े के पीछे से एक लंबी-गहरी साँस की आवाज़ सुनाई पड़ी। दोनों पैर ओझल हो गए।

माधो महांति ने कहा, "यह बात कौन पूछता है जी? मर्द की उम्र का कभी हिसाब होता है क्या? अस्सी साल का मर्द भी ब्याह कर सकता है। असली बात बताइए आपकी बातें सुनकर मैं निश्चिंत हो जाऊँ?"

मध्यस्थ, "महांति जी, व्यावहारिक बुद्धिवाले होकर आपने ऐसी अजीब बात कैसे की? हमारे ज़मींदार के घर में क्या जगह नहीं थी जो तुम्हारे सामने इतने सारे रुपये उड़ेल दिए?"

महांति जी थोड़ा सकपकाते हुए बोले, "नहीं, नहीं, मैं यह कह रहा था कि ब्याह के दिन थोड़ा ज़ल्दी वर को साथ लेकर पहुँच जाइएगा ताकि शुभ मुहूर्त में विवाह की रस्म पूरी की जा सके।"

दोनों सज्जन बड़ी भक्ति के साथ प्रणाम करके चले गए।

आज मालती से लाड़-प्यार का क्या कहना? बिना किसी काम के भी, "अरी लाली सुनना ज़रा, अरी लाली आना ज़रा"–कहकर महांति जी दसों बार बेटी को लाड़ से बुला रहे हैं। उन्हें सोलह आना भरोसा है कि हज़ार रुपये मिलेंगे। महांति जी जितना प्यार से बुला रहे हैं, मालती के मन में उतनी हूक उठ रही है। महांति जी काफ़ी खुश होकर एक छोटा-सा बोरा, सुई और पटसन का धागा लिए खेत की ओर निकल पड़े। मेंड़ पर बैठकर मज़दूरों के काम-काज

पर निगरानी करेंगे और रुपये रखने की थैली भी सी लेंगे।

आज घर के काम-काज में मालती का मन नहीं लग रहा है। बाहर का दरवाज़ा बंद करने के बाद चुपके से रो रही है। दरवाज़े को बाहर से खटखटाने की आवाज़ आई। आवाज़ भाँपकर दरवाज़ा खोला। पदी थी। उसके घर में कदम रखते ही मालती उसके दोनों पैर पकड़कर रोने लगी। रो-रोकर बेहाल हो चुकी है। पदी उसे बार-बार चुप करा रही है। लेकिन सुनता कौन है?

हमदर्द लोगों के सामने रोकर मन की बात कह देने से दर्द थोड़ा हल्का हो जाता है। मालती थोड़ा सँभलती है तो पदी ने कहा, "अरी पगली! बात समझे बिना क्यों कलप रही है? आज भले आदमी आए और जो भी बातचीत हुई, मैं वह सब कुछ जानती हूँ। उन बातों को पैरों से मसल दे। सब झूठ है, बिलकुल झूठ। मैं जो कह रही हूँ उसे सुन ले। सात दिनों से मैंने तेरे लिए ठाकुर के यहाँ व्रत रखा था। महंत पूजा कर रहे थे। कल आधी रात को महाप्रभु से वर मिला। महाप्रभु ने सपने में महंत से कहा कि मठ के भंडारी विनोद से तेरा विवाह होगा। पृथ्वी उलट-पलट जाए, लेकिन ठाकुर का हुक्म ग़लत नहीं हो सकता। तू चिंता न कर।"

'एँ-एँ' करते हुए मालती जंगली बिल्ली की तरह पदी के चेहरे को ताक रही है। उसके मुँह से बात निकल नहीं रही है। अंत में धीरज के साथ बोली, "माँ, जान लो, वह वर आया तो मैं खुदकुशी करूँगी।"

"माँ, एक बात और है, मेरा जी जाने क्यों घबरा रहा है। एक बार माधवी दीदी को देखती।"

पदी, "तेरे बाबू जी से कह, वे बुला लाएँगे।"

मालती, "बुला जाएँगे, हाँ! व्रत-उपवास करने के लिए उसने दो पैसे मँगवाए थे। जो माँगने आया था, उसे बापू ने दुत्कार कर भगा दिया। दूसरी बार बापू बीमार पड़ा था। दीदी ने कहलवाया था कि वह बाबू जी को देखना चाहती है। बाबूजी ने कहा, "मेरा तो बुखार उतरने लगा है, वह क्या देखेगी? अरे वाह, आएगी तो आठ-दस दिन तक घर में पड़ी रहेगी। बैठे-बैठे बेकार में ठूँसती रहेगी। माँ, मेरी दीदी बड़ी तक़लीफ़ में है। बाल-बच्चोंवाला घर। कई बच्चे हैं। सभी बच्चों के गू-मूत के कपड़े-लत्ते धोती है। सारे जूठे बरतन माँजती है। छह या नौ दिनों तक बीमारी में भी मुँह में एक बूँद पानी देने वाला कोई नहीं है। अहा, वह कितना सूख चुकी है। अब बचेगी नहीं। मैं उसे देख न पाऊँगी।

दीदी के लिए मालती ख़ूब रोई। पदी ने उसे ढाँढस बँधाते हुए कहा,

"अच्छा, अच्छा, माधवी से तेरी भेंट करा दूँगी।"

महांति जी के लौटने का वक़्त जानकर पदी फ़ौरन चली गई।

दिन के दूसरे प्रहर में खाने-पीने का समय ढल चुका है। पदी, महांति के घर के सामने के दरवाज़े ज़ोर-ज़ोर से खटखटाते हुए बुला रही है, "हे मालिक, मालिक जी! घर में हैं? हे माधवी के बापू, घर हैं? दरवाज़ा खोलिए।"

रोज़ दोपहर बाद पदी आकर उँगली से दरवाज़ा धीरे से खटखटाए तो दरवाज़ा खुल जाता है। आज इतनी आवाज़ कर रही है फिर भी दरवाज़ा खुल न रहा है।

माधो महांति अभी-अभी थोड़ा-सा भात खाकर बोरा सिलने वाली रस्सी तैयार करने के लिए बैठे-बैठे पटसन सँवार रहे हैं। महांति काफ़ी बुद्धिमान व्यक्ति हैं। उनके यहाँ तमाम मज़दूर हैं, लेकिन पटसन खुद सँवारते हैं। मज़दूर के हाथ में दे दिया जाए तो हो सकता है कि थोड़ा-सा पटसन टेंट में छिपा ले। इसलिए वे किसी और को देते नहीं हैं।

पदी ने महांति के पैरों के पास फट से माथा टेककर बैठते हुए कहा, "क्यों मालिक! पूरे गाँव में ख़बर है कि छोटी बेटी मालती का ब्याह हो रहा है। मुझे तो ख़बर नहीं दी? घर की लिपाई, पुताई और चौका पूरने का काम सारे गाँव में मैं ही करती हूँ। ठीक, ठीक, कल सुबह आकर कर दूँगी।"

महांति ने उसी तरह पटसन सँवारते हुए कहा, "नहीं, नहीं, लिपाई, पुताई का काम है भी कितना? बेटी खुद ही कर लेगी। तुझे आने की ज़रूरत नहीं।"

पदी ने सुनकर भी अनसुनी कर दी। वह बोलती गई, "मालिक! सभी गाँववालों का कहना है कि आप बड़े नसीबवाले हैं। मन मुताबिक़ एक अच्छे रिश्तेदार मिले। ज़मींदारी भी है। घर में रुपये और सोना-चाँदी भरपूर हैं। बख़ारों में अनाज भरा पड़ा है। दो सौ एकड़ की खेती। अभी आपको क्या मिल रहा है? बाद में देखिएगा। दामाद तो लेन-देन में शाह है। आप बेटी से मिलने जाएँगे तो रास्ते ख़र्च के लिए क्या पाँच-दस सौ ले नहीं आएँगे?"

महांति पटसन रखकर हँसते-मुस्कराते पूछते हैं, "सच है ना पदी, सच है तो?"

पदी, "गाँववाले रोज़ उधर से होते हुए आ रहे हैं। शादी की बड़ी चर्चा चल रही है। कन्यासोना के रुपये गिनकर रखे जा चुके हैं। इतने बड़े आदमी से रिश्ता जोड़ रहे हैं। आपके नाम की चर्चा ही तो हो रही है।"

महांति, "अरी पदी! कल रात से तू लग जा। कल सुबह तू खा-पीकर आ जा और लिपाई, पुताई, चौका पूरना आदि सब कुछ निपटा ले।"

पदी, "मालिक! तुम्हारे रिश्तेदारों के यहाँ न्यौता देती आऊँ?"

महांति, "ना-ना-ना-ना उन पापियों के मुँह में आग लगे। वे आते ही कहेंगे, पहले खाना खिलाओ, मिठाई और पकवान खिलाओ। क्यों भाई, मैंने बेटी को खिला-पिलाकर बड़ा किया है। कन्यासोना में जो थोड़े से रुपये मिलेंगे, मैं लूँगा। उन्हें क्यों खिलाऊँ?"

महांति जी के घर से निकलकर पदी गाँव में सभी बलराम गोत्रियों के यहाँ पहुँची।

गाँव काफी बड़ा है। सैकड़ों घर हैं। उनमें से करीब आधे लोग बलराम गोत्री हैं। महांति की कही हुई बातें पदी ने एक-एक के सामने चुपके से रख दीं। अपनी ओर से भी कुछ मिलाकर कहा, "उसने कहा है कि बेटी की शादी के दिन जाति-बिरादरी का जो भी आदमी उसके घर के सामने से गुज़रेगा, उसकी पीठ पर दो-दो जूते पड़ेंगे। दो मज़दूर जूते लिए बैठे रहेंगे।

जाति-बिरादरीवाले सुनकर आग बबूला हो चुके हैं। बात सच है या झूठ कोई समझने वाला नहीं है। बड़ी बेटी माधवी के ब्याह में माधो महांति ने उनकी आवभगत न की थी। अपमानित किया था। उसका गुस्सा आज भी लोगों के मन में है। सभी लाल-पीला हो रहे हैं। महांति सामने आ जाए तो पाताल भेज देंगे।

पदी के चले जाने के बाद माधो महांति ने बेटी से कहा, "मालती! कल नाइन आए तो उससे घर-बार की लिपाई-पुताई बढ़िया से करवा देना। देख, यह जो दीवार झड़ रही है, उसे ठीक करवा लेना। सुन, ख़बरदार! सुबह उसे काम में न लगाना। नहाने का वक़्त होते ही नहा-धोकर कहेगी कि खाने के लिए भात दो। गाँववालों की बातों से बड़ा गुस्सा आता है। थोड़ा-सा काम कर देंगे तो कहेंगे कि सेरभर धान निकालो।"

आजकल महंत बाहर निकलते नहीं हैं। साथियों को लेकर हमेशा बाग़ में बैठे रहते हैं। जितना बड़ा आदमी हो, जितना बड़ा काम हो, अंदर जाना मना है। आजकल रात को अखाड़ा बंद रहता है। सिर्फ़ नाइन पदी रोज़ सुबह-शाम बाग़ मे आया-जाया करती है।

माधो महांति रोज़ की तरह सुबह उठकर दिशा फ़राग़त के लिए गए थे, लौटकर देखते हैं कि पदी बरामदे में बैठी हैं। "क्यों री पदी! तू इतनी सुबह आकर बैठ गई?"

"वाह मालिक, वाह मालिक!"

"जिसका ब्याह वह खेल रहा है चौसर

आस-पड़ोस के लोग खपा रहे हैं सर।

मैं मुँह अँधेरे जाग गई। घर का काम-काज जल्दबाज़ी में ख़त्म करके भागी आई हूँ। आज मालिक की कुँवारी लड़की की तेल-हल्दी की रस्म है।"

माधो महांति–"नहीं-नहीं पदी, जो कुछ भी होगा ब्याह के दिन ही।"

पदी–"नहीं मालिक, पूरे इलाके में ऐसा कभी न हुआ। सुना है कि दूल्हे के यहाँ से ब्याह ख़र्च के लिए तीन सौ रुपये मिल रहे हैं। आप इस तरह शास्त्र विरोधी काम करेंगे तो वह ख़र्च की बाबत रुपये कम दे सकता है।"

महांति–"अच्छा, तू एक सेर धान लेती जा। शंभुआ की दुकान से तेल व हल्दी ख़रीद कर ले आ। धान का भाव चढ़ा है, एक सेर धान की क़ीमत डेढ़ पैसे हैं। एक पैसा देने से ठीक होता। लेकिन क्या करूँ, मेरे पास रेजगारी नहीं है।"

पदी–"एक रुपया दीजिए, खुल्ला ले आती हूँ।

महांति–"नहीं, अरे बाप रे! रुपया तुड़वा लिया तो उसे पंख लग जाते हैं। फिर तो पकड़ में न आएगा।"

पदी–"मालिक! गाँव से पाँच सुहागिनें आएँगी। वे भी हल्दी-तेल लगाएँगी। ज़्यादा हल्दी चाहिए।"

महांति–"नहीं, नहीं उनका क्या काम? तू अकेले बेटी को हल्दी लगा ले। और जानती है! पाँच औरतें आएँगी तो नाश्ता के लिए भी कहेंगी।"

पदी ने सुबह-सुबह मटकीभर पिसी हुई हल्दी, मटकी भर तेल, खँचिया बर खील खंचिया भर भुना हुआ चावल लाकर मालती के पास रख दिए थे। सारा सामान निकाल कर महांति के सामने रख दिया।

महांति सामान देखकर भौंचक। जुबान नहीं खुल रही। थोड़ी देर बाद बोले "एँ-एँ, पदी-पदी। यह सब क्या? कहाँ से आया?"

पदी मुँह पर आँचल डाले थोड़ी देर सिसकियाँ भरती है। चेहरा पोंछकर बोली, "समझे मालिक, मेरे पास थोड़ा-सा धन है। मेरा है भी कौन? किसे दूँ? आपने उस दिन कहा था न मालती मेरी बेटी है। ठान लिया है कि इस बेटी के ब्याह में ख़ूब ख़र्च करूँ।"

महांति, "हाँ-हाँ, अच्छी बात है। बढ़िया सोचा है। पूरे इलाके में तेरी वाह-वाही होगी। बड़ा पुण्य होगा। बेटी मालती! ले ले तेरी माँ ने दिया है। सामान रख ले। सँभालकर रखना, समझी? ख़बरदार, बरबाद न करना।"

पदी, "बेटी के लिए माँझे का जोड़ा ले आए हैं न? अभी डुबकी लगाकर फ़ौरन पहनेगी।"

महांति ने कहा, "हाँ-हाँ पदी, वही कह रहा हूँ। ब्याह के कपड़े कितने महँगे हैं? नौ हाथ की एक साड़ी की कीमत दुकानदार साढ़े आठ आने बता रहा है। मैं पाँच आने से शुरू करके आठ आने तक पहुँच चुका हूँ। फिर भी कह रहा है कि ना, वही साढ़े आठ आने। वह भी धार उधारी नहीं, सीधा नकद। जाता हूँ, जैसे भी हो और अधूला बढ़ाकर लाना ही होगा। नहीं तो काम नहीं चलेगा।"

पदी, "नहीं, नहीं मालिक! पंद्रह साल की बेटी के लिए नौ हाथ की साड़ी छोटी पड़ जाएगी। मैं तो अपनी बेटी को मंगललता की साड़ी पहनाना चाहूँगी। वही साड़ी माँझे का जोड़ा हो।"

महांति जी ने कहा, "हाँ, हाँ पदी, सही कहा तुमने, बिलकुल सही। दस आदमी तेरा गुणगान करेंगे, पुण्य कमाओगी। जा, जा, एक अच्छी-सी बारह हाथ की साड़ी ख़रीदकर ले आ। एक और बात है पदी, विवाह मंडप पर कन्यादान करते समय मुझे नया कपड़ा पहनना चाहिए न? तू तो जा ही रही है। फिर मैं क्यों जाऊँ? मेरे लिए दो कपड़े ढंग के देखकर उधार में ले आना। हाँ, उधार अपने नाम लिखाना। ब्याह के बाद मैं क़ीमत चुका दूँगा। पैसे-अधूले का हिसाब कर दूँगा।"

पदी कपड़ा ख़रीदने निकल पड़ी। महांति जी ने हाँक लगाई, "अरी मालती! जा, जा, दरवाज़ा बंद करके आ। ख़बरदार! हर समय दरवाज़ा बंद रखना। और सुन, पदी जो तेल, नाश्ता लाई है, उसमें सो थोड़ा-थोड़ा निकाल कर रख ले। बाक़ी सब ला, मैं भंडार घर में रख देता हूँ। एक और बात सुन, सुहागिनें हल्दी लगाने की रस्म अदा करने आएँगी। सभी से नाश्ता के लिए कहना, लेकिन ज़ल्दी न देना। रसोई बनाने में देर होते देख सभी लौट जाएँगी। सिर्फ़ पदी को थोड़ा-सा खिला देना।"

मधुपुर में ख़बर फैल गई कि आज माधो महांति की बेटी का ब्याह है। मगर महांति जी के द्वार पर नज़र डालें तो शादी-ब्याह की कोई सजावट नहीं है। रोज़ की तरह आज भी दरवाज़ा बंद है। बच्चों से लेकर बूढ़ों तक कोई कभी उनके द्वार पर नहीं जाता। कभी ग़लती से कोई पहुँच जाए तो महांति जी उसके पीछे लगे रहेंगे, कुछ उठाकर ले न जाए। दरवाज़ा तो हमेशा बंद रहता है, कोई भाट-भिखारी जाए भी क्यों?

सांझ ढल चुकी है। महांति जी ने सुबह की सिली हुई थैली सहेज कर रख लिया है। कहीं हड़बड़ी में न मिले तो मुश्किल। मालती बेटी मोटी बाती बनाकर कहीं ज़्यादा तेल उड़ेल न दे, इसलिए उन्होंने खुद पतली बाती बनाकर

ज़रा-सा तेल डालकर विवाह मंडप पर एक दीप रख दिया है। महांति जी के घर में दीप नहीं जलता, दिन रहते खाना-पीना हो जाता है।

पदी मालती को एक कमरे में दुलहिन के रूप में सजा रही है। दोनों फुसफुसाकर कुछ बातें करती हैं। मालती रह-रहकर अकुलाते हुए रोनी सूरत में पूछती हैं, "माँ क्या होगा?" पदी ने कहा, "चुपचाप बैठी रह बेटी। ख़बरदार, जैसा कहा है उसमें तनिक भी इधर-उधर न करना। सब बिगड़ जाएगा। हर वक़्त प्रभु का नाम लेती रहना।" मालती ने प्रभु की ओर देखते हुए हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

रात का पहला पहर भी बीत चुका है। लेकिन कहाँ है दूल्हा? महांति जी बार-बार घर के बाहर झाँक रहे हैं। बीच-बीच में बिलकुल बाहर आकर सड़क की ओर देख लेते हैं।

मिथ्यापुर गाँव से दो आदमी हाँफते हुए पहुँचे। सिर से पैर तक पसीने से लथपथ। साँसें फूल रही हैं। महांति जी से बोले, "ब्याह के ख़र्च के तीन सौ रुपये में से पचास कम पड़ रहे हैं। आज रात को रुपये जुगाड़ करके रात रहते ही निकल पड़ेंगे। सुबह होते ही दूल्हे को लेकर पहुँच जाएँगे।"

महांति जी ने पदी को बुलाकर कहा, "अरी! दूल्हा कल सुबह आएगा। बेकार में इंतज़ार में बैठने से क्या होगा? मैं सोने जा रहा हूँ। तू बेटी के पास सो जा। सावधान रहना। होशियारी से सोना। तमाम चीज़ें इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं।"

विवाह-मंडप का दीप बुझाकर महांति जी सोने चले गए।

आधी रात के बाद भी महंत महाराज बाग़ में बैठे हुए हैं। अपने लोगों से घिरे बैठे हैं। आज की रात गाँजे की थैली खुली हुई है। चिलम का ठंडा होना सवाल ही नहीं।

महंत जी ने पुकारा, "अरे भीम, ए नकुल! सब कुछ ठीक-ठाक करके आए हो न? भीम और नकुल दोनों ने कहा, "हाँ हुज़ूर, सब ठीक है।"

"पदी को भलीभाँति समझा दिया है न?"

"जी प्रभु! एक-एक करके सारी बातें बता दी हैं।"

"वह छोरी क्या कर रही है?"

"बहुत बेचैन है बीच-बीच में रोते हुए कह रही है माँ क्या होगा? बाबूजी क्या कहेगा?"

"पदी उसे समझा रही है न?"

"जी! जी!"

"क्यों रे, अंदर कैसे घुसे?"

"जी, पिछवाड़े के दरवाज़े को खटखटाया तो पदी ने खोल दिया।"

इसी वक़्त महंत जी का आदमी शंकर भागते हुए आया और बोला, "बाजा-गाजा, पालकी, मशाल आदि लेकर बाराती खेत में बैठे हुए हैं। हुज़ूर का हुक्म मिलते ही वे हाज़िर हो जाएँगे।"

"अच्छा, अब जाकर विनोद को दूल्हे के रूप में सजाओ। शादी के कपड़े-लत्ते पहना दो।" रात बीतने को है। मुँह अँधेरा है। माधो महांति के द्वार पर बीस-तीस ढोल, नगाड़े आदि एक साथ बज उठे। घर के सामने पालकी तैयार है। दूल्हा बरामदे में कालीन पर चुपचाप बैठा है। झट से महांति जी की नींद खुल गई। रुपयेवाली थैली को बग़ल में दबाए बहुत खुश होकर दौड़े। पहले रुपये गिनकर रखेंगे, फिर अगवानी करेंगे। हड़बड़ी में भागते हुए सिर चौखट से टकराया। एकाएक गिर पड़े चित होकर। हाथ से छूकर देखा कि खून की धार बह रही है। इस वक़्त यह सब देखने से थोड़े ही होगा। पहले रुपये गिन लेते हैं, फिर खून पोछेंगे। सिर पर गमछा अच्छी तरह लपेट लिया। बाहर आकर बरातियों को बुला रहे हैं, "आइए-पधारिए, आइए-पधारिए।" दूल्हे के मामा जी ने आगे बढ़ते हुए कहा, "हे समधी जी! अब बैठने से क्या होगा? ज़ल्दी-ज़ल्दी दूल्हा दुल्हन को विदा कीजिए, धूप चढ़ जाएगी।" माधो महांति ने कहा, "एँ-एँ, दूल्हा तो अभी पहुँचा, ब्याह हुआ ही नहीं विदाई कैसे होगी?"

दूल्हे का मामा–"पाणि-ग्रहण हुआ, ब्याह ख़त्म हुआ, फिर रह क्या गया?"

महांति–"कन्यासोना के रुपये?"

दूल्हा का मामा–"रुपये गिनकर रख तो लिए।"

महांति का फटा हुए सिर जल रहा था। उस पर मानो किसी ने खंचिया भर अंगारे उड़ेल दिया हो। अयँ, यह कैसी डकैती? चोर, बदतमीज़ कहीं के। हुज्जत-झगड़े शुरू हो गए। इधर महांति जी अकेले, उधर चालीस-पचास आदमी। महांति गुस्से के मारे बेसुध हैं। तू-तू, मैं-मैं से हाथ उठने की नौबत आ रही है। लेकिन दूल्हे वाले गुस्से से दूर हैं। ध्यान से देखें तो सभी चेहरों पर मुस्कान है। एक-दूसरे को चिकोटी काट रहे हैं। इतने में आठ-दस ढोलकिये महांति जी को घेर कर अंधाधुंध ढोल पीटने लगे। मालिक महांति उल्लू है, बेह्या है। बेटी का ब्याह हो चुका है। हमें दारू पीने के लिए पैसे दो। तुरही बजाने वाला बीच-बीच में महांति जी के कान के पास पें-पें करके तुरही बजा दे रहा है। ग्रामदेवी की पूजा के दौरान बाजावालों के बीच भूत के आवेश से नाचने वाले की तरह महांति जी नाचते-फुदकते हुए परेशान हो गए हैं। महांति जी चीखते

हुए कह रहे हैं लेकिन बाजे के शोरगुल में उसे सुन कौन रहा है? महांति जी को परेशान करने का यह एक तरीक़ा है। इस समय किसी नटखट आदमी ने महांति जी के पीछे की तरफ़ एक अनार पटाखा सुलगा दिया। उनकी पीठ पर चिनगारियाँ बिखर गईं छोटे-बड़े ढेर सारे फफोले उभर आए। उन्हें जलन होने लगी।

गाँव के बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सभी जुट गए। भीड़ इतनी कि महांति जी के द्वार पर मुट्ठीभर उरद छितरा दे तो उरद सिर से नीचे न गिरे।

महांति जी ने देखा कि उन्हें घेर कर उनके परिचित लोग ठहाके लगा रहे हैं। इतने में ढेर सारे शरारती बच्चे गीत गाते हुए, तालियाँ ठोंकते नाचने लगे–

"कन्यासोना का बड़ा मज़ा
महांति खाएँगे नवाब खाजा।"

महांति ने देखा कि अब सँभालना मुश्किल है। सभी एक तरफ है, किससे क्या कहेंगे। कहने से सुनता भी कौन है। किसी तरह हुड़दंग को पार करते हुए मठ में घुस गए। महंत अभी-अभी बिस्तर से उठकर बैठे हैं। महांति को आते देख महंत जी ने चीख़ते हुए कहा, "सुबह-सुबह द्वार पर कौन हल्ला मचा रहा है, देखो तो सही?" महांति चीख़ते-पुकारते हुए महंत जी के पैरों पर धड़ाम से जा गिरे। "उठो-उठो महांति क्या है, बात क्या है बताओ।" ताड़ी भरी गगरी के मुँह से झाग उभरने की तरह महांति के मुँह से झाग निकल रहा है। अब न बात कर पा रहे हैं, न रो पा रहे हैं। हाथ से इशारा किया–पानी। बिना मुँह धोए, बिना दातौन किए गटागट लोटा भर पानी पी चुकने के बाद तनिक सँभल कर बैठे। महंत जी बड़े दयालु हैं। ख़ूब तसल्ली देते हुए महांति की पीठ पर हाथ फेरने लगे। इतने में वर के मामा परी परिड़ा जी चार लोगों के साथ आकर महंत जी के पैरों पर गिर पड़े।

महंत जी ने हुक्म दिया, "अरे बात क्या है, उठो-उठो बोलो क्या बात है?"

परी परिड़ा ने हाथ जोड़कर कहा, "जी, हम परदेशी हैं, हम पर अन्याय हुआ है। श्रीमहाप्रभु, आप इस गाँव के हाकिम हैं। हमारे मामले की सुनवाई करके न्याय दीजिए। ये जो बैठे हैं माधो महांति जी, ये हमारे समधी हैं। माधो महांति ने गुस्से में आकर कहा, "अबे, तेरा कैसा समधी डकैत, धोखेबाज़।" महंत जी ने कहा, "रुकिए, रुकिए महांति जी। उसे जो कहना है कहने दीजिए, फिर तुम्हारी बात सुनेंगे।"

परि परिड़ा, "जी, इन्हीं महांति जी ने कन्यासोना में मुझ से सात सौ

रुपये लेकर अपनी बेटी की शादी मेरे भानजे से करवाई। पाणि-ग्रहण भी हो चुका है। ब्याह के बाद कह रहे हैं कि ब्याह के खर्च के और तीन सौ रुपये दो। मैं और क्यों दूँ? अब धोखा देकर बेटी को छोड़ नहीं रहे हैं।

महंत–"अच्छा, ठाकुर जी के मंदिर में सच बोलो, एक-दो करके रुपये गिनकर दिए हैं?"

परि परिड़ा–"जी सच कह रहा हूँ, बीस-बीस रुपये गिनकर दिए हैं।"

महंत–"इस बात का विश्वास नहीं हो रहा है। महांति कोई बालक नहीं हैं। पुराने बुज़ुर्ग आदमी हैं। रुपये लेकर मानेंगे नहीं, यह कोई बात है?"

माधो महांति ने महंत के पैरों पड़कर कहा, "हुज़ूर, आप धर्म के अवतार हैं! न्याय कीजिए, न्याय कीजिए। इन डकैतों को यहाँ से भगा दीजिए।"

महंत–"देखिए, ये लोग परदेशी हैं। अपने इलाक़े में जाकर हल्ला करेंगे कि इस गाँव में न्याय-व्याय नहीं है। दोनों तरफ़ से प्रमाण लेकर विचार करना होगा। क्यों परिड़ा जी! तुम ने माधो महांति को जो सात सौ रुपये दिए, उसका कोई गवाह है?"

परि परिड़ा ने हाथ जोड़ते हुए खड़े होकर कहा, "जी महाप्रभु, सौ गवाह हैं। भीम, नकुल, मकरा, शंकर, चकरा, मधु महांति, साधु धल, धर्मू पात्र यहाँ आओ।" महांति जी ने बारी-बारी से सभी गवाहों का बयान सुना। ख़ूब जिरह की। साफ़ साबित हुआ कि सात सौ रुपयों का देना, बग़ल में दबाए हुए एक थैली में रुपये भरकर महांति जी का घर में रख आना, सब ठीक है। सचमुच, माधो महांति की बग़ल में एक थैली दबी हुई नज़र आई। माधो महांति ने एक ही बात कहकर खंडन कर दिया कि ये सब डकैत हैं।

महंत–"अच्छा, इस गाँव का कोई गवाह है?"

किसी के बुलाने से पहले ही महांति के जाति-बिरादरी के दस आदमी गवाह के नाते खड़े हो गए। महांति जी ने उनके चेहरों को एक बार देखकर कहा, "हुज़ूर, ये सब मेरे विरोधी हैं, इनका बयान नामंजूर हो।" महंत जी ने कहा, "गवाहों की बातें छोड़िए, हम खुद महांति जी के घर में जाकर देखेंगे। पिछली रात शादी हुई होगी, तो उसके कुछ तो निशान होंगे।" दूल्हेवाले महंत जी की बात को मानने के लिए बिलकुल तैयार नहीं, "हुज़ूर! आधी रात तक ब्याह ख़त्म हो चुका था, अब क्या निशान बचा होगा? आप वहाँ जाँच-पड़ताल करने मत जाइए।"

माधो महांति ख़ूब खुश होकर, ख़ूब उत्साह के साथ महंत जी के पैर पकड़ कर बुला रहे हैं, "हुज़ूर चलिए, मेरा घर देख आइए।"

दूल्हेवाले मुँह लटकाकर कहने लगे, "नहीं हुजूर, आप वहाँ मत जाइए।"

महंत जी ने कहा, "नहीं-नहीं, वैसा नहीं होगा। महांति जी की बात माननी होगी।"

महंत जी दोनों तरफ़ के लोगों को लेकर जगह की जाँच-पड़ताल करने निकले।

पहले बरामदे में बैठे हुए दूल्हे को देखा गया। हाथ में ब्याह का सूत्र, उसमें दूब और बेर की पत्तियाँ बँधी हुई हैं। सिर पर मुकुट और हाथ में सरौता है। फिर विवाह-मंडप पर एक नारियल रखा हुआ है।

परि परिड़ा ने हाथ जोड़कर महंत जी से कहा, "हुज़ूर, देख लीजिए हुज़ूर, दूल्हा विवाहित है या नहीं?"

महंत जी—"अच्छा-अच्छा, अंदर चलते हैं। देखते हैं कि और कोई निशान है या नहीं।"

परि परिड़ा ने हाथ जोड़कर महंत जी से कहा, "देखिए हुज़ूर विवाह-मंडप को। यहाँ देख लीजिए कन्या ने आठ कलसों को पार किया है। यहाँ देखिए पुष्पांजलि की खील पड़ी हुई है। कलस पर पुष्पांजलि पड़ी हुई है। इधर देखिए हुज़ूर, यहाँ ब्राह्मणों का भोजन हुआ था। दही, गुड़ और जूठे चिवड़े पड़े हुए हैं। इधर देखिए हुज़ूर, यहाँ हम जाति-बिरादरीवालों ने भोजन किया था। जूठन साफ़ नहीं हुई है, हर तरफ जूठी पत्तलें बिखरी हुई हैं।"

माधो महांति ने कूँथते हुए कहा, "नहीं-नहीं, मेरे घर में कल चूल्हा जला ही नहीं है।"

महंत जी रसोई की तरफ़ बढ़े। हाथ की छड़ी से दरवाज़े को धकेलकर देखा कि चूल्हे में अंगारे धधक रहे हैं। दो-चार बड़ी-बड़ी भात की हाँडी, दाल की हाँड़ी, सब्ज़ी की हाँडी पड़ी हुई है। माधो महांति के होश ग़ायब हो गए। पीठ जल रही है, सिर जल रहा है, मन जल रहा है। सोचा कि यह सब क्या है! क्या रात को भूत आकर यह सब रख गया? जहाँ बैठे थे, वहीं लुढ़क पड़े। कुछ सुनाई नहीं पड़ रहा है। कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा है। जड़ैया बुखार दबोचने लगा है। कूँथ रहे हैं, काँप रहे हैं।

महंत ने पूछा, "महांति जी! अब तुम्हारा क्या जवाब है?"

माधो महांति ने कहा, "हुज़ूर, मेरी बेटी का ब्याह नहीं हुआ है।"

जाति के मुखिया बलराम नायक ने हाथ जोड़कर कहा, "हुज़ूर! आप हमारे राजा हैं, वैसे भी हाकिम हैं। हमारे सुख-दुख के बारे में सोचेंगे ही। लेकिन जाति के मामले में जाति-बिरादरीवाले ही सोचेंगे, हाकिम का कोई अख़्तियार

नहीं है। सोचकर हुक्म दीजिए। माधो महांति ने क्वारी लड़की का ब्याह न करके घर में बैठा रखा है। आज सूरज के डूबने से पहले वह यदि अपनी बेटी का ब्याह नहीं रचाता है तो उसे बिरादरी से निकाल दिया जाएगा। उस पर हुक्का-पानी, धोबी-नाई आदि की पाबंदी रहेगी। उस लड़की से कोई और ब्याह नहीं करेगा।"

महंत जी ने कहा, "यदि महांति जी को बिरादरी से निकाल भी दिया तो वे एक पूली में आग सुलगाकर घर में रख देंगे और चार मटके पानी घर में रख देंगे। किसी से माँगने क्यों जाएँगे?"

बलराम नायक ने कहा, "हुजूर, ऐसा कैसे होगा? महांति जी जिस तालाब से पानी भरेंगे, वह तालाब अशुद्ध हो जाएगा। दस रुपये का ख़र्चा करके उसकी प्रतिष्ठा करनी होगी। इस तरह पानी के जितने मटके लेंगे, उतने दस रुपयों का ख़र्चा लगेगा। और एक बात है- सड़क पर वे चलेंगे, तो सड़क अशुद्ध हो जाएगी। एक आदमी को हाँड़ी में गोबर का पानी लेकर पीछे-पीछे छिड़कते हुए चलना होगा।"

महंत जी ने कहा, "नहीं-नहीं, वे बूढ़े हो चुके हैं। ऊँच-नीच में सिर्फ़ तुम ही उनका सहारा बनोगे।"

मदन नायक-"हुज़ूर, उलझाने वाली बात क्यों। साफ़ बात है, वे मर जाएँगे, तो हम क्या छुएँगे? सफाईवाले खींचकर ले जाएँगे। इन कोठारों में जितना धान है, और जो सब चीज़ें हैं, उन्हें सफाईवाले ले जाएँगे। उन अछूत चीज़ों को कौन छुएगा?"

माधो महांति पड़े-पड़े सारी बातें सुन रहे थे। सोचा कि पूरा गाँव भड़क चुका है। महंत भी उन्हीं की तरफ़ हैं। मेरा तो यह हाल है। यदि सारी धन-दौलत बरबस ले जाएँगे, तो क्या करूँगा? कहाँ शिकायत करूँगा गवाह कौन बनेगा? बलराम नायक को पास बुलाकर उनके दोनों हाथ पकड़ लिए। कहा, "तुम हमारी जाति के शिरोमणि हो। मैं तुम्हारा हाथ पकड़ता हूँ, सभी के पैरों में पड़ता हूँ। मेरी सारी ग़लतियाँ माफ़ कर दो। मेरी बेटी का ब्याह करा दो। मेरा हाल तो देख ही रहे हो। उसका मामा कन्या-दान करेगा।"

महांति के मुँह से ज्यों ही यह बात निकली, महंत ने आँख दबा दी। पदी दुलहिन को लेकर दूल्हे के पास पहुँच गई। ब्राह्मण, नाई सब थे ही, फ़ौरन मंत्र-पाठ के साथ ब्याह शुरू हो गया। मामा सपनी पात्र ने कन्या-दान किया। घंटे भर में ब्याह समाप्त।

दूल्हा और दुलहिन विदा होंगे। बापू के पैर पकड़ कर कलपने लगी।

महांति ने गुस्से में आकर पैर झटक दिए तो दुलहिन धड़ाम से गिर पड़ी। मालती उससे घबराई नहीं। फिर से बापू के पैर पकड़कर कहा, "बापू, तू इस समय बीमार है। मैं तेरे पास रहकर सेवा करूँगी। तेरी सेहत ठीक हो जाने के बाद जाऊँगी।" माधो महांति–"चल हट! पंद्रह साल तक बैठाकर खिलाया। अब एक के बदले दो जने बैठकर खाओगे क्या?"

पदी पास खड़ी सब सुन रही थी। मालती को गले लगाते हुए ले जाकर पालकी में बैठा दिया। दूल्हा तो पहले जाकर बैठा हुआ था, उठाओ पालकी। बाजावाले और बाराती के तैयार होने से पहले 'हाँ मेरे भैया' की हाँक लगाते हुए कहार पालकी को लेकर गाँव के बाहर खेत में जा पहुँचे।

पाँच-छह दिन के बाद महंत जी ने एक दिन अपने आदमियों को बुलाकर कहा, "क्यों रे! ब्याह के बाद माधो महांति कहीं बाहर नज़र नहीं आ रहे हैं। उसे बुखार हुआ था, देखो तो क्या हुआ?" उनके दो आदमी दौड़े। सामने के दरवाज़े से और पीछे के दरवाज़े से ख़ूब आवाज़ दी। दरवाज़े को ज़ोर से खटखटाया, कोई सुन नहीं रहा है। दीवार से एक सीढ़ी लगाकर वे अंदर कूदे। सामने के दरवाज़े को खोला। भीतर का हादसा देखकर भौंचक रह गए। घर के अंदर की ओर महांति का सिर और बाहर की ओर सारा शरीर है। एक बड़े मोटे छोल की तरह चौखट पर लाश पड़ी हुई है। अधनंगा शरीर, सिर का घाव चेहरे पर आधे से ज़्यादा फैल चुका है। सैकड़ों मक्खियाँ भिनभिना रही हैं। घाव से एक साथ ढेर सारे कीड़े गिर रहे हैं। लगता है कि दूल्हे को विदा करने के बाद सारे दरवाज़े बंद करके महांति सोने के लिए कमरे में जा रहा था, लेकिन जा नहीं पाया है। चौखट पर गिर पड़ा है। खुद की सिलाई की हुई रुपये की थैली वहाँ पास ही पड़ी हुई है।

जाति-बिरादरीवाले तथा पुरोहित मठ में महंत जी के पास बैठे हैं। दाह-संस्कार पर विचार चल रहा है। लेकिन एक बात यह कि महा-पातक लगा है, छुएगा कौन? जो छुएगा, उसे प्रायश्चित करना पड़ेगा। ख़ूब बहस के बाद तय हुआ कि प्रायश्चित के ख़र्च के लिए महंत जी के आदमी महांति के कोठार से सवा मन धान निकाल कर लाएँगे। पुरोहित महाविष्णु का पादोदक मंत्रित करके देंगे। उस पवित्र जल को छिड़कने से लाश का सारा पाप धुल जाएगा। महंत जी ने पुरोहित विश्वनाथ रथ से पूछा–"महांति को कीड़े पड़ने वाला महापातक क्यों लगा?" रथ महादेव ने कहा कि पुराण शास्त्र में लिखा है–

"बूढ़े दूल्हे को जो बेटी बेचते हैं उसके सिर में कीड़े पड़ते हैं। जी, प्रमाण देखिए ठीक सिर में ही महा-पातक है। पैरों में नहीं, हाथों में नहीं, पीठ में

नहीं, ठीक सिर में ही है। शास्त्र की बात क्या अन्यथा हो सकती है?"

जाति-बिरादरी के आठ आदमी नाक पर कपड़ा लपेट कर अंदर गए। लाश में कहीं कोई और पातक शायद लगा हो, उस पाप को धोने के लिए मटका भर गोबर-पानी लाश के सिर से लेकर पैर तक छिड़क दिया।

गाँव की बीच सड़क पर 'हरि बोल! राम नाम सत्य है' की ऊँची आवाज़ सब ने सुनी। सब कुछ समाप्त! इतनी सड़ी हुई लाश को जलाता कौन है? मरघट में केवड़े की झाड़ियों के नीचे रख आए।

बेटी और दामाद ने आकर बूढ़े का क्रिया-कर्म अच्छी तरह से किया। गाँव के अपनी जाति के और दूसरी जाति के लोगों को न्योता दिया। खीर, पूड़ी, हलवा, रायता, मिठाई आदि बनवाकर दो-तीन बार खिलाया। गाँववालों ने बेटी और दामाद की ख़ूब तारीफ़ की।

मठ के खजांची विनोद का नाम अब ज़मींदार बाबू विनोद बिहारी महांति है। गोपालपुर तअल्लुका की ज़मींदारी ख़रीद ली है। दो मुंशी और आठ-दस प्यादे हैं। अहाते से घिरा चार कोठरियोंवाला एक मकान खड़ा किया जा चुका है। बाहर से देखकर कौन न कहेगा कि यह एक बहुत बड़े ज़मींदार का घर है?

बाहर के लोगों का अनुमान है कि माधो महांति के घर में दो लाख रुपये गड़े हुए थे। कहा भी गया है–

"कमाए संचौ मरे कंजूस
गुड़ की मटकी खाए कटाक्ष।"

21.
गारुड़ी मंत्र

तीस-चालीस साल पहले की बात है। कटक में कॉलेज नया खुला है। एम.ए. तक की पढ़ाई होती है। ऊपर की क्लास में पंद्रह-सोलह छात्र हैं। उनमें से आठ-दस देहात के हैं। शहर के विभिन्न इलाके में जगह-जगह किराए पर रहते हैं। तब कॉलेज में बोर्डिंग न थी। कटक ज़िले के चौधरी बाज़ार के एक सादे दो मंज़िला मकान में एक छात्र का डेरा है। नाम के अनुरूप लड़का देखने में भी मदनमोहन। उम्र सोलह-सत्रह के लगभग। मकान में रसोइया, एक नाई और मालिक- तीन जन रहते हैं। फिर भी, कोई सामान कंधे पर लादे, कोई सिर पर रखे, कोई ख़ाली हाथ, रोज़ धूल से सने पैरोंवाले दो-तीन लोग आया-जाया करते हैं। एक भी दिन ऐसा न गुज़रा जब बाहर से आने वालों का नागा हुआ हो। माल-असबाब लेकर बाहर से लोगों का आना-जाना देखकर मकान के आसपास के दुकानदार समझ चुके हैं कि ये छोटे बाबू देहात के किसी ज़मींदार के बेटे हैं। काफी दिनों से आस-पास रहने वाले का परिचय जानने के लिए लोग अनायास ही इच्छुक हो उठते हैं। उस पर यदि आदमी बड़े घर का हो, तो लोग पहले ही परिचय जानना चाहते हैं। आसपास के लोगों को पता चल चुका है कि यह लड़का बड़नई परगना के शालपाक तालुक के ज़मींदार गोपाललोचन पट्टनायक का बेटा है। यह भी जानकारी है कि वह इकलौता बेटा है। संसार में अभागे लोगों का वर्गीकरण किया जाए तो इकलौते बेटे के माँ-बाप सबसे पहले वर्ग में आएँगे। इसे इन पंक्तियों का रचनाकार तुलसी और सालग्राम की सौगंध खाकर मज़बूती के साथ पेश करने को तैयार है। बेटा खाया नहीं तो माँ-बाप भूखे हैं। बीमार है तो उनकी आँखों में नींद नहीं, पेट में भूख नहीं। दिन-रात उसी की चिंता। अपने कपड़े पर पैबंद लगेंगे लेकिन बेटे के लिए नए कपड़े ख़रीदे जाते हैं। रुपये शरीर के ख़ून की तरह होते हैं। बेटे के लिए उन्हें वजह-बेवजह पानी की तरह ख़रचने में पीछे नहीं

रहते। परलोक की सद्गति के लिए प्रभु का नाम सुनने की फुरसत नहीं है माँ-बाप के पिंड में प्राण हैं, मगर मन लगा रहता है बेटे के पास। रोज़ बेटे की सेहत और सलामती का समाचार न मिले तो मालकिन बेचैन हो उठती है। कटक शहर की दुकानों के चावल में कंकड़-पत्थर मिला हुआ होता है। मालकिन ने हवेली में दासियों को लगाकर बढ़िया उसना व अरुवा चावल कुटवाकर बहंगी में नौकरों के हाथ भिजवाया। बगीचे से पके हुए केले लाए गए। माँ का मन भला कैसे माने? पहले से मटका भर उड़द की बड़ी बना रखी थी सब कटक पहुँचाया गया आज भेजने के लिए कुछ नहीं है, तो भी एक प्यादा भागते हुए जाकर बेटे को देख आए। रोज़ ऐसा ही चल रहा है।

ज़मींदार गोपाललोचन पट्टनायक भले ही अनपढ़ हैं, लेकिन वे पढ़ाई की मर्यादा समझते हैं। इसलिए उन्होंने आँख-कान मूँदकर अंग्रेज़ी पढ़ने के लिए बेटे को शहर भेज दिया है। मदन अब कॉलेज की सबसे ऊँची कक्षा में पढ़ रहा है। पाठ्यपुस्तकों के अलावा बाहर की ढेर सारी किताबें पढ़ चुका है। युवाओं को उपन्यास पसंद है। मदन ने भी कई उपन्यास पढ़े हैं। वह गंभीर व मनमौजी है। फिर भी,

"योगी के, रोगी के, भोगी के निशान
आँखों से जान और आँखों से पहचान।"

मुँह खोलकर न कहे तो भी मनुष्य के मन की बात उसकी आँखों से समझी जा सकती है। देखा यह गया है कि मदन हाथ में उपन्यास लिये एकटक ऊपर की ओर निहारते हुए काफी देर तक कुछ सोचता रहता है। शाम को नदी किनारे ऐसी ही सोच में बैठा रहता है। मदन के सहपाठी हृदय के बंधु गोकुली बाबू मदन का ऐसा हाल देखकर पूछ चुके हैं–"इस तरह बैठे-बैठे क्या सोचते रहते हो?" मित्र से मन की बात खोलकर कह देने से मन ज़रा हल्का हो जाता है। एक दिन मदन ने अचानक कहा–"गोकुली! यह उपन्यास पूरा पढ़ लिया है। देखा, नायक और नायिका का कितना मधुर प्रेम है।" गोकुली ने कहा–"ओह, समझ गया, तुम्हें ऐसी नायिका चाहिए।" दोनों मित्र ख़ूब हँसते रहे।

मनुष्य किसी भी काम में जुटने से पहले उसका मन तीन स्थितियों से गुज़रता है। पहली अनुभूति, दूसरी सोच, तीसरी इच्छा। गीताकार ने भी ऐसी ही एक बात कही है। "ध्यायतो विषयान् पुंसः संगस्तेषुपजायते।" जवानी की उम्र में मन की तरलता अनायास प्रणय की ओर झुकने लगती है। मदन ने उपन्यासों में नायक-नायिकाओं की प्रणय लीलाएँ पढ़कर तय कर लिया है कि

ऐसी ही एक लड़की मिलेगी तो वह ब्याह करेगा। उसे तुरंत याद आया–

"कुबड़ी सी झुक-झुककर दबे पाँव चलने वाली,
हाथ भर का घूँघट काढ़े, मुखचंद्र को ढँकने वाली
चु चु करके बात करती मानो कोई गूँगी हो,
घर के किसी कोने में म्लान बदनी बैठी हो।
बिल्ली की बच्ची-सी मुँदी हुई आँखोंवाली,
सारा शरीर तेल-हल्दी का लेपन करने वाली।"

हाय-हाय! अधखिले कमल को सिवाल ढँक रहे हैं। देश की कैसी कु-प्रथा, कैसा कुसंस्कार है! छी छी छी! ऐसी किसी काठ की पुतली से कौन ब्याह करे! इससे तो बेहतर है कि मैं शादी ही न करूँ।

चार-छह महीने के बाद एक दिन शाम के झुटपुटे में सिर पर पगड़ी की तरह एक गमछा बाँधे, कमर में चादर लपेटे, घुटने तक धूल से सने, थोड़ा झुक-झुक कर चलने वाले एक वृद्ध व्यक्ति लाठी टेकते हुए मकान के दूसरे तल्ले पहुँचे। हाथ में लोटा, पीठ पर छोटी-सी गठरी डाले पीछे-पीछे एक नाई चल रहा है। उन्हें देखकर मदन बाबू ने अचकचाते हुए पूछा, "नाना जी! कैसे आना हुआ? अरे, पैर धोने के लिए नाना जी को पानी दो। ज़ल्दी जाओ, बाज़ार से नाश्ता ले आओ।"

वृद्ध–"अच्छा, ठीक है, ले आएगा, तू इतना परेशान न हो।"

नवागत वृद्ध व्यक्ति का परिचय कराना ज़रूरी है। अन्यथा पाठकों की उलझन बढ़ सकती है। वृद्ध नवघन दास मालकिन के मामा जी हैं। इसलिए मदन के नाना जी हुए। दास जी ज़मींदार साहब के कर्मचारी हैं। फिर भी मदन सगे नाना की तरह उनका आदर करता है। नाना जी मालिक के बेटे के नाते 'तुम' या 'आप' न कहकर 'तू' और 'आ' संबोधित करते हैं। वैसा प्यार भी करते हैं। दासजी हाथ-पाँव धोकर थोड़ा लेटते हैं। अब आसन पर बैठे हुए हैं। कभी नहीं आते हैं। आज कैसे? मदन चिंतित है। उनके पास बैठकर पूछा–"नाना जी, कैसे आना हुआ? क्या चाहिए बताइए? हवेली में सब कुशल-मंगल तो है ना?"

वृद्ध–"हवेली में सब कुछ सकुशल है। तबीयत वगैरह भी ठीक-ठाक है। एक शुभ समाचार सुनाने के लिए दस कोस का रास्ता नाप कर आया हूँ। बताता हूँ, तू इतना अधीर क्यों हो रहा है?"

मदन को थोड़ी शर्म आई। लेकिन बात कुछ मन को झकझोर गई 'शुभ समाचार'। लेकिन जल्दी बता भी तो नहीं रहे हैं। क्या बात है? साफ़ समझ नहीं पाया।

इसलिए मन उलझता चला गया। उदास लग रहा है। उठकर पढ़ने जा बैठा। पढ़ाई में मन नहीं लगा। कभी यह किताब तो कभी वो पुस्तक उलट-पुलट रहा है।

नाना और नाती दोनों खाने बैठे हैं। नानाजी ने थोड़ा गला खँखारते हुए बात शुरू की–"समझे मदन, पिताजी ने मुझे भेजा है, तुझे गाँव ले जाने के लिए। तेरा ब्याह है।" मदन एकटक नानाजी के चेहरे को निहारते हुए उनकी बात सुन रहा था। 'ब्याह' सुनते ही उसका सिर चकरा गया। हाथ से भात का कौर कब गिर पड़ा, उन्हें पता न चला। नाना जी नीचे की ओर देखकर खाना खाते हुए बात कहे जा रहे हैं। उन्हें नहीं पता कि मदन सुन पा रहा है या नहीं। "मंगलपुर के ज़मींदार राम दास की बेटी अभी पंद्रह की हो रही है। ख़ूबसूरत, सुडौल चेहरा। चंपा फूल की तरह रंग। बहुत पढ़ी-लिखी भी है। गीतों के छंद कंठस्थ हैं। देख मदन, कई जगह ढूँढ़ने के बाद मैंने तेरे लिए यह रिश्ता तय किया है। लड़की को देखने के बाद ही नाना सच्चा है या झूठा, यह समझ सकेगा। मुझे बख़्शीश चाहिए। तेरी ओर से अलग से मुझे एक रेशमी धोती ब्रह्मपुरवाली चाहिए। तेरी क्या राय है मदन?" मदन को होश कहाँ कि नाना जी की बात का जवाब दे? लगता है वह सोच रहा है–'धोती या तुम्हारा सिर, बख़्शीश पाएगा!' रात भर मदन बिस्तर पर लेटे-लेटे सोच रहा है। आँखों में नींद नहीं। आजकल के अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे जवानों में से एकाध बेमौसम के पेठे निकल आते हैं। वे समझ बैठते हैं कि बाप बेवकूफ़ है, कुछ जानता नहीं। वे खुद एक-एक उपन्यासकार हैं, अपने से लड़की चुन कर शादी कर लेंगे। लड़की के रूप और गुण को लेकर बाप से बहस करने लगते हैं। मदन वैसा नहीं है। आज तक पिता की किसी बात का विरोध नहीं किया है। उसके मन में एक बात बैठ गई कि पिता जैसा शुभचिंतक इस संसार में दूसरा कोई नहीं हो सकता। दूसरे मतलबी लोगों से वह दूर रहता है। लेकिन शादी की बात सुन वह लजा गया। नानाजी को नज़र उठाकर देख न पा रहा है। पिताजी को क्या जवाब देगा? ख़ूब सोच-विचार के बाद एक बात उसे याद आई–'मुझे अच्छी तरह अंग्रेज़ी पढ़ने के लिए पिताजी ने कहा है।' मदन का मन खुश हो उठा। इस बात की गाँठ बाँधकर सो गया।

अगले दिन सुबह नाना-नाती दोनों खाना खाने बैठे। बूढ़े ने सोचा कि बचुआ ने कोई जवाब न दिया, क्या बात है? नाती का मन परखने के लिए

नाना ने कहा–"समझे नाती, ऐसी ख़ूबसूरत और पढ़ी-लिखी लड़की, ऐसा बढ़िया ख़ानदान नसीबवालों को मिलता है। पिता जी जितने पुण्यशील हैं, तू उतना ही पितृभक्त और धार्मिक बेटा है। तुझे यह कन्या नहीं मिली तो फिर किसे मिलेगी? तूने कभी भी पिता जी की किसी बात पर 'ना' नहीं किया है। इसलिए पूरे इलाक़े में तेरी प्रशंसा हो रही है। तू छोटा हुआ तो क्या, सभी शास्त्र जानता है, समझता भी है। शास्त्र में लिखा गया है–पिता जिस पुत्र पर संतुष्ट हो, वह सभी देवताओं से वरदान प्राप्त करता है। और एक बात तू समझ ले, ऐसी लड़की एक बार हाथ से निकल गई तो दोबारा कभी नहीं मिलेगी। तभी तो पिताजी बेचैन हो रहे हैं। उन्होंने हाँ कर दी है। अगली मकर राशि के सत्रहवें दिन शुक्ल पक्ष की दसवीं तिथि को मुहूर्त है। उसके बाद कोई लग्न नहीं है। फिर तेरा जोड़ा साल आएगा, एक साल के लिए ब्याह रुका रहेगा। जा, स्कूल के मास्टर साहब को समझा-बुझाकर अपनी पोथी-पत्रा ले आ। कल सुबह जाना है। अब वक़्त न रह गया है। बस दो ही महीने बचे हुए हैं।" मदन बाबू ने सिर झुकाकर धीरे-से कहा–"पिता जी ने कहा है कि अच्छी तरह अंग्रेज़ी पढ़ लूँ। बी.ए. करने तक मेरी भी पढ़ने का मन है। शादी हो जाए तो मेरी पढ़ाई नहीं हो सकेगी।"

नाना–"हाँ, बिलकुल, घर में इस पर भी चर्चा हुई है। पिता जी ने कहा है अब तुझे पढ़ने की कोई ज़रूरत नहीं। अब बी.ए., फी.ए., पास वास, क्या मतलब? तू सरकारी नौकर थोड़े बनेगा?"

मदन बाबू का बहाना ख़त्म हो गया। गहरी साँस छोड़कर चुप बैठे। नानाजी की बात सुनकर उनकी हालत जोंक के मुँह में नून देने जैसी हुई।

ज़मींदार की हवेली में चार भवन हैं। शादी के दिन से छोटे मालिक का भवन अलग हो गया। बीचवाले दरवाज़े को बंद कर देने से दोनों भवन पूरी तरह अलग हो जाते हैं। लगता है मदन बाबू की शादी कल ही हुई, असल में चार महीने गुज़र चुके हैं। दिन-रात भवन के अंदर आने-जाने की इच्छा मदनबाबू की होती है, मगर रात के प्रथम प्रहर के पहले अंतःपुर में जा नहीं सकते हैं। बाहर कचहरी अलग है। अपने बैठकख़ाने में पढ़ते रहते हैं। वे बड़े शर्मीले हैं। दिन में हवेली के अंदर जाते समय दासियाँ भले हँसें या नहीं, उन्हें लगता है कि वे हँस रही हैं। दूसरे ज़मींदारों की तरह इनकी हवेली में भी ढेर सारी गँवार और निकम्मी दासियाँ भरी हुई हैं। उनका और काम ही क्या है?

यह तो हुई एक बात। बड़ी बात यह कि पदी दुल्हन के आस-पास जोंक की तरह चिपकी रहती है। पदी दासी ज़रूर है लेकिन उसके कई गुण हैं। गाँव में उसका बड़ा नाम है। गाँव में किसी भी रईस के बेटी के ब्याह के दस-पंद्रह दिन पहले माँ-मालकिन पदी को उस लड़की के पास भेज देती हैं। ससुराल के लिए विदाई के वक़्त लड़की किससे लिपट कर कौन-सी बातें कहकर कैसे रोएगी, ससुराल में कितना घूँघट निकाल कर किस तरह सिर झुका कर चलेगी, चु-चु की आवाज़ के साथ इशारे से कैसे बात करेगी, इन सब सद्गुणों को सिखाने में पदी से बढ़कर कोई नहीं है। अति दुख की बात है कि शिक्षा के ख़ास तौर पर स्त्री-शिक्षा के व्यापक प्रसार के चलते पदी जैसी गुणवती स्त्रियों का दाना-पानी लगभग ठप्प है। विवाह के बाद विदाई में मंगलपुर तालुका के ज़मींदार की पत्नी ने आँचल से आँसू पोंछते हुए कहा था–"सुन पदी, मनी तेरे ज़िम्मे रही। सजग रहना। बेटी के रंग-ढंग, लाज-शर्म की बातों में कोई खोट न रह जाए, हमारे कुल की बदनामी न हो।" पदी ने बड़े गर्व के साथ मुस्कराते हुए कहा था–"जी, मालकिन! यह पदी से कहने की ज़रूरत नहीं।"

कन्या का नाम मोहिनी है। रूप व गुण में भी मोहिनी। मदनबाबू को बड़ी पसंद है। बड़ी इच्छा है कि अच्छी तरह पढ़ाएँ, दोनों साथ बैठकर हमेशा बातचीत करें, शाम को बाग़ में घूमें। लेकिन, चारा क्या है? पदी तो परछाई की भाँति लगी रहती है। न जाने क्या मंत्र फूँकती है कि वह मूर्ख बहू न आँखें खोलती है और न बातचीत करती है। एक दिन मदनबाबू अपने शयन कक्ष में बैठे कुछ सोच रहे थे। अचानक प्रसन्न हो कर ज़ोर से बोले, "अच्छा तरीक़ा सूझा है, ख़ूब बढ़िया, ख़ूब बढ़िया।"

मदन बाबू हमेशा रात के लगभग पहले प्रहर में अपने भवन में आते थे। अब कई बार देर हो जाती है। कभी-कभार डेढ़ प्रहर बाद भी पहुँचते हैं। एक दिन पदी ने पूछा, "क्यों री शुक्री! छोटे मालिक भवन में कभी-कभी इतनी देर से क्यों आते हैं? बड़ी हवेली में अनेक दासियाँ हैं। मगर छोटे मालकिन ने कह दिया है कि कोई भी दासी छोटे मालिक के भवन में नहीं जाएगी। सिर्फ़ शुक्री दासी को मुकर्रर किया गया है। हमेशा बहू के पास रहती है। देखा गया कि पढ़ाईवाले कमरे में छोटे मालिक और शुक्री एकांत में बैठकर कई बार कुछ फुसफुसाते हैं। पदी के पूछने पर शुक्री ने बताया, "पदी दीदी, तूने सुना नहीं है, छोटे मालिक गारुड़ी मंत्र फूँकने जाया करते हैं।"

पदी–"गारुड़ी मंत्र क्या है?"

शुक्री–"बात यह कि इस इलाक़े में गर्मियों में ढेर सारे चित्तीदार नाग

निकल कर लोगों को डँस लेते हैं। छोटे मालिक को गारुड़ी मंत्र आता है। फूँक मारते ही विष ग़ायब। सैकड़ों मरीज ठीक हो चुके हैं। अब क्या बताऊँ पदी दीदी, यहाँ पास ही के गाँव मिच्छूपुर में कई बहुएँ तुरंत मर गईं। कितनी सुंदर थीं वे। अहा! अहा!"

पदी–"शुक्री, उन्होंने छोटे मालिक के पास ख़बर क्यों न भिजवाई?"

शुक्री–"हाँ, छोटे मालिक पधारे थे। ख़ूब फूँकें लगाईं। लेकिन, क्या करें, बहुएँ अपनी ग़लती की वजह से मर गईं। बात यह है कि मालिक पहले मंत्रित जल से उस मरीज का मुँह धो डालते हैं और जूड़ा खोल देते हैं। नियमानुसार गारुड़ी मंत्र पाठ करते वक़्त मरीज को अपने चेहरे से कपड़ा हटाकर मालिक के चेहरे को एकटक निहारना चाहिए। बहुओं ने मंत्रपाठ के दौरान जैसे ही मुँह ढाँप लिया, वे चटपट लुढ़क गईं।"

पदी–"अहा! पास में कोई बुजुर्ग औरत नहीं थी? बहू ने जब चेहरा ढँक लिया, उस वक़्त उसका हाथ क्यों न पकड़ लिया? ज़िंदगी बड़ी है कि शर्म? अपने किए को इलाज़ क्या? हाँ शुक्री, ऐसे मरीजों के सिर के केश खोल दिए जाते हैं। मुझे पता है।"

शुक्री–"पदी दीदी, तू तो रोज़ शाम को दिशा फ़रागत के लिए बहू मालकिन को बाग़ की ओर ले जाती है। हाथ में कोई आलोक लिए जाती तो ठीक रहता।"

पदी–"क्या बोली शुक्री, क्या कहा तूने? इतने बड़े घर की दासी होकर कैसी बात मुँह से निकाल रही है? इस इलाक़े में, मुल्क में बदनामी फैल जाएगी कि एक बाज़ारू औरत की तरह मशाल लिए पिछवाड़े की ओर जाती है। माँ मालकिन को इसका पता चल गया तो मेरी चोटी और पीठ की ख़ैर नहीं। हमारी हवेली में तो दर्जनों दासियाँ हैं, माँ मालकिन ने चुनकर मुझे ही साथ में क्यों भेजा? पदी जब साथ में है तो हमारी राजकुमारी को किस बात का डर है?"

शाम बीत चुकी है। चारों ओर अँधेरा है। बहू घूँघट काढ़े बाग़ से धीरे-धीरे लौट रही है। पदी बाँह पकड़कर ला रही है। बाग़ के फाटक को पार कर जैसे घर में घुसी, दरवाज़े की बग़ल से डेढ़ हाथ लंबा साँप निकल कर बहू व पदी के पैरों के नज़दीक से लहराते हुए निकल गया। पदी ने बहू को धकेलकर 'बाप रे' कहते हुए घर में घुसकर दरवाज़ा बंद कर दिया। बहू बेहाल होकर वहीं गिर पड़ी, होश नहीं है। शुक्री थोड़ी दूरी पर थी। भागती हुई आई। बहू को उठाकर शयनकक्ष में ले गई। चेहरे पर पानी छिड़कने के बाद होश आया।

शुक्री ने कहा–"आप न घबराएँ। छोटे मालिक को बुला लाती हूँ। फौरन ठीक कर देंगे।"

छोटे मालिक को देखकर बहू को ढाँढस मिला। खजूर की पत्तियों की तरह काँप रही थी। अब घूँघट काढ़कर चुपचाप बैठी है।

छोटे मालिक की आवाज़ सुनकर पदी भी आ पहुँची। लेकिन, अब भी उसका शरीर हल्का-हल्का काँप रहा है। जुबान बंद है। दो आसन बिछाए गए। बहू और छोटे मालिक आमने-सामने बैठे। छोटे मालिक ने पूछा तो पदी ने बताया–"हाँ, मैंने साँप को देखा है। तीन-चार हाथ का था। पूरे बदन पर काली-पीली धारियाँ थीं। मैंने जैसे ही साँप को देखा, उसे मारने के लिए बहू को बैठा कर डंडा खोजने भागी।" दुष्ट शुक्री चेहरे पर कपड़ा डालकर थोड़ी देर मुस्कराती रही।

साँप ने काटा है कि नहीं बहू के पैर खींचकर छोटे मालिक परखने लगे। बहू पैर को समेट लेती थी। छोटे मालिक ने कहा–"ना, ना, ऐसा करने से मंत्र प्रभावी न होगा।" देखा गया कि बहू की बाईं एड़ी में एक घाव है। छोटे मालिक ने कहा–"हाँ, हाँ, सच है पदी की बात सच है। यह चित्तीदार नाग है। देख नहीं रहे हो कि एक दाँत का निशान है। इस क़िस्म के साँप का एक ही दाँत होता है। कोई चिंता नहीं। दो बार मंत्र फूँकने से सारा ज़हर उतर जाएगा। अरी शुक्री जा, तालाब से बाएँ हाथ से एक भगौना पानी लेते आ। बाईं आँख बंद करके जाना-साँप का एक ही दाँत है न!"

छोटे मालिक–"हाँ, अब मुँह से कपड़ा हटाओ।" बहू घूँघट को और अधिक खींचने लगी। पदी ने कहा, "अरी माँ, घूँघट हटाओ, घूँघट हटाओ।" उसने घूँघट हटा दिया। बहू कुलबुलाने लगी। पदी और शुक्री दोनों ने बहू की दोनों भुजाएँ कसकर पकड़ीं छोटे मालिक ने बहू का जूड़ा खोल दिया। यहाँ भी बहू ख़ूब कुलबुलाने लगी। बहू अब क्या करती? दो औरतें कसकर पकड़े हुई हैं। पदी पीठ पर हाथ फेरते हुए हिम्मत बँधा रही है। छोटे मालिक ने पानी के भगौने को मंत्रित किया। बहू के मुँह और एड़ी के घाव को तीन बार धोया। फिर बोले–"अब मैं गारुड़ी मंत्र कहूँगा, मेरे मुँह को एकटक देखते रहना।" इधर प्राण बचाने की समस्या उधर वो चिल्ला रही हैं–"देखो, देखो।" बड़ी मुश्किल से बहू तनिक सिर झुकाकर छोटे मालिक को एकटक देखने लगी तो बाबू ने गारुड़ी मंत्र का पाठ किया–

"ॐ कालीय कालिंदी दह में,
कान्हा गए वहाँ कमल चुनने

कालीय ने डँस लिया जहाँ
लुढ़क पड़े कान्हा वहाँ।
आया गरुड़ आकाश से
ज़हर सोख लिया मुँह से।"

आ-फू... आ-फू... आ-फू...

इस तरह सात बार मंत्र पढ़ा गया। फिर मरीज़ के गले में मंत्रित धागा बाँध दिया। बाबू कह गए, "चित्तीदार नाग का ज़हर पाँच दिन तक रहता है। पाँचों दिन सुबह-शाम मंत्र फूँका जाएगा।

बाबू ने देखा कि मरीज के शरीर से असली ज़हर ख़ूब उतर चुका है। मंत्र फूँकते समय बहू ख़ूब ज़ोर से होंठ दबाए रहती है। हँसी को रोक नहीं पाती है। पाँचवें दिन सुबह बाबू ने कहा, "बहू के गले में जो धागा बँधा हुआ है, शनिवार के दिन तड़के कोई विधवा बिना मुँह धोये ही बाएँ हाथ से इस धागे को तोड़कर सीधे चली जाएगी। तीन महीने, तीन पक्ष, और तीन दिन तक भेंट नहीं होनी चाहिए। पदी ने तुरंत कहा, "और किसी से यह नहीं हो सकता, मैं धागा तोड़कर ले जाऊँगी।" बाबूजी यही चाहते थे। बड़े खुश हुए। पदी भी बहुत खुश। अच्छा हुआ कि गाँव चली जाएगी साँपों की इस बस्ती में कौन रहेगा?"

एक-दो महीने बीत चुके हैं। पति-पत्नी दोनों भवन में बैठकर पढ़ाई करते हैं। हवेली के पीछेवाले बाग़ में एकांत है। फूलों से सजे बाग़ में दोनों शाम को टहलते हैं। मोहिनी बहुत समझदार है। ख़ूब पढ़ चुकी है।

एक दिन मोहिनी ने हँसते हुए कहा, "क्यों जी, आप बड़े नटखट हैं न?" एक काग़ज़ और डंठल पलंग के नीचे से निकाल कर ले आई। क़रीब तीन अंगुल चौड़ा, डेढ़ हाथ लंबा एक काग़ज़-कालिख और हल्दी से चित्तियाँ बनी हुई हैं। एक सिरे में चूना का एक पत्थर बँधा हुआ है। उस पत्थर को पकड़े फेंका जाए तो वह काग़ज़ लहराते हुए साँप की तरह निकल जाता है। फिर बाँस का एक नुकीला टुकड़ा उसके सामने बँधा हुआ है। मोहिनी ने हँसते हुए कहा, "तुम इतने शरारती हो कि दरवाज़े की बग़ल में काग़ज़ का टुकड़ा फेंक दिया, जिससे इतना बड़ा काण्ड हो गया।"

मदनबाबू ने कहा, "शुक्री, इन्हें क्यों बता दिया?" उस साँप को क्यों दिखाया?" शुक्री मुस्कराते हुए भाग गई।

परिशिष्ट

कहानियों का पत्रिकाओं में प्रकाशन

1. *रेवती उत्कल साहित्य,* द्वितीय वर्ष, दसवीं संख्या, कार्तिक 1306, अक्टूबर 1898.
2. *कुल कुंतला उत्कल साहित्य,* तृतीय वर्ष, दसवीं संख्या, कार्तिक 1307, अक्टूबर 1899.
3. *मौना-मौनी मुकुर,* द्वितीय वर्ष, द्वितीय संख्या, ज्येष्ठ 1314, जून 1907.
4. *बालेश्वरी राहजनी मुकुर,* द्वितीय वर्ष, चतुर्थ संख्या, श्रावण 1314, जुलाई 1907.
5. *बालेश्वरी देसी नमक मुकुर,* द्वितीय वर्ष, षष्ठ संख्या, आश्विन 1315, सितंबर 1907.
6. *पुनर्मूषिकोभव मुकुर,* चतुर्थ वर्ष, प्रथम-द्वितीय संख्या, वैशाख- ज्येष्ठ 1316, अप्रैल-मई 1909.
7. *डाकमुंशी मुकुर,* सप्तम वर्ष, षष्ठ संख्या, आश्विन 1320, सितंबर 1912.
8. *धूलिया बाबा उत्कल साहित्य,* षोडश वर्ष, एकादश संख्या, फागुन 1320, फरवरी 1913.
9. *कमला प्रसाद खोराप उत्कल साहित्य,* सप्तदश वर्ष, द्वितीय संख्या, ज्येष्ठ 1320, मई 1913.
10. *प्यारी बहू उत्कल साहित्य,* सप्तदश वर्ष, तृतीय संख्या, आषाढ़ 1320, जून 1913.
11. *राँड़ का बेटा अनंता मुकुर,* अष्टम वर्ष, चतुर्थ संख्या, श्रावण 1320, जुलाई 1913.
12. *कालिका प्रसाद गोराप उत्कल साहित्य,* सप्तदश वर्ष, पंचम संख्या, भाद्रव 1321, अगस्त 1913.

13. *पेटेंट मेडिसिन* उत्कल साहित्य, सप्तदश वर्ष, षष्ठ संख्या, आश्विन 1321, सितंबर 1913.
14. *वीरेई विशाल* उत्कल साहित्य, सप्तदश वर्ष, सप्तम संख्या, कार्तिक 1321, अक्टूबर 1913
15. *सभ्य ज़मींदार* उत्कल साहित्य, सप्तदश वर्ष, द्वादश संख्या, चैत्र 1321, मार्च 1914.
16. *बगुला-बगुली* उत्कल साहित्य, अष्टादश वर्ष, प्रथम संख्या, वैशाख 1321, अप्रैल 1914.
17. *नाना और नानी की कथा* उत्कल साहित्य, ऊनविंश वर्ष, प्रथम संख्या, वैशाख 1322, अप्रैल 1915.
18. *पढ़ी-लिखी बहू* मुकुर, दशम वर्ष, तृतीय संख्या, आषाढ़ 1322, जून 1915.
19. *अधर्म वित्त* उत्कल साहित्य, ऊनविंश वर्ष, पंचम संख्या, भाद्रव 1323, अगस्त, 1915.
20. *माधो महांति का कन्यासोना* उत्कल साहित्य, ऊनविंश वर्ष, सप्तम संख्या, कार्तिक 1323, अक्टूबर 1915.
21. *गारुड़ी मंत्र* उत्कल साहित्य, विंशति वर्ष, अष्टम संख्या, मार्गशीष 1324, नवंबर 1916.

□□□